किशोर ग्रन्थमाला २३

काली-रहस्यम्

'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्योपेतम्

लेखक

आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री

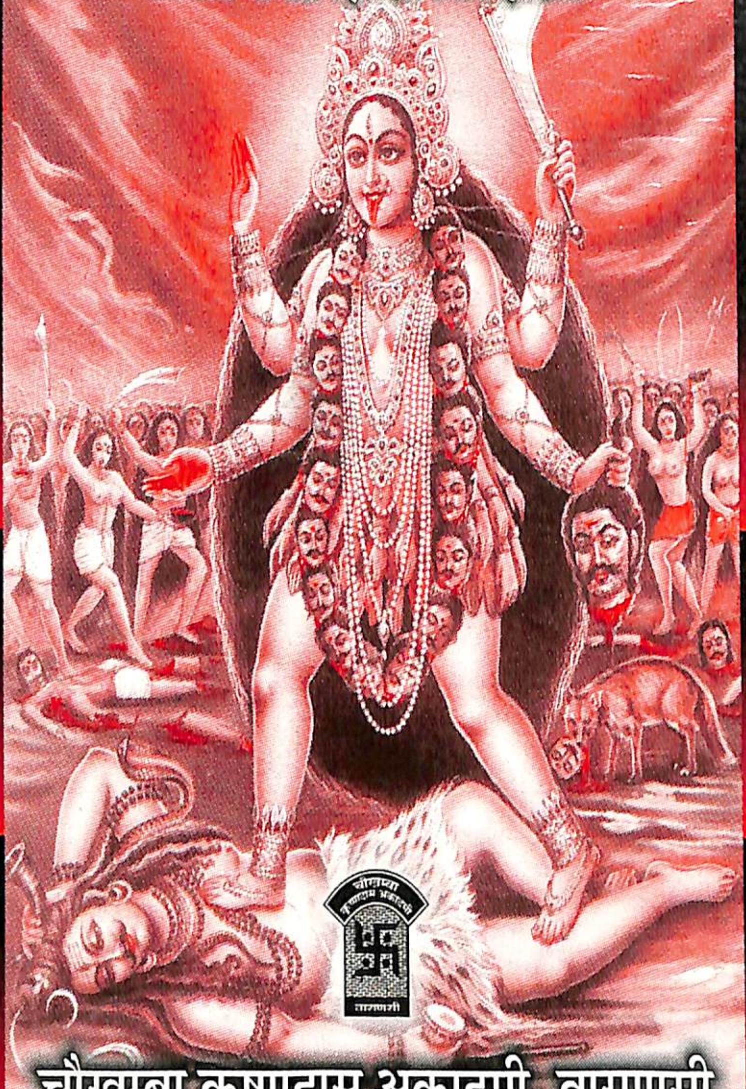

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

Tantra

कि.प्र. १३

काली-रहस्यम्

आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री

किशोर ग्रन्थमाला
२३
****

काली-रहस्यम्

'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्योपेतम्

(कालीपञ्चाङ्ग-कालीतन्त्र-काली-उपासना-कालीपूजा-पद्धतिरूपात्मकम्)

लेखकः सम्पादकश्च

व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-तन्त्ररत्नाकर—

आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री

(प्रादेशिक सरकार द्वारा पुरस्कृत)

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : तृतीय, वि० सम्वत् २०६२, सन् २००५
मूल्य : रू० ७५.००

© **चौखम्बा कृष्णदास अकादमी**
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० ११२८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : (आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice@satyam.net.in
web-site : www.chowkhambaseries.com

VEDA BHARATI LIBRARY

शुभाशंसा

(अनन्तःश्रीविभूषित ऊर्ध्वाम्नाय, श्रीकाशी सुमेरुपीठाधीश्वर, जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी श्रीशङ्करानन्द सरस्वतीजी महाराज)

एक समय की बात है कि भूतभावन भगवान् शंकर भगवती पराम्बा से अप्रसन्न होकर कहीं चलने को तत्पर हुए। भगवती ने कहा—'आप रुष्ट होकर कहाँ जा रहे हैं? भगवान् शंकर ने उत्तर दिया—'हमारी जहाँ इच्छा होगी वहाँ में जाऊँगा।'

भगवती ने मुस्कराते हुए निवेदन किया–'हमारे पास से अन्यत्र जाने का विचार आप त्याग दीजिए।' परन्तु भगवान् सदाशिव ने भगवती के शब्दों पर ध्यान न देते हुए अन्यत्र जाने के विचार से प्रस्थान कर ही दिया। कुछ दूर जाने पर उन्होंने देखा कि मार्गविरुद्ध करके भगवती श्री महाकाली सामने खड़ी हैं और भगवान् शंकर से बोलीं—'इस दिशा में आप नहीं जा सकते।' पुनः भगवान् शंकर उस ओर से प्रत्यावर्तित होकर विभिन्न दिशाओं की ओर क्रमशः प्रस्थान किए। परन्तु जिस-जिस दिशा की ओर शंकर भगवान् गये उन-उन दिशाओं में भगवती का कोई-न-कोई स्वरूप मार्ग रोके हुए उपस्थित रहा।

इस प्रकार भगवती जगदम्बा के दश दिशाओं में दश स्वरूप प्रकट हुए। जो आगम ग्रन्थों में दश महाविद्या के नाम से विख्यात हुए।

'काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
बगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दश महाविद्याः सिद्धिविद्याः प्रकीर्तिताः॥

इन दश महाविद्याओं में महामाया भगवती श्री काली आद्याशक्ति हैं और इनका स्थान सर्वोच्च है। अब तक हिन्दी टीकासहित काली-साहित्य का इतना बड़ा विपुल संग्रह अनुपलब्ध था। जिसको प्रस्तुत पुस्तक द्वारा **आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्रजी** ने पूर्ण कर काली-साधकों का अत्यधिक उपकार किया है।

प्रस्तुत 'काली-रहस्य' नामक ग्रन्थ आद्या महाविद्या भगवती काली के उपासनादि से सम्बन्धित विषयों से परिपूर्ण है। यह ग्रन्थ आद्या विद्या के साधकों के लिए परमोपकारक सिद्ध होगा, इसमें सन्देह नहीं।

प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक सुप्रसिद्ध विद्वान् **आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्रजी** ने विभिन्न तन्त्रागम ग्रन्थों का अध्ययन तथा मननादि कर परम्परा सम्मत विचार-पद्धति के आधार पर लिखा है। आप निगमागम से सम्बन्धित प्रायः शताधिक ग्रन्थों का प्रणयन-सम्पादन एवं अनुवाद कर चिरकाल से आस्तिक जगत् का महान् उपकार करते आ रहे हैं।

हम भगवान् विश्वनाथ एवं माता अन्नपूर्णा से कामना करते हैं कि **श्री मिश्रजी** का श्रम एवं लगन के अनुसार उन्हें सुफल प्रदान करें और उन्हें निरामय दीर्घजीवी बनावें। भारत की जनता से अनुरोध है कि इनकी पुस्तकों का अधिकाधिक संग्रह करे और साधन-मार्ग की ओर अग्रसर हो भगवती की कृपा द्वारा भारत के भावी संकट से त्राण पाने हेतु राष्ट्र की सुरक्षा में तत्पर हों।

धर्मसंघ, शिक्षा-मण्डल **शङ्करानन्द सरस्वती**
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी
कार्तिक शुक्ल ९, सं० २०४० **(काशीपीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य)**
(१४ नवम्बर, १९८३)

प्राक्कथन

१. काली, २. तारा, ३. षोडशी (त्रिपुर-सुन्दरी), ४. भुवनेश्वरी, ५. भैरवी, ६. छिन्नमस्ता, ७. धूमावती, ८. बगलामुखी, ९. मातंगी एवं १०. कमलात्मिका (कमला)—इन दश महाविद्याओं में पराम्बा जगदम्बा काली का सर्व-प्रथम नाम है। अतः ये आदि महाविद्या हैं और सद्यः सिद्धि को देने वाली हैं।

'काली तारा महाविद्या षोडसी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ॥ १ ॥
बगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दश महाविद्याः सिद्धिविद्याः प्रकीर्तिताः ॥ २ ॥

महामाया भगवती काली आद्या-शक्ति हैं। सृष्टि-स्थिति तथा प्रलयकर्त्री एवं त्रिभुवन–स्वामिनी तो हैं ही, शाक्तमतावलम्बियों की आप सर्वाभीष्ट फलप्रदात्री इष्ट देवी भी हैं। आद्यन्त–रहित ब्रह्मस्वरूपिणी होते हुए भी आपमें अनन्तत्व, सूक्ष्मत्व एवं विश्वात्मकत्व—ये गुण विशेष रूप से परिलक्षित होते हैं।

रूपाकार-रहित होने पर भी साधकों की साधना में सुविधा-प्राप्ति के लिए शास्त्रों में भगवती काली के स्वरूप, गुण एवं वाहनादि का उल्लेख किया गया है। यद्यपि काली के अनेक उपभेद हैं, परन्तु प्रमुख रूप से आठ उपभेद ये हैं—

१. चिन्तामणि काली, २. स्पर्शमणि काली, ३. सन्ततिप्रदा काली, ४. सिद्धिदा काली, ५. दक्षिण काली, ६. कामकला काली, ७. हंसकाली एवं ८. गुह्यकाली। इनमें दक्षिण काली प्रधान हैं। इन्हीं को 'दक्षिणा' 'दक्षिण काली' अथवा 'दक्षिणा कालिका' भी कहते हैं। निर्वाणतन्त्र में लिखा है कि, दक्षिण दिशा का अधिपति सूर्य-पुत्र यमराज दक्षिणकाली का नाम सुनते ही भयभीत हो पलायन-परायण हो जाता है। इसीलिए भगवती काली 'दक्षिण काली' के नाम से विख्यात हुईं।

"दक्षिणस्यां दिशि स्थाने संस्थितश्च रवेः सुतः।
कालो नाम्ना पलायेत भीतियुक्तः समन्ततः।
अतः सा दक्षिणा काली त्रिषु लोकेषु गीयते॥"

—महानिर्माण तन्त्र

काली-ध्यान के विविध क्रम बताये गये हैं। जैसे--

१. कादि—जिन मन्त्रों का आद्यक्षर ककार है और जो 'क्रीं' से आरम्भ होता हो, उन्हें कादि कहते हैं।

२. हादि--जिन मन्त्रों में प्रथम वर्ण 'हकार' है एवं जो 'ह्रीं' से शुरु होता है, उन्हें हादिक्रम कहते हैं।

३. क्रोधादि--जिन मन्त्रों का पहला अक्षर क्रोध बीज 'हूं' से आरम्भ हो, उन्हें क्रोधादि कहते हैं।

४. वागादि—जिन मन्त्रों का प्रथमाक्षर वाग्‌·बीज 'श्रीं' से आरम्भ होता हो, उन्हें वागादि कहते हैं।

५. नादि—जिन मन्त्रों के आदि में 'नमः' शब्द हो, उन्हें 'नादि' कहते हैं।

६. दादि – जिन मन्त्रों के प्रथम अक्षर 'द' से प्रारम्भ हो, जैसे—'दक्षिणे कालिके'। उन्हें 'दादि' क्रम वाला कहते हैं।

७. प्रणवादि– जिन मन्त्रों में पहले प्रणव अथवा 'ॐ' बीज हो, उन्हें 'प्रणवादि' नाम से सम्बोधित करते हैं।

समस्त तन्त्रों का सिद्धान्त है कि यह श्री कालिका देवी महामहाब्रह्म-विद्यारूपिणी विद्या हैं, जिनके शरणापन्न होने से नीचातिनीच पुरुष भी निर्वाण मुक्ति पाने में पूर्ण समर्थ हो जाता है। समस्त आगमशास्त्रों का भी यही कथन है कि, भगवती श्री काली के समान न कोई विद्या, न कोई फल, न कोई ज्ञान एवं न कोई तप है। और कलियुग में तो इनकी उपासना सर्वाधिक सिद्धि देने वाली कही गयी है। अतः सद्यः सर्व-सिद्धि प्रदायिनी, सर्वगुणसमन्विता एवं समस्त देवताओं से पूजित संसार में कोई सारभूत देवता हैं, तो भगवती श्री काली।

अब तक काली-साहित्य का एकत्र संग्रह कोई प्राप्त नहीं था, जिसमें काली-उपासना सम्बन्धी सभी विषय दिये गये हों एवं वह हिन्दी टीका के साथ हो, जिससे सर्व-साधारण साधक वर्ग भी लाभान्वित हो सके। यद्यपि शाक्त-प्रमोद आदि ग्रन्थ हैं, परन्तु उनकी हिन्दी टीका एवं आधुनिक शैली में संशोधन-सम्पादन न होने से वे सर्व-साधारण के लिए सुगम नहीं। इन समस्त कठिनाइयों को ध्यान में रखकर ही मैंने प्रस्तुत पुस्तक तैयार की है।

इसमें काली-ध्यान, काली-यन्त्रोद्धार, काली-मन्त्रोद्धार, काली-मन्त्र, संक्षिप्त काली पूजा-विधान, काली-पटल, काली-कवच; कर्पूरस्तोत्र, काली-हृदय, काली-शतनाम, सहस्रनाम, सहस्रनामावली, कालीस्तव, कालिकाष्टक एवं काली-सपर्या-पद्धति से सम्बन्धित सभी विषय दिये गये हैं। अन्त में, कालिकोपनिषद्, देव्यपराध-क्षमापन स्तोत्र तथा आरती आदि भी दिये गये हैं।

हिन्दी टीका सहित तथा आधुनिक शैली में संशोधित-सम्पादित काली-उपासना सम्बन्धी इतने विपुल विषय एकत्र अबतक की प्रायः प्रकाशित अन्य किसी भी पुस्तक में उपलब्ध नहीं–यही प्रस्तुत पुस्तक की विशेषता है। मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि काली-उपासना प्रेमी पाठकों के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी सिद्ध होगी।

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु **शङ्कराचार्य महाराज** का मैं अत्यधिक कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने अपने अत्यन्त व्यस्त-कार्य क्षणों में भी प्रस्तुत पुस्तक में अपनी शुभाशंसा प्रदान कर ग्रन्थ को गौरवान्वित किया है। साथ ही **डॉ० सत्यव्रत शर्मा** (अध्यक्ष–आधुनिक भाषा एवं भाषा विज्ञान विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी) का भी मैं विशेष आभारी हूँ, जिन्होंने इसकी प्रस्तावना लिखकर ग्रन्थ को अलंकृत किया है।

अपने परमस्नेही बन्धुवर **पण्डित श्री हीरामणि जी मिश्र** व्याकरणाचार्य को भी नहीं भूल सकता, जिन्होंने समय-समय पर आवश्यक सुझाव एवं सहयोग प्रदान किया है।

इसका संशोधन सम्पादन एवं अनुवाद कार्य भी मैंने बड़ी सावधानी के साथ किया है फिर भी तन्त्र शास्त्र का विषय बड़ा गहन है। इसका ज्ञान गुरुपरम्परा से ही जानने योग्य है। इसीलिए तन्त्र शास्त्र के टीकाकारों ने सर्वत्र ही 'एतद् गुरुमुखादवगन्तव्य:' लिखा है। अतः इसमें कहीं कदापि स्खलन हो जाना स्वाभाविक है; एतदर्थ क्षमा-प्रार्थी हूँ। और कृपालु पाठकों से नम्र निवेदन है कि इसमें जहाँ-कहीं भी त्रुटि रह गयी हो, तो उसे सूचित करें, जिसे मैं अग्रिम संस्करण में उसका सुधार करा सकूँ।

सुन्दर छपाई-सफाई एवं विशुद्ध मुद्रण के लिए **'कृष्णदास अकादमी वाराणसी'** के अधिकारी वर्ग विशेष धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने प्रस्तुत प्रकाशन द्वारा काली-उपासना प्रेमी साधकों का महान् उपकार किया है।

शरत्पूर्णिमा **—शिवदत्त मिश्र**

२१ अक्टूबर, १९८३ सी. के. ५/२६ ए., भिखारीदास लेन,

(ठठेरी बाजार), वाराणसी—१

प्रस्तावना

डा० सत्यव्रत शर्मा

अध्यक्ष, आधुनिक भाषा एवं भाषा-विज्ञान विभाग:

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।
अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरञ्च्यादिभिरपि
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ॥[1]

—सौन्दर्य-लहरी

श्री काली आदि शक्ति हैं। वे ही इस ब्रह्माण्ड-गोलक को उत्पन्न करने वाली, इसका पालन करने वाली और स्वाभाविक रूप से इसका संहार करने वाली भी हैं। दर्शन ग्रन्थों में यह कहा गया है कि, महाप्रलय के अन्त में कोई एक ही तत्त्व अवशिष्ट रहता है। शक्ति के उपासकों ने उस अवशिष्ट तत्त्व को व्यक्त किया है। वह शक्ति ही प्रधान बीज है, जिससे हरिहरादि अन्य देवों की उत्पत्ति होती है। सम्भवतः 'मातः' पद इसी बात का संकेत करता है। रुद्रयामल तन्त्र में कहा गया है कि महाप्रलय के समय विन्दुव्यापक रूप से अपने स्वरूप को धारण करने वाली भगवती पराम्बा का विग्रह एकीभूत शिवशक्तिमय था। भगवती ने उसी समय अपने

---

१. यदि शिव शक्ति से युक्त होकर ही सृष्टि कर्म में शक्तिमान होता है और यदि ऐसा न हो, तो वह ईश्वर स्पन्दित होने में भी समर्थ नहीं था, इसलिए तुझ हरिहर और ब्रह्मा आदि की भी आराध्या देवी को प्रणाम करने अथवा स्तुति करने की सामर्थ्य किसी भी पुण्यहीन मनुष्य में कैसे हो सकती है।

विम्ब की ओर दृष्टिनिक्षेप किया, जिसके फलस्वरूप सृष्टि-निर्माण के लिये उनका वह विम्ब मायारूप में बदल गया। और शिथ पति के रूप में परिणत हो गये।[1]

तन्त्र ग्रन्थों में श्री काली का वर्ण मेघादिविरहित स्वच्छ आकाश के समान कहा गया है। कृष्ण वर्ण के भीतर ही श्वेत, पीत आदि इन सारे वर्णों का लय हो जाता है। श्री काली में भी उसी प्रकार सारे पंचमहाभूत विलीन हो जाते हैं। इसीलिए योगारूढ़ साधकों के हित का साधन करने वाली निर्गुण निराकार कालशक्ति (श्री काली) के वर्ण को कृष्ण माना गया है।[2] भगवती काली चिदाकाशस्वरूपा एवं घनीभूत शुद्ध सत्त्व गुणस्वरूपिणी हैं। इनके नीलवर्ण का यही कारण है। इस प्रसंग में यह भी ध्यातव्य है कि काली की श्यामता से श्याम जातीय सुन्दरी की भी व्यंजना होती है।

---

१. 'महाप्रलयमासाद्य कोटिब्रह्माण्डनायिका।
शिवशक्तिमयं देहम् एकीकृत्य सदा स्थिता॥
विन्दुव्यापकरूपेण स्वरूपं बिभ्रती परम्।
एतस्मिन्नेव काले तु स्वविम्बं पश्यति शिवा॥
तद्विम्बं तु भवेन्माया तत्र मानसिकं शिवम्।
सृष्टेरुत्पादनार्थे तु भर्तृरूपमकल्पयत्॥'

(रुद्रयामलतन्त्र)

२. 'श्वेतपीतादिको वर्णो यथा कृष्णे निलीयते।
प्रविशन्ति तथा काल्यां सर्वभूतानि शैलजे॥
अतस्तस्याः कालशक्तेर्निर्गुणाया निराकृतेः।
हितायाः प्राप्तयोगानां वर्णः कृष्णो निरूपितः॥'

(महानिर्वाणतन्त्र)

श्री काली का स्वरूप अचिन्त्य एवं अनुभवैकगम्य है। फलतः उनके विषय में कुछ लिख सकना सहज नहीं है। ऐसी स्थिति में जगदम्बा महाकाली की उपासना से सम्बन्धित 'काली-रहस्यम्' नामक इस पुस्तक को देखकर उत्फुल्ल होना स्वाभाविक है। इस उत्फुल्लता के दूसरे कारण हैं, इस ग्रन्थ को इस स्वरूप में उपस्थित करने वाले **आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री**, जिनके द्वारा समय-समय पर धार्मिक समाज के सम्मुख प्रस्तुत की गयी विभिन्न पुस्तकों ने पाठकों के हृदय पर अपनी प्रामाणिकता की बेजोड़ छाप अंकित कर दी है। इस पुस्तक में उन्होंने महाकाली की उपासना से सम्बन्धित सारा साहित्य एकत्र कर एक स्थान पर उपस्थित कर दिया है। इसके भीतर कालीयन्त्रोद्धार, कालीमन्त्रोद्धार, कालीकर्पूरस्तोत्र, काली-हृदय, कालीशतनाम स्तोत्र, कालीसहस्रनाम स्तोत्र, कालिकोपनिषत् आदि सारे विषय अनुवाद-सहित पूरे पाण्डित्य के साथ वर्णित हैं। इन विषयों के साथ ही उन्होंने 'दक्षिणकाली-सपर्यापद्धति' से सम्बन्धित सम्पूर्ण पूजाविधि के सांगोपांग यथातथ्य स्वरूप का विश्लेषण कर महाकाली के अनन्य भक्तों का महान् उपकार किया है।

कार्तिकी पूर्णिमा
२० नवम्बर, १९८३ ई०

डॉ० सत्यव्रत शर्मा

विषयानुक्रमणिका

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
कालीध्यानम्	१
कालीयन्त्रोद्धारः	२
कालीयन्त्रम्	३
कालीमन्त्रोद्धारः	३
कालीमन्त्रः	३
संक्षिप्त-कालीपूजा-विधानम्	४
काली-पटलम्	१३
काली-कवचम्	२१
कालिका-कवचम्	३०
कर्पूरस्तोत्रम्	३८
कालीस्तोत्रम्	४९
काली-हृदयम्	५७
काली-शतनाम-स्तोत्रम्	६६
काली-सहस्रनाम-स्तोत्रम्	७१
ककारादि-काली-सहस्रनामावली	१४२
कालीस्तवः	१६३
कालिकाष्टकम्	१६७
श्रीदक्षिणकाली-सपर्य्यापद्धतिः	१७२
भूतशुद्धिः	१८१
षडङ्गन्यासः	१८१
मात्रिकान्यासः	१९६
सृष्टिक्रमः	२००
स्थितिक्रमः	२०२
संहारक्रमः	२०३
श्रीकण्ठादिन्यासः	२०४
षोढान्यासः	२०६
विलोमन्यासः	२१४
तत्त्वन्यासः	२१५
बीजन्यासः	२१६
मानसपूजाविधिः	२१९
बहिःपूजाविधिः	२२१
अर्घ्यस्थापनविधिः	२२३
पात्रस्थापनविधिः	२३२
तत्त्वशुद्धिः	२३५
बटुकादिभ्यो बलिदानम्	२३६
आधारशक्त्यादिपूजनम्	२३८
ध्यानादिपूजाविधिः	२३९
जपविधिः	२७२
कुमारीसुवासिनीपूजाविधिः	२७७
बलिदानप्रकारः	२८१
छागदानविधिः	२८३
आरात्तिकम्	२८६
पुष्पाञ्जलिः	२८७
नित्यहोमविधिः	२८८
पुरश्चरणनियमः	२९२
कालिकोपनिषत्	२९४
देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्	२९६
देवी-नीराजनम्	२९८
क्षमा-प्रार्थना	२९९
ग्रन्थकारसंस्तवः	३००

❀ श्रीमात्रे जयन्त्यै नमः ❀

आचार्य-पण्डित-शिवदत्तमिश्रशास्त्रि-संस्कृतम्

काली-रहस्यम्

'शिवदत्ती'हिन्दीव्याख्योपेतम्

❀

मङ्गलाचरणम्

काली-रहस्येऽत्र जगज्जनन्याः
पूजादि-नानाविषया निबन्धाः ।
न्यस्ता, तदीया विवृतिर्वितन्यते
ह्युपासकानां सुविधामपेक्ष्य ॥ १ ॥

देवरिया-मण्डलगत-'मझौली'ग्रामाभिजनेन ।
सन्तशरणतनुजनुषा शिवदत्ताख्येन मिश्रेण ॥

कालीध्यानम्

शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां हसन्मुखीम् ।
चतुर्भुजां खड्ग-मुण्ड-वराभयकरां शिवाम् ॥ १ ॥

काली-ध्यान—शव पर आसीन, अति भयंकर स्वरूप, विकराल, दाँतों वाली, अट्टहास करने वाली, चार भुजाधारी, उन भुजाओं में खड्ग, मुण्ड, वर एवं अभय मुद्रा धारण की हुई, शिवास्वरूपिणी ॥ १ ॥

मुण्डमालाधरां देवीं ललज्जिह्वां दिगम्बराम् ।
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥ २ ॥

यन्त्रोद्धार:

आदौ त्रिकोणमालिख्य त्रिकोणं तद्बहिर्लिखेत् ।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥ १ ॥
ततस्त्रिवृत्तमालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद् भूपुरमेककम् ॥ २ ॥

श्मशान-निवासिनी, दिगम्बर (नग्न) स्वरूपा, लपलपाती जीभ वाली, मुण्डमाला धारण की हुई ऐसी भगवती का ध्यान[1] साधकों को करना चाहिए ॥ २ ॥

कालीयन्त्र-निर्माण—कालीमन्त्र साधक को चाहिए कि, वह सर्व-प्रथम एक त्रिकोण का निर्माण करे, उस त्रिकोण के बाहरी भाग में पुनः द्वितीय त्रिकोण एवं उसके पास एक और तृतीय त्रिकोण बनावे ॥ १ ॥

उन तीनों त्रिकोण के चारो ओर तीन वृत्त (घेरा) बनावे । फिर उसके ऊपर अष्टदल कमल बनाकर उसके चारो ओर एक गोल घेरा की रचना करे । और स-विधि उस घेरे के चारों तरफ एक भूपुर (मण्डल) बनाने से ही कालीयन्त्रोद्धार होता है ॥ २ ॥

१. ध्यानेन मन्त्रसिद्धिः स्याद् ध्यानं सर्वार्थसाधनम् ।
ध्यानं विना भवेन्मूको सिद्धिमन्त्रोऽपि पुत्रक: ॥
— सा. तन्त्र — पटल ५, श्लो. १८ ।

कालीयन्त्रम्

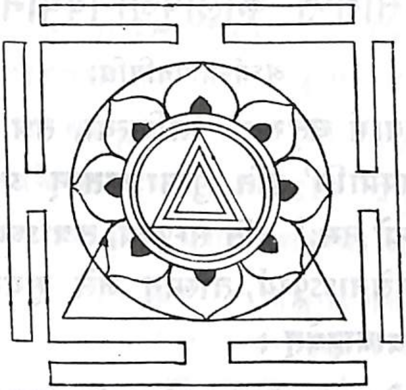

मन्त्रोद्धारः

कालीबीजत्रयं प्रोक्त्वा लज्जाबीजद्वयं ततः ।
हूँकारौ द्वौ ततः पश्चाद् दक्षिणे कालिके ततः ॥ १ ॥
कालीबीजत्रयं तस्माल्लज्जाबीजद्वयं पठेत् ।
द्वौ च स्वाहान्त-हूङ्कारौ कालीमन्त्र उदाहृतः ॥ २ ॥

कालीमन्त्रः

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूँ हूँ दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूँ हूँ स्वाहा ।

मन्त्र-निर्माण—सर्व-प्रथम तीन बार क्रींरूप काली बीज का उच्चारण करे । पुनः ह्रीं लज्जाबीज का दो बार उच्चारण करते हुए दो बार हूँकार शब्द का उच्चारण करे । तदनन्तर 'दक्षिणे कालिके' कह कर ॥ १ ॥

क्रीं रूप तीन बार काली बीज एवं ह्रीं रूप दो बार लज्जा बीज को कहकर स्वाहान्त दो बार हूँ शब्द का उच्चारण करने से काली मन्त्रोद्धार होता है ॥ २ ॥

काली-मन्त्र—क्रीं क्रीं क्रीं से हूँ हूँ स्वाहा' पर्यन्त काली मन्त्र है ।

संक्षिप्त–कालीपूजा-विधानम्

अर्घ्यस्थापनविधिः

तत्र स्ववामे चतुरस्रं लिखित्वा, तत्र 'ॐ ह्रः सामान्याऽर्घ्यं स्थापयामि' इति पुष्पाऽक्षतान् प्रक्षिप्य, तत्र 'ॐ आधारशक्तिभ्यो नमः' इति सम्पूज्य, तत्राऽर्घ्यपात्रं संस्थाप्य, 'नमः' इति जलेनाऽऽपूर्य्य, तस्मिन् जले सूर्यमण्डलादङ्कुश-मुद्रया तीर्थान्यावाहयेत्।

'ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति !।
नर्मदे सिन्धु कावेरि ! जलेस्मिन् सन्निधिं कुरु।'
'ॐ ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे !।
तेन सत्येन मे देव! तीर्थं देहि दिवाकर ! ॥'

इति तीर्थान्यावाह्य, 'ॐ गङ्गादि-सकलतीर्थेभ्यो नमः'

अर्घ्यस्थापन-विधि—सर्व-प्रथम अपने बायीं ओर कुंकुम से चतुरस्रकोण निर्माणकर, ॐ ह्रः सामान्यार्घ्यं स्थापयामि' कहकर, उस चतुरस्र मण्डल में, पुष्प और अक्षत छोड़े। पुनः 'आधार-शक्तिभ्यो नमः' कहकर यथावत् मण्डल का पूजन कर, उसमें अर्घ्य-पात्र स्थापित करे। तथा 'नमः' उच्चारण कर उस अर्घ्यपात्र में जल भरे। उस जल में सूर्यमण्डल से 'अंकुश' मुद्रा द्वारा तीर्थों का आवाहन करे। वह इस प्रकार है—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव' से 'तीर्थं देहि दिवाकर' पर्यन्त श्लोक

---

१. ऋज्वीं च मध्यमां कृत्वा तर्जनीं मध्यपर्वणि।
संयोज्याऽऽकुञ्चयेत् किञ्चिन् मुद्रैषाऽङ्कुशसंज्ञिका॥
—म. महा., पू. ख. प्र. त.।

इति पुष्पाऽक्षतादिभिः सम्पूज्य, 'ॐ अर्कमण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः' 'ॐ वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः,' 'ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः' इत्यर्क-वह्नि-सोममण्डलत्रयं सम्पूज्य, 'ॐ षडङ्गेभ्यो नमः' इति षडङ्गानि सम्पूज्य, अस्त्रे संरक्ष्य, कवचेनाऽवगुण्ठ्य,'वम्' इति [1]धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, [2]मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य, प्रणवं दशकृत्वो जपेत् [3]शङ्खमुद्रां

पढ़कर, तीर्थों का आवाहन कर, ॐ गङ्गादि-सकलतीर्थेभ्यो नमः' कहकर पुष्प एवं अक्षत आदि ले पूजन कर, उसी में 'ॐ अर्कमण्डलाय' से 'षोडशकलात्मने नमः' तक पढ़कर सूर्य, वह्नि एवं सोम इन तीनों मण्डलों का पूजन कर, 'षडङ्गेभ्यो नमः' कहकर षडंग का पूजन करने के बाद 'अस्त्र' मुद्रा से संरक्षित कर, कवच से अवगुंठित कर, पुनः 'वम्' उच्चारण कर 'धेनु' मुद्रा से अमृतीकरण कर 'मत्स्य' मुद्रा द्वारा आच्छादित करता हुआ दस बार प्रणव का उच्चारण करे। पश्चात् 'शंख' मुद्रा, 'धेनु' मुद्रा एवं 'योनि' मुद्रा का प्रदर्शन करे।

इस प्रकार सामान्यार्घ्य स्थापन-विधि समाप्तः।

१. अन्योन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठाऽनामिका पुनः।
तथा तु तर्जनी मध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता॥
—मेरुतन्त्र, अष्टम. प्र., श्लो. ३५

२. दक्षपाणि-पृष्ठदेशे वामपाणितले न्यसेत्।
अङ्गुष्ठौ चालयेत् सम्यग् मुद्रेयं मत्स्यरूपिणी॥
—म. म., पू. ख. द्वि. त.।

३. वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना।
कृत्वोत्तानां ततो मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत्॥
वामाङ्गुल्यस्तथा श्लिष्टाः संयुक्ताः स्युः प्रसारिताः।
दक्षिणाङ्गुष्ठ-संस्पृष्टा मुद्रैषा शङ्खमुद्रिका॥
—म. म., पू. ख., प्र. त.।

संदर्श्य, धेनुमुद्रा-योनिमुद्रे[1] दर्शयेत् ।

इति सामान्याऽर्घ्यस्थापनविधिः ।

पूजा-विधिः

यन्त्रं लिखित्वा, कुङ्कुम-केशर-चन्दनादिभिः षट्कोण-गर्भत्रिकोणत्रयाऽष्टभूपुरात्मकं लिखेत्। ततः ऋष्यादिन्यासं कुर्यात् । तद्यथा—

शिरसि भैरवाय ऋषये नमः। मुखे उष्णिक्-छन्दसे नमः। हृदये ॐ दक्षिणकालिकायै नमः। गुह्ये क्रीं बीजाय नमः। पादयोः ह्रूं शक्तये नमः। सर्वाङ्गे क्रीं कीलकाय नमः।

षडङ्गन्यासः

'क्रां हृदयाय नमः' इत्यङ्गुलीभिस्तर्जनी-मध्यमा-ऽनामाभिः प्रसारिताभिर्हृदयं स्पृशेत्। 'क्रीं शिरसे स्वाहा' इति तर्जनी-मध्यमाभ्यां शिरः स्पृशेत्।'क्रूं शिखायै वषट्'इति बद्धमुष्टिना-ऽङ्गुष्ठेन शिखां स्पृशेत्। 'क्रैं कवचाय हूम्' इति मन्त्रेण व्यस्त-

पूजा-विधि—अष्टभूपुरात्मक षट्कोण गर्भत्रिकोणत्रय यन्त्र का, कुंकुम, केशर और चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्य आदि से निर्माण करने के बाद, उस यन्त्र में इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—

'ॐ शिरसि भैरवाय ऋषये नमः' से 'क्रीं कीलकाय नमः' पर्यन्त पढ़कर, उन-उन अंगों को स्पर्श करते हुए ऋष्यादि न्यास करे—

षडङ्ग न्यास—अनन्तर 'ॐ क्रीं हृदयाय नमः' से 'ॐ क्रः अस्त्राय फट्' तक पढ़कर षडंग न्यासपूर्वक 'छोटिका' मुद्रा से दिग्बन्ध करे।

१ मिथः कनिष्ठिके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके।
अनामिकोद्ध्वं-संश्लिष्टे दीर्घमध्यमयोरथ।
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यसेद् योनिमुद्रेयमीरिता ।।
—म. महा., पू. ख., प्रथम तरङ्ग ।

हस्ताभ्यां सर्वाङ्गे । 'क्रौंनेत्रत्रयाय वौषट्' इति तर्जन्या मना-मया नेत्रे मध्यमया भ्रू मध्यमम् एवं नेत्रत्रयं स्पृशेत् । 'क्रः अस्त्राय फट्' इति छोटिकया दिग्बन्धनं कुर्यात् । एवं करन्यासः—

'क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हूम्, क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' इति न्यासं विधाय, दशधा सप्तधा पञ्चधा व्यापकन्यासं कुर्यात् ।

ततश्चतुः-षोडशाऽष्टवारजप्तेन मूलमन्त्रेण पूरक-कुम्भक-रेचकाख्यं प्राणायामत्रयं कुर्यात् । ततो दक्षिणकालीं ध्यायेत् । तत आवाहयेत् । तद्यथा-करकच्छपिकां सपुष्पां बद्ध्वा यथोक्त-रूपां देवीं ध्यात्वा, हृदयान्नासिकोपरि समानीय, मूलं पठित्वा, 'एह्येहि महादेवि पादुकाभ्यां दयानिधे' इत्यञ्जलिस्थ-पुष्पो-परि समानीय ।

'ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव' ।।

इसी प्रकार 'ॐ क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' से 'ॐ क्रः करतलकर-पृष्ठाभ्यां फट्' पर्यन्त पढ़कर दश, सात अथवा पाँच बार व्यापक न्यास करे ।

तत्पश्चात् चार बार, सोलह बार अथवा आठ बार मूल मन्त्र का पूरक, कुम्भक, रेचक नामक तीन प्राणायाम करे । तदनन्तर दक्षिण काली का ध्यान एवं आवाहन करे । वह इस प्रकार है—करकच्छपिका स्वरूप, पुष्पों से सुसज्जित दक्षिण काली देवी का हृदय से नासिका के ऊपर ध्यान एवं मूल मन्त्र का पाठ कर 'ॐ एह्येहि महादेवि पादुकाभ्यां दयानिधे' कहकर अंजलिस्थ पुष्प में देवी का आवाहन कर 'ॐ देवेशि भक्तिसुलभे' से 'तावत्त्वं सुस्थिरा भव' पर्यन्त पढ़कर यन्त्र पर अंजलिस्थ पुष्प को चढ़ा दे ।

इति यन्त्रोपरि क्षिपेत् । ततो मूलमुच्चार्य,'साङ्गे सायुधे सवाहने सावरणे सपरिवारे दक्षिणकालिके इहागच्छ' इत्यावाहनमुद्रया[1]ऽऽवाहयेत् । 'इह तिष्ठ' इति [2]स्थापनमुद्रया स्थापयेत् । 'इह सन्निधेहि' इति सन्निधीकरणमुद्रया[3]सन्निधीकरणम् । 'इह सन्निरुध्यस्व' इति सन्निरोधनमुद्रया सन्निरोधनम् । 'इह सन्मुखी भव' इति [4]सन्मुखीकरणमुद्रया सम्मुखीकरणम् । अस्त्रेण संरक्ष्य, 'हूम्' इत्यवगुण्ठ्य, 'वम्,

तत्पश्चात् मूल मन्त्र पढ़कर 'साङ्गे सायुधे' से 'दक्षिणकालिके इहागच्छ' पर्यन्त पढ़कर आवाहन मुद्रा से आवाहन करे। पुनः 'इह तिष्ठ' कहकर 'स्थापन' मुद्रा से देवी की स्थापना करे और 'इह सन्निधेहि' से 'सन्निधीकरण' मुद्रा द्वारा सन्निधीकरण करता हुआ 'इह सन्निरुध्यस्व' पढ़कर 'सन्निरोधन' मुद्रा से सन्निरोधनपूर्वक 'इह सम्मुखी भव' पढ़कर 'सम्मुखीकरण' मुद्रा द्वारा संमुखीकरण कर 'अस्त्र' मुद्रा से संरक्षित करता हुआ 'हूम्' उच्चारण करते हुए अवगुण्ठित कर 'वम्' का उच्चारण कर 'धेनु' मुद्रा से

१. 'सम्यक् सम्पूजितैः पुष्पैः कराभ्यां कल्पिताञ्जलिः ।
आवाहिनी समाख्याता मुद्रादेशिक-सत्तमैः ।।
२. 'स्थापनी सा तु मुद्रा स्यादेषाऽऽवाहनमुद्रिका ।
अधोमुखी कृता सा चेत् सर्वसंस्थापने क्षमा ।।'
—मे. तं., अ. प्र., श्लो. ३१
३. अङ्गुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता ।'
४. 'सम्मुखीकरणी मुद्रा सा ज्ञेया मुष्टियुग्मकम् ।
देवानां स्थापने या स्यादङ्गुष्ठद्वयमुक्तकम् ।।'
—मे. तन्त्र.

इति धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, देवताङ्गे षडङ्गान् विन्यस्य, मूलमन्त्रेण सकलीकृत्य, 'आं-ह्रीं-क्रों स्वाहा' इति द्वादशवारं जपं लेलिहानमुद्रया देवतायाः प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । तद्यथा—'आं-ह्रीं-क्रों-श्रीं दक्षिणकालिकाया वाङ्मनस्त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' इति हस्तं दत्वा पठेत् । तत्र धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

ततो मूलमन्त्रं पठन्, 'एष पुष्पाञ्जलिः साङ्ग-सायुध-सवाहन-सावरण-सपरिवार-दक्षिणकालिकादेवतायै नमः' इति पुष्पाञ्जलिपञ्चकं दद्यात् । एवं सर्वत्र मूलमन्त्रपाठः साङ्ग इत्यादियोजना च बोध्या । 'इदं पाद्यमिदमाचमनीयम्' 'एषोऽर्घ्यः' 'एष मधुपर्कः' 'इदं पुनराचमनीयम्' 'इदं स्नानीयं दक्षिणकालिकादेवतायै नमः ।' 'इदं रक्तचन्दनानुलेपनम्' 'एते अक्षता' इमानि पुष्पाणि अमुकदेवतायै वौषट्, 'एष

अमृतीकरण कर देवता के अंग में षडंग का न्यास कर, मूल मन्त्र से सकलीकरण कर 'ॐ आँ ह्रीं क्रों स्वाहा' इस मूल मन्त्र का बारह बार जप कर 'लेलिहान' मुद्रा द्वारा दक्षिणकाली की इस प्रकार प्राणप्रतिष्ठा करे। 'ॐ आं ह्रीं क्रों' से 'सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' पर्यन्त पढ़कर देवी के अंगों में तत्तत्स्थानों पर हाथ रखकर प्राणप्रतिष्ठा करने के बाद 'धेनु' मुद्रा प्रदर्शित करे।

तदनन्तर मूल मन्त्र का पाठ करता हुआ 'एष पुष्पाञ्जलिः' से 'दक्षिणकालिकादेवतायै नमः' तक पढ़कर पाँच बार पुष्पांजलि प्रदान करे। इसी प्रकार दक्षिणकालिका के समस्त पूजन में मूल मन्त्र का पाठ, साङ्गादि की योजना करे। पुनः 'इदं पाद्य' से

धूपः' 'एष दीपः' 'एतानि नैवेद्यानि कालिकादेवतायै नमः।' इति संक्षेपतः पूजां विधाय,ततो जपमालामानीय,क्वचित्पात्रे वामहस्ते वा स्थापयित्वा, मूलमन्त्रेणाऽर्घ्योदकेनाभ्युक्ष्य।

'ॐ माले माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥

'ॐ ह्रीं सिद्धयै नमः' इत्यनेन मालां दक्षिणकरे निधाय, हृत्प्रदेशे समानीय, मध्यमा-मध्यभागेन गुटिकां प्रत्येकं स्पृशन्, मेरुमलङ्घयन् शरीरे कामकलां विभाव्य, शिरसि गुरुं ध्यात्वा, हृदि देवीं भावयन्,जिह्वायां मन्त्रं दीपरूपिणं विभाव्य, तत्प्रभा-पटले जिह्वामपि दीपरूपिणीं विभाव्य, मनसा उपांशुना वा करमालया वर्णमालया वा संस्कृत-महाशङ्ख-रुद्राक्ष-स्फटिकाद्यन्यतममालया वा मूलमन्त्रमष्टोत्तरशतं वाऽद्रुतमविलम्बितं प्रजप्य मालां शिरसि।

'एतानि नैवेद्यानि कालिकादेवतायै नमः' पढ़कर संक्षिप्त रूप से दक्षिणकालिका का पूजन करे। पुनः जपमाला लेकर उसे किसी पात्र अथवा बायें हाथ में रखकर मूल मन्त्र से अपने बायीं ओर स्थित अर्घ्यपात्र के जल से सिंचित कर 'ॐ माले माले महामाये' से 'ॐ ह्रीं सिद्धयै नमः' पर्यन्त पढ़कर उस माला को बायें हाथ से दाहिने हाथ में लेकर उसे हृदय प्रदेश से स्पर्श कराकर मध्यमा अँगुली के मध्य भाग से माला के प्रत्येक दाने का स्पर्श करते हुए सुमेरु का उल्लंघन न करते हुए अपने शरीर में कामकला का प्राकट्य कर मस्तक में गुरु का ध्यान, हृदय में देवी की भावना करते हुए जिह्वा में दीपस्वरूप मन्त्र की भावना कर, उस दीप-कान्ति के समूह में, अपनी जिह्वा में दीपरूप की भावना कर

'ॐ त्वं माले सर्वभूतानां सर्वलोकप्रिया मता ।
शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च सर्वदा ॥'

इति पठन् निधाय, 'ह्रीं सिद्ध्यै नमः' इति सम्पूज्य, पुनः पूर्ववत् प्राणायाम-न्यासादिकं च विधाय, देवतां पुष्पाऽक्षतादिभिः सम्पूज्य, पुष्प-चन्दना-ऽक्षतयुत-शङ्खोदकेन,

'ॐ गुह्याऽतिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्प्रसादान्महेश्वरी ॥'

इति मन्त्रेण देव्या वामकरे तेजोमयं जलं ध्यात्वा समर्पयेत् ।

ततो मालां शिरसि उत्तार्य,

'ॐ त्व माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता ।
तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि देवि ! नमोऽस्तु ते ॥'

मानसिक उपांशुरूप से करमाला, वर्णमाला, मन्त्रसंस्कृत महाशंख, रुद्राक्ष, स्फटिक आदि किसी एक माला द्वारा अष्टोत्तर शत अर्थात् एक सौ आठ बार मूल मन्त्र का जाप करे ।

तदनन्तर उस माला को मस्तक पर रखकर 'ॐ त्वं माले सर्वभूतानां' से 'यशो वीर्यं च सर्वदा' पर्यन्त पढ़कर 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः' कहकर उस माला का पूजन कर, पुनः पूर्ववत् प्राणायाम, हृदयादि करन्यास कर पुष्प, अक्षत आदि से देवता का पूजन कर, पुनः पुष्प, चन्दन और अक्षतसहित शंख-जल दाहिने हाथ में लेकर 'ॐ गुह्याति-गुह्यगोप्त्री त्वं' से 'त्वत्प्रसादान्महेश्वरि' यह श्लोक पढ़कर; तेजोमय जल का ध्यान कर देवी के बायें हाथ में समर्पित करे ।

इत्यमुं मन्त्रं पठन् सम्पूज्य, यत्नतो गोपयेत्। कराद् भ्रष्टे तच्छान्त्यर्थमष्टोत्तरशतमूलं जपेत्। ततो देव्यै पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्वा, स्तोत्र-कवचादिकं पठेत्।

इति काली-रहस्ये संक्षिप्त-कालीपूजा-विधानं समाप्तम्।

तत्पश्चात् उस जपमाला को सिर से उतार 'ॐ त्वं माले सर्वदेवानां' से 'देहि देवि नमोऽस्तु ते' पढ़कर उस माला का पूजन कर, उस माला को अधिक यत्न के साथ रखे। यदि जप के समय माला हाथ से गिर जाय तो उसकी शान्ति के लिए एक सौ आठ बार पुनः मूल मन्त्र का जप करे। तदनन्तर आठ बार पुष्पांजलि देवी को समर्पित कर दक्षिण कालिका-स्तोत्र एवं कवच आदि का पाठ करे।

इस प्रकार काली-रहस्य में संक्षिप्त-कालीपूजा-विधान समाप्त।

काली-पटलम्

अथ कालीमनून् वक्ष्ये सद्यो वाक्-सिद्धिदायकम् ।
आराधितैर्यैः सर्वेष्टं प्राप्नुवन्ति जना भुवि ॥१॥
ब्रह्म-रेफौ वाम-नेत्र-चन्द्रारूढौ मनुर्मतः ।
एकाक्षरो महाकाल्याः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥२॥
बीजं दीर्घयुतश्चक्री पिनाकी नेत्रसंयुतः ।
क्रोधीशो भगवान् स्वाहा खण्डार्णो मन्त्र ईरितः ॥३॥
कालीं कूर्चं तथा लज्जा त्रिवर्णो मनुरीरितः ।
हुँफट् ततश्च पञ्चार्णः स्वाहान्तः सप्तवर्णकः ॥४॥

काली पटल—सदाशिव ने कहा—हे भैरव ! तत्क्षण (अति शीघ्र) वाणी-सिद्धकारक काली मनु का मैं वर्णन करता हूँ। इस मृत्युलोक में जिन साधकों ने दक्षिण कालिका का आराधन किया है, उन्होंने अपने समस्त मनोरथों को प्राप्त किया है ॥ १ ॥

तन्त्रकारों के मत में देवी के चन्द्ररूप वामनेत्र में स्थित ब्रह्म और रेफ को मनुसंज्ञक माना गया है। महाकाली का एकाक्षर मन्त्र सभी इष्टसिद्धि को देने वाला है ॥२॥

दक्षिण काली मन्त्र का बीज शिव का तृतीय नेत्र एवं विष्णु का सुदर्शन चक्र है। तथा 'क्रोधीशो भगवान् स्वाहा' इसे खण्डार्ण मन्त्र कहते हैं ॥३॥

काली, कूर्च एवं लज्जा ये तीन मनु कहे गये हैं। 'हूँ फट् पञ्चार्णः स्वाहा' ये सात वर्ण (अक्षर) वाले मनु हैं ॥४॥

कूर्चद्वयं त्रयं काल्या मायायुग्मं च दक्षिणे ।
कालिके पूर्वबीजानि स्वाहा मन्त्रो वशीकृतः ॥५॥
मन्त्रराजः पुनः प्रोक्तः बीजसप्तकमुत्सृजेत् ।
तिथिवर्णो महामन्त्र उपास्तिः पूर्ववन्मता ॥६॥
न चाऽत्र सिद्धि-साध्यादि-शोधनं मनसाऽपि वा ।
न यत्नातिशयः कश्चित् पुरश्चर्यानिमित्तकः ॥७॥
विद्याराज्ञीस्मृतेरेव सिद्धयष्टकमवाप्नुयात् ।
भैरवोऽस्य ऋषिश्छन्द उष्णिक्-काली तु देवता ॥८॥
बीजं माया दीर्घवर्मशक्तिरुक्ता मनीषिभिः ।
षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन विद्याया अङ्गमीरितम् ॥९॥

कूर्चद्वय, काली के तीन तथा दक्षिण काली के माया युग्म बीज हैं। और 'पूर्वबीजानि स्वाहा' यह दक्षिण कालिका मन्त्र वशीकरण करने वाला है ॥५॥

सात बीज वाला दक्षिण कालिका का मन्त्र, मन्त्रराज संज्ञक कहा गया है। और पन्द्रह अक्षर वाले महामन्त्र को उपास्ति मन्त्र कहा गया है ॥६॥

इस दक्षिण काली के उपास्ति मन्त्र के विषय में सिद्धि और साध्य का शोधन एवं पुरश्चरण निमित्त किसी प्रकार का भी प्रयत्न नहीं करना चाहिए। इस विषय की मानसिक कल्पना भी नहीं करनी चाहिए ॥७॥

साधक विद्याराज्ञी के स्मृति से ही अणिमादि आठ सिद्धियों को प्राप्त करता है। इस दक्षिण कालिका मन्त्र के भैरव ऋषि, उष्णिक् छन्द और काली देवता ॥८॥

माया बीज, दीर्घवर्म शक्ति है और श्रेष्ठ षड्दीर्घ बीज विद्या का अंग तान्त्रिक विद्वानों ने कहा है ॥९॥

मातृकान् पञ्चधा भक्त्वा वर्णान् दशदशक्रमात् ।
हृदय भुजयोः पादद्वये मन्त्री प्रविन्यसेत् ॥
व्यापकं मनुना कृत्वा ध्यायेच्चेतसि कालिकाम् ॥१०॥

सद्यश्छिन्नशिरः कृपाणमभयं हस्तैर्वरं बिभ्रतीं
घोरास्यां शिरसा स्रजा सुरुचिरामुन्मत्तकेशावलीम् ।
सृक्का-ऽसृक्-प्रवहां श्मशान-निलयां श्रुत्योः शवालंकृतीं
श्यामाङ्गीं कृतमेखलां शवकरैर्देवीं भजेत् कालिकाम् ॥११॥

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
प्रसूनैः करवीरोत्थैः पूजायन्त्रमथोच्यते ॥१२॥

मन्त्र सिद्ध करने वाले साधक को चाहिए कि, वह दश-दश वर्णों के क्रम से मातृका का पाँच बार भेदन कर, हृदय, दोनों भुजा एवं दोनों पैर में न्यास करे। एवं मनु से व्यापक कर हृदय में काली का ध्यान करे ॥१०॥

ध्यान--तत्क्षण छिन्न मस्तक वाली, अपने हाथों में अभय-कृपाण धारण की हुई, विकराल मुख वाली, मुण्डों की सुन्दर माला धारण की हुई, बिखरे हुए केश वाली, आँखों से खून बहाती हुई (अर्थात् सर्वाङ्ग रुधिर से लथपथ), श्मशानवासी, कानों में मुण्डमाला धारण करने वाली, श्याम वर्ण वाली, मेखला धारण की हुई, शव पर हाथ रखी हुई – ऐसी महाकाली का ध्यान करे ॥११॥

इस प्रकार महाकाली का ध्यान कर काली के मन्त्र का एक लाख जप और उसका दशांश (दस हजार) हवन करे।

यन्त्र-निर्माण-विधि—हवन के बाद करवीर (कनैल) के पुष्प से पूजन कर यन्त्र का निर्माण करे। वह इस प्रकार है ॥१२॥

आदौ षट्कोणमारच्य त्रिकोण-त्रितयं ततः ।
पद्ममष्टदलं बाह्ये भूपुरं तत्र पूजयेत् ॥१३॥
जयाख्या विजया पश्चादजिता चापराजिता ।
नित्या विलासिनी चाऽपि दोग्धा घोरा च मङ्गला ॥१४॥
पीठशक्तय एताः स्युः कालिकायोगपीठतः ।
आत्मनो हृदयान्तोऽयं मयादिपीठमन्त्रकः ॥१५॥
अस्मिन् पीठे यजेद् देवीं शवरूप-शिव-स्थिताम् ।
महाकालरताशक्तां शिवाभिर्दिक्षु वेष्टिताम् ॥१६॥
अङ्गानि पूर्वमाराध्य षट्पत्रेषु समर्चयेत् ।
कालीं कपालिनीं कुल्वां कुरुकुल्वां विरोधिनीम् ॥१७॥
विप्रचित्तां तु सम्पूज्य नवकोणेषु पूजयेत् ।
उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां नीलां घनां बलाकिकाम् ॥१८॥

पहले षट्कोण बनाकर, उसके मध्य तीन त्रिकोण की रचना करे। उस त्रिकोण के बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसमें भूपूर की पूजा करे ॥१३॥

जया विजया, अजिता, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोग्धा, घोरा और मङ्गला ॥१४॥

ये सभी देवियाँ कालिका योग पीठ से पीठशक्ति रूप में कही गयी हैं। अपने पैर से लेकर हृदय तक मायादि पीठ मन्त्र है ॥१५॥

इस पीठ में— शवरूप शिव पर स्थित, महाकाल से रमण करने में आसक्त, समस्त दिशाओं में शिवा आदि योगिनियों से घिरी हुई महाकाली का पूजन करे ॥१६॥

पहले काली के अंगों का पूजन कर कमल में छह पत्रों में काली, कपालिनी, कुल्वा, कुरुकुल्वा, विरोधिनी ॥१७॥

विप्रचित्ता इन छह देवियों का पूजन कर तीनों त्रिकोण के नव कोण में उग्रा, उग्रप्रभा, दीप्ता, नीला, बलाकिका, ॥१८॥

मात्रां मुद्रां तथाऽमित्रां पूज्याः पत्रेषु मातरः ।
पद्मस्याऽष्टसु नेत्रेषु ब्राह्मी नारायणी तथा ॥१९॥
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चाऽपराजिता ।
वाराही नारसिंही च पुनरेताश्च भूपुरे ॥२०॥
भैरवीं महदाद्यन्तां सिंहाद्यां धूम्रपूर्विकाम् ।
भीमोन्मत्तादिकां चाऽपि वशीकरणभैरवीम् ॥२१॥
मोहनाद्यां समाराध्य शक्रादीन्यायुधान्यपि ।
एवमाराधिता काली सिद्धा भवति मन्त्रिणाम् ॥२२॥
ततः प्रयोगान् कुर्वीत महाभैरवभाषितान् ।
आत्मनोऽर्थं परस्यार्थं क्षिप्रसिद्धिप्रदायकान् ॥२३॥
स्त्रीणां प्रहारं निन्दां च कौटिल्यं चाऽप्रियं वचः ।
आत्मनो हितमन्विच्छन् कालीभक्तो विवर्जयेत् ॥२४॥

मात्रा, मुद्रा और अमित्रा देवी का पूजन करे। कमल के आठ दलों में—ब्राह्मी, नारायणी, ॥ १९ ॥

माहेश्वरी, चामुण्डा, कौमारी, अपराजिता, वाराही तथा नारसिंही इन देवियों का पूजन करे ॥ २० ॥

उसी कमलदल में महदाद्यन्त, सिंहाद्या, धूमावती, भीमा, उन्मत्ता, वशीकरण भैरवी रूप, ॥ २१ ॥

मोहन तथा इन्द्रादि के शस्त्रों का आराधन, पूजन करने से साधकों को काली सिद्ध होती है ॥ २२ ॥

उसके बाद महाभैरव द्वारा प्रतिपादित प्रयोगों को करे। उक्त प्रयोग अपने तथा अन्य लोगों के लिए अतिशीघ्र सिद्धि प्रदान करने वाला है ॥ २३ ॥

अपने कल्याण की कामना चाहने वाले काली के सेवकगण, स्त्रियों पर प्रहार, निन्दा, कुटिलता तथा अप्रिय वचन का परित्याग करें ॥ २४ ॥

सुदृशो मदनावासं तस्या यः प्रजपेन्मनुम् ।
अयुतं सोऽचिरादेव वाक्पतेः समतामियात् ॥२५॥
दिगम्बरो मुक्तकेशः श्मशानस्थो जितेन्द्रियः ।
जपेदयुतमेतस्य भवेयुः सर्वकामनाः ॥२६॥
शवहृदयमारुह्य निर्वासाः प्रेतभूगतः ।
१अर्कपुष्पसहस्रेणाभ्यक्तेन स्वीयरेतसा ॥२७॥
देवीं यः पूजयेद् भक्त्या जपन्नेकैकशो मनुम् ।
सोऽचिरेणैव कालेन धरणीप्रभुतां व्रजेत् ॥२८॥
रजःकीर्णं भगं नार्या ध्यायन् योऽयुतमाजपेत् ।
स कवित्वेन रम्येण जनान् मोहयति ध्रुवम् ॥२९॥

जो साधक इस काली मन्त्र का एक लाख जप करता है वह कामदेव के समान हो जाता है। और अतिशीघ्र वह साधक बृहस्पति के समान हो जाता है ॥ २५ ॥

जो साधक दिगम्बर (नंगा), बाल बिखरे हुए, श्मशानवासी, जितेन्द्रिय होकर इस काली मन्त्र का एक लाख जप करता है, उसकी समस्त कामनाएँ सिद्ध होती हैं ॥ २६ ॥

शव के हृदय पर बैठकर श्मशानवासी, नग्न, अपने वीर्य से मन्दार के हजार पुष्पों को सिंचन करने वाला ॥ २७ ॥

काली मन्त्र साधक श्रद्धा-भक्ति पूर्वक एक-एक मनु का जप करता हुआ काली देवी का पूजन करता है, वह थोड़े समय में ही राजा बन जाता है ॥ २८ ॥

जो साधक रजस्वला नारी के भग का ध्यान करता हुआ काली मन्त्र का अयुत (एक लाख) जप करता है, वह निश्चय ही सुन्दर कविता द्वारा मनुष्यों के मन को मोह लेता है ॥ २९ ॥

---

१. अर्कपुष्पं बर्बरं च बन्धूकं च प्रियंवदा ।
अष्टम्यां च विशेषेण तुष्टा भवति पार्वती ॥ —मुण्डमाला

त्रिपञ्चारे महापीठे शवस्य हृदि संस्थिताम् ।
महाकालेन देवेन नारयुद्धं प्रकुर्वतीम् ॥३०॥
तां ध्यायन् स्मेरवदनां विदधत्सुरतं स्वयम् ।
जपेत् सहस्रमपि यः स शङ्करसमो भवेत् ॥३१॥
अस्थि-लोम-त्वचायुक्तं मांसं मार्जार-मेषयोः ,
उष्ट्रस्य महिषस्यापि बलिं यस्तु समर्पयेत् ॥३२॥
भूताष्टभ्यो मध्यरात्रे वश्याः स्युः सर्वजन्तवः ।
विद्या-लक्ष्मी-यशः-पुत्रैः सुचिरं सुखमेधते ॥३३॥
यो हविष्याशनरतो दिवा देवीं स्मरन् जपेत् ।
नक्तं निधुवनासक्तो लक्षं स स्याद् धरापतिः ॥३४॥

पन्द्रह कमल दल वाले महापीठ एवं शव के हृदय पर बैठी हुई, महाकाल देव शिव के साथ कामवासना से मानो युद्ध करती हुई, ॥ ३० ॥

काम के वशीभूत होकर शवरूप शिव के साथ सम्भोग करती हुई, उस काली का ध्यान करता हुआ जो साधक काली मन्त्र का एक हजार भी जप करता है वह शंकर के समान बन जाता है ॥ ३१ ॥

जो साधक बिल्ली, भेंड़, ऊँट और भैंसा की हड्डी, रोंआ, चमड़ी युक्त मांस की बलि काली देवी को समर्पित करता है ॥ ३२ ॥

उस साधक के सभी प्राणी एवं आठ भूत मध्य रात्रि में उसके आधीन हो जाते हैं। और वह साधक विद्या, लक्ष्मी, यश एवं अपने पुत्रों से बहुत कालपर्यन्त सुख का उपभोग करता है ॥ ३३ ॥

जो साधक केवल हविष्यान्न खाकर दिन में देवी का स्मरण करता है और रात्रि में मद्यपान द्वारा नशे में चूर होकर काली देवी के मन्त्र का एक लाख जप करता है वह राजा बन जाता है ॥ ३४ ॥

रक्ताम्भोजैर्भवेन मैत्री धनंजयति वित्तपम् ।
बिल्वपत्रैर्भवेद्राज्यं रक्तपुष्पैर्वशीकृतिः ॥३५॥
असृजा महिषादीनां कालिकां यस्तु तर्पयेत् ।
तस्य स्युरचिरादेव करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥३६॥
यो लक्षं प्रजपेन्मन्त्रं शवमारुह्य मन्त्रवित् ।
तस्य सिद्धो मनुः सद्यः सर्वेप्सितफलप्रदः ॥३७॥
तेनाऽश्वमेधप्रमुखैर्यारिष्ट्वा सुजन्मना ।
दत्तं दानं तपस्तप्तं पूजयेत् यस्तु कालिकाम् ॥३८॥

जो साधक रक्त कमल से देवी का पूजन करता है, उसके शत्रुगण भी मित्र बन जाते हैं। और वह अपने धन से कुबेर पर भी विजय प्राप्त कर लेता है। जो बिल्व पत्र से भगवती काली का पूजन करता है वह राज्य-सुख का उपभोग करता है और लाल पुष्प (अड़हुल, कनैल आदि) से भगवती का पूजन करता है, वह समस्त संसार को अपने वश में कर लेता है ॥ ३५ ॥

जो साधक-गण भैंस, भेंड़ आदि के रक्त से काली का तर्पण करता है, उस साधक की समस्त सिद्धियाँ तत्काल उसके हाथ में ही रहती हैं। अर्थात् वह सभी अणिमादि सिद्धियाँ प्राप्त कर लेता है ॥ ३६ ॥

जो मन्त्रवेत्ता साधक शव मुर्दे) पर बैठकर काली के मन्त्र का एक लाख जप करता है, उसके समस्त मनोरथ पूर्ण करने वाले मनु तत्क्षण सिद्ध हो जाते हैं ॥ ३७ ॥

फलश्रुति--जो साधक अपने पूर्व जन्म के अच्छे संस्कारों से तथा अश्वमेध आदि प्रमुख यज्ञों द्वारा कालिका का पूजन करता है, उसने मानो सभी दान-प्रदान एवं समस्त कठिन तपस्या आदि पूर्ण कर लिया है ॥ ३८ ॥

ब्रह्मा विष्णुः शिवो गौरी लक्ष्मीर्गणपती-रविः ।
पूजिताः सकला देवा यः कालीं पूजयेत् सदा ॥३९॥

इति काली-रहस्ये श्रीदक्षिणकालिकापटलाख्यं
मन्त्राद्युद्धारकमङ्गं सम्पूर्णम् ।

काली-कवचम्

भैरव्युवाच

कालीपूजा श्रुता नाथ ! भावाश्च विविधा प्रभो ! ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्वसूचितम् ॥१॥
त्वमेव स्रष्टा पाता च संहर्ता च त्वमेव च ।
त्वमेव शरणं नाथ ! त्राहि मां दुःख-सङ्कटात् ॥२॥

जिन साधुओं ने सर्वदा काली का पूजन किया, उन्होंने मानो ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गौरी, लक्ष्मी, गणेश और सूर्य आदि सभी देवताओं का पूजन कर लिया ॥३९॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित काली-रहस्य में दक्षिण-कालिका-पटल नामक मन्त्रादि उद्धारक अंग समाप्त ।

भैरवी ने कहा - हे नाथ ! मैंने अनेक भावयुक्त काली-पूजन आपके श्री-मुख से सुना । आपने जो पूर्व में कहा था कि, मैं तुम्हें काली-कवच सुनाउँगा । हे प्रभो ! वही काली-कवच मैं इस समय सुनना चाहती हूँ ॥१॥

आप ही जगत् के स्रष्टा, रक्षक एवं संहारक हैं । मैं आपकी ही शरण में हूँ, अतः इस घोर दुःख-संकट से मेरी रक्षा करें ॥२॥

भैरव उवाच

रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवि प्राणवल्लभे ! ।
श्रीजगन्मङ्गलं नाम कवचं मन्त्र-विग्रहम् ॥३॥
पठित्वा धारयित्वा च त्रैलोक्यं मोहयेत् क्षणात् ।
नारायणोऽपि यद्धृत्वा नारी भूत्वा महेश्वरम् ॥४॥
योगिनं क्षोभमनयद् यद् धृत्वा च रघूत्तमः ।
वरतृप्तो जघानैव रावणादि-निशाचरान् ॥५॥
यस्य प्रसादादीशोऽहं त्रैलोक्यविजयी विभुः ।
धनाधिपः कुबेरोऽपि सुरेशोऽभूच्छचीपतिः ॥६॥

भैरव ने कहा--हे प्राणप्रिय भैरवि ! मन्त्र-स्वरूप जगन्मंगल नामक कवच के रहस्य का मैं वर्णन करता हूँ, उसे तुम अत्यन्त सावधानी से श्रवण करो ॥३॥

इस कवच को पढ़ने वाले एवं धारण करने वाले साधक-गण तत्क्षण ही त्रैलोक्य को मोहित कर लेते हैं। स्वयं भगवान् नारायण ने भी धारण कर नारी स्वरूप से योगिराज महेश्वर के मन में क्षोभ उत्पन्न किया था। इसी कवच को धारण कर मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम ने अत्यन्त क्रूर रावण आदि निशाचरों का रण में संहार किया ॥४-५॥

जिस कवच को धारण करने से मैं समस्त संसार के स्वामी, त्रैलोक्यविजयी और विभु हूँ। कुबेर भी इस कवच को धारण कर धनाधिप एवं इन्द्र त्रैलोक्य-सुन्दरी शची के पति हुए ॥६॥

एवं सकला देवाः सर्वसिद्धीश्वराः प्रिये ! ।
श्रीजगन्मङ्गलस्याऽस्य कवचस्य [1]ऋषिः शिवः ॥७॥
[2]छन्दोऽनुष्टुब् देवता[3] च कालिका दक्षिणेरिता ।
जगतां मोहने दुष्टविजये भुक्ति-मुक्तिषु ॥८॥
योषिदाकर्षणे चैव विनियोगः प्रकीर्तितः ।
शिरो मे कालिका पातु क्रींकारैकाक्षरी परा ॥९॥

हे प्रिये ! समस्त देवगण इसी कवच को धारण कर सम्पूर्ण सिद्धियों के अधिपति हुए। इस जगन्मंगल कवच के ऋषि शिव, ॥७॥

अनुष्टप् छन्द, दक्षिण काली देवता से युक्त कवच समस्त जगत् को मोहने वाला, दुष्टों पर विजय प्राप्त करने वाला एवं भुक्ति-मुक्ति-प्रदायक है ॥८॥

विशेष कर स्त्रियों के आकर्षण में इसका प्रयोग अधिक उपयोगी है। परा एकाक्षरी क्रीं रूप कालिका मेरे सिर की रक्षा करें ॥९॥

---

१. महेश्वरमुखात् ज्ञात्वा यः साक्षात् तपसा मनुम् ।
संसाधयति शुद्धात्मा स तस्य ऋषिरीरितः ॥
—कालानल तन्त्र

ऋगताविति धातोस्तु ऋवर्णः प्रापको मतः ।
विषणर्थिस्तु विज्ञानम् अतस्तत्प्रापकस्तु सः ॥
— मेरुतन्त्र

२. सर्वेषां मन्त्रतत्त्वानां छादनात् छन्द उच्यते ।
— बृहन्मत्स्य सूक्त

३. क्रीडार्थकाद् दिवो धातोः सम्पूर्णं देवतापदम् ।
साधकाय ददातीति देवता परिकीर्तिता ॥

क्रीं क्रीं क्रीं मे ललाटं च कालिका खड्गधारिणी ।
हूँ हूँ पातु नेत्रयुगं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुती मम ॥१०॥
दक्षिणे कालिका पातु घ्राणयुग्मं महेश्वरी ।
क्रीं क्रीं क्रीं रसनां पातु हूं हूं पातु कपोलकम् ॥११॥
वदनं सकलं पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहा-स्वरूपिणी ।
द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्या सुखप्रदा ॥१२॥
खड्ग-मुण्डधरा काली सर्वाङ्गमभितोऽवतु ।
क्रीं हूं ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदये मम ॥१३॥
ऐं हूं ओं ऐं स्तनद्वन्द्वं ह्रीं फट् स्वाहा ककुत्स्थलम् ।
अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्तृका ॥१४॥

खड्गधारिणी क्रीं-क्रीं-क्रीं रूप कालिका मेरे ललाट की, हूँ हूँ रूप कालिका दोनों नेत्रों की तथा ह्रीं-ह्रीं रूप कालिका मेरे दोनों कानों की रक्षा करें ॥१०॥

कालिका मेरे दाहिनी ओर, महेश्वरी दोनों नासिका की, क्रीं-क्रीं-क्रीं रूप काली मेरे जिह्वा की तथा हूँ-हूँ स्वरूपा काली मेरे कपोल की रक्षा करें ॥११॥

ह्रीं-ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी कालिका मेरे मुख की, बाइस अक्षर वाली सुखकारिणी महाविद्या रूपा काली मेरे दोनों कन्धों की रक्षा करें ॥१२॥

खड्ग-मुण्ड धारण करने वाली काली मेरे सभी अंगों की चारों ओर से रक्षा करें। क्रीं-हूं-ह्रीं तीन अक्षर वाली चामुण्डा रूप काली मेरे हृदय की रक्षा करें ॥१३॥

ऐं-हूं-ओ-ऐं रूप कालिका दोनों स्तनों की, ह्रीं फट् स्वाहा रूप कालिका मेरे ककुद (तालु) भाग की रक्षा करें। अष्टाक्षरी महाविद्या सकर्तृका रूप काली मेरे दोनों भुजाओं की रक्षा करें ॥१४॥

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रींकारी पातु षडक्षरी मम ।
क्रीं नाभिं मध्यदेशं च दक्षिणे कालिकाऽवतु ॥१५॥
क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठं च कालिका सा दशाक्षरी ।
क्रीं मे गुह्यं सदा पातु कालिकायै नमस्ततः ॥१६॥
सप्ताक्षरी महाविद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।
ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूं हूं पातु कटिद्वयम् ॥१७॥
काली दशाक्षरी विद्या स्वाहा मामूरुयुग्मकम् ।
ॐ क्रीं क्रीं मे स्वाहा पातु कालिका जानुनी सदा ॥१८॥
कालीहृन्नामविद्येयं चतुर्वर्गफलप्रदा ।
क्रीं ह्रीं ह्रीं पातु सा गुल्फं दक्षिणे कालिकाऽवतु ॥१९॥

क्रीं-क्रीं-हूं-हूं ह्रीं-ह्रीं ये षडक्षरी रूप कालिका मेरी रक्षा करें। क्रीं रूपा काली नाभि तथा दक्षिण कालिका मेरे मध्य भाग की रक्षा करें ॥१५॥

क्रीं स्वाहा दशाक्षरी रूप कालिका मेरे पृष्ठ भाग की, क्रीं रूप कालिका निरन्तर मेरे गुप्तांग की रक्षा करें। तदन्तर काली को नमस्कार करे ॥१६॥

सप्ताक्षरी महाविद्या रूप कालिका समस्त मन्त्रों में अत्यन्त गुप्त हैं। ह्रीं-ह्रीं रूप कालिका मेरे दाहिनी ओर तथा हूं हूं रूप कालिका मेरे बायीं ओर कटि भाग की रक्षा करें ॥१७॥

दशाक्षर वाली विद्या तथा स्वाहा रूप काली मेरे दोनों ऊरु भाग की, ॐ क्रीं-क्रीं मे स्वाहा रूप कालिका मेरे घुटनों की रक्षा करें ॥१८॥

हृद्-नामक विद्या रूप यह काली धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुर्वर्ग रूप फल को देने वाली है। क्रीं-ह्रीं-ह्रीं रूप दक्षिण काली मेरे गुल्फ भाग की रक्षा करें ॥१९॥

क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा पदं पातु चतुर्दशाक्षरी मम ।
खड्ग-मुण्डधरा काली [1]वरदाभय[2]धारिणी ॥२०॥
विद्याभिः सकलाभिः सा सर्वाङ्गमभितोऽवतु ।
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी ॥२१॥
विप्रचित्ता तथोग्रोग्रप्रभा दीप्ता घनत्विषा ।
नीला घना बलाका च मात्रा मुद्रा मिता च माम् ॥२२॥

चतुर्दशाक्षरी क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा रूप काली मेरे पैरों की रक्षा करें। खड्ग-मुण्डधारी काली, वरद एवं अभयमुद्रा धारण करने वाली. ॥२०॥

सभी पूर्ण कलाओं से युक्त, समस्त विद्या रूपा कालिका मेरे सभी अंगों की चारों ओर से रक्षा करें। काली, कपालिनी, कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी, ॥२१॥

विप्रचित्ता तथा उग्रोग्रप्रभा, दीप्ता, घनत्विषा, नीला, घना, बलाका, मात्रा, मुद्रा, मिता ॥२२॥

---

१. मुद्राव्युत्पत्तिमाह तन्त्रे—
मोदनात् सर्वदेवानां द्रावणात् पापसन्ततेः ।
तस्मान्मुद्रेति विख्याता मुनिभिस्तन्त्रवेदिभिः ॥
तथा च—
योजनात् सर्वदेवानां द्रावणात् पापसंहतेः ।
तस्मान्मुद्रेति सा ख्याता सर्वकामार्थसाधिनी ॥
मुदं हर्षं राति ददातीति मुद्रा ।
अधः स्थितो दक्षहस्तः प्रसृतो वरमुद्रिका ।
अपि च—
दक्षिणहस्तमुत्तानं विधायाऽधः प्रसारयेत् ।
२. ऊर्ध्वीकृतो वामहस्तः प्रसृतोऽभयमुद्रिका ।

एताः सर्वाः खड्गधरा मुण्डमालाविभूषणाः ।
रक्षन्तु दिग्-विदिक्षु मां ब्राह्मी नारायणी तथा ॥२३॥
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चाऽपराजिता ।
वाराही नारसिंही च सर्वाश्चाऽमितभूषणाः ॥२४॥
रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु विदिक्षु मां यथा तथा ।
इति ते कथितं दिव्यं कवचं परमाद्भुतम् ॥२५॥
श्रीजगन्नमङ्गलं नाम महाविद्यौघविग्रहम् ।
त्रैलोक्याकर्षणं ब्रह्मन् ! कवचं मन्मुखोदितम् ॥२६॥
गुरुपूजां विधायाऽथ विधिवत् प्रपठेत्ततः ।
कवचं त्रिसकृद् वाऽपि यावज्जीवं च वा पुनः ॥२७॥

ये सभी खड्गधारिणी, मुण्ड-माला से विभूषित, दिशा-विदिशाओं में मेरी रक्षा करें। ब्राह्मी, नारायणी तथा ॥२३॥

माहेश्वरी, चामुण्डा, कौमारी और अपराजिता, वाराही, नारसिंही ये सभी अधिक भूषण धारण करने वाली देवी ॥२४॥

अपने-अपने शस्त्र से समस्त दिशा एवं विदिशाओं में मेरी रक्षा करें। हे भैरवि ! परमाश्चर्यकारी इस दिव्य कवच का मैंने आपके समक्ष वर्णन किया ॥२५॥

फलश्रुति—भैरव जी ने ब्रह्मा से कहा—हे ब्रह्मन् ! समस्त महाविद्या समूह विग्रह रूप एवं मेरे द्वारा कथित त्रैलोक्य-आकर्षण रूप 'श्रीजगन्मंगल' नामक कवच का ॥२६॥

विधि-विधान से सर्व-प्रथम गुरु-पूजन कर पाठ करे। यावज्जीवन त्रिकाल (तीनों समय) इस कवच का पाठ करे ॥२७॥

एतच्छताद्धं मावृत्य त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।
त्रैलोक्यं क्षोभयत्येव कवचस्य प्रसादतः ॥२८॥
महाकविर्भवेन्मासं सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
पुष्पाञ्जलिं कालिकायै मूलेनैवाऽर्पयेत् सकृत् ॥२९॥
शतवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ।
भूर्जे विलिखितं चैतत् स्वर्णस्थं धारयेद् यदि ॥३०॥
विशाखायां दक्षबाहौ कण्ठे वा धारयेद् यदि ।
त्रैलोक्यं मोहयेत् क्रोधात् त्रैलोक्यं चूर्णयेत् क्षणात् ॥३१॥
पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् नानाविद्यानिधिर्भवेत् ।
ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रस्पर्शनात्ततः ॥३२॥

पुनः इस कवच का पचास बार पाठ करने से साधक त्रैलोक्य-विजयी होता है। और इस कवच के प्रभाव से तीनों लोकों को शोभित कर देता है ॥२८॥

एक मास पाठ करने से समस्त सिद्धियों का स्वामी एवं महा-कवि बन जाता है। मूल मन्त्र द्वारा कालिका को एक बार पुष्पाञ्जलि प्रदान करने से ॥२९॥

सौ एवं हजार वर्ष पर्यन्त पूजा का फल प्राप्त करता है। यदि इस कवच को भोजपत्र पर लिखकर स्वर्ण में मढ़ा कर ॥३०॥

विशाखा नक्षत्र में दाहिनी भुजा अथवा कण्ठ में धारण करे तो वह साधक तीनों लोकों को मोहित कर लेता एवं क्रुद्ध होने से तत्क्षण तीनों लोकों को नष्ट कर देता है ॥३१॥

इस कवच को धारण करने वाला साधक पुत्रवान्, धनवान्; श्रीमान् तथा अनेक विद्या-विशारद होता है। उस साधक के शरीर के स्पर्श मात्र से अति भयंकर एवं अमोघ ब्रह्मास्त्रादि सभी शस्त्र ॥३२॥

नाशमायाति या नारी वन्ध्या वा मृतपुत्रिणी ।
बह्वपत्या जीवतोका भवत्येव न संशयः ॥३३॥
न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः ।
शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात् ॥३४॥
स्पर्द्धामुद्धय कमला वाग्देवी मन्दिरे सुखे ।
पौत्रान्तं स्थैर्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम् ॥३५॥
इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेद् घोरदक्षिणाम् ।
शतलक्षं प्रजप्त्वाऽपि तस्य विद्या न सिद्धयति ॥

नष्ट हो जाते हैं। इस कवच को धारण करने वाली बन्ध्या (बाँझ) अथवा मृत पुत्र वाली नारी निःसन्देह बहुत पुत्र वाली होती है ॥३३॥

इस कवच को अपने दीक्षित शिष्य के सिवा अन्य के शिष्यों एवं विशेष कर श्रद्धा-भक्तिहीन नास्तिक शिष्य को कभी भी न देवे। श्रद्धा-भक्तियुक्त शिष्य को ही प्रदान करे, अन्यथा इसके विपरीत आचरण करने से साधक मृत्यु को प्राप्त होता है ॥३४॥

कमला (लक्ष्मी), वाग्देवी (सरस्वती) परस्पर विरुद्ध होने पर भी इस कवच को धारण करने से स्पर्धा का परित्याग कर पौत्रान्त अर्थात् तीन पीढ़ी तक स्थिरतापूर्वक निश्चय ही साधक के पास निवास करती हैं ॥३५॥

इस कवच-ज्ञान के बिना जो साधक घोर दक्षिण काली का प्रयोग करता है उस साधक को सौ लाख बार कालिका मन्त्र जप करने पर भी सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकती। तथा हजारों बार

सहस्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥३६॥

इति काली-रहस्ये काली-कवचं समाप्तम् ।

कालिका-कवचम्

कैलास-शिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् ।
शङ्करं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम् ॥१॥

पार्वत्युवाच

भगवन् देवदेवेश ! देवानां भोगद प्रभो ! ।
प्रब्रूहि मे महादेव ! गोप्यं चेद् यदि हे प्रभो ! ॥२॥
शत्रूणां येन नाशः स्यादात्मनो रक्षणं भवेत् ।
परमैश्वर्यमतुलं लभेद् येन हि तद् वद ? ॥३॥

चोट-चपेट लगने से कष्ट प्राप्त करता है एवं अतिशीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है ॥३६॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी-व्याख्या सहित काली-रहस्य में काली-कवच समाप्त ।

देवाधिदेव जगद्गुरु महादेव जी जिस समय कैलास पर्वत पर बैठे हुए थे, उस समय पार्वती ने उनसे प्रश्न किया ॥१॥

पार्वती ने कहा—हे देवाधिदेव, समस्त देवताओं के भोग को प्रदान करने वाले, प्रभो ! महादेव, यदि यह प्रश्न समस्त देवताओं के लिए गोप्य हो तो भी मुझे कहिए (बतलाइए) ॥२॥

ऐसा कोई उपाय बताइए जिससे शत्रुओं का नाश एवं साथ-ही-साथ अपना भी रक्षण तथा अतुल ऐश्वर्य प्राप्त हो ॥३॥

भैरव उवाच

वक्ष्यामि ते महादेवि ! सर्वधर्मविदां वरे ।
अद्‌भुतं कवचं देव्याः सर्वकामप्रसाधकम् ॥४॥
विशेषतः शत्रुनाशं सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।
सर्वारिष्टप्रशमनं सर्वाभद्रविनाशनम् ॥५॥
सुखदं भोगदं चैव वशीकरणमुत्तमम् ।
शत्रुसङ्घाः क्षयं यान्ति भवन्ति व्याधिपीडिताः ॥६॥
दुःखिनो ज्वरिणश्चैव स्वाभीष्ट-द्रोहिणस्तथा ।
भोग-मोक्षप्रदं चैव कालिका-कवचं पठेत् ॥७॥

भैरव जी ने कहा—हे महादेवि ! आप तो समस्त धर्मों की ज्ञाता हो । अब मैं समस्त कामनाओं को सिद्ध करने वाला, देवी के अद्‌भुत कवच का वर्णन करता हूँ ॥४॥

उक्त कवच प्राणिमात्र की रक्षा करता है एवं समस्त अरिष्ट-नाशक, आधि, व्याधि-विध्वंसक तथा विशेष रूप से शत्रुओं का विनाश करने वाला है ॥५॥

यह देवी-कवच सुख एवं ऐश्वर्य को देने वाला, वशीकरण कारक तथा शत्रुओं को नष्ट करने वाला एवं शत्रुओं को व्याधि से पीड़ित करने वाला है ॥६॥

उसी प्रकार शत्रुओं को दुःख एवं ज्वर से पीड़ित करने वाला तथा कालिका-कवच पाठ करने वाले साधक के लिए समस्त सुख एवं मोक्ष प्रदायक है ॥७॥

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीकालिका-कवचस्य भैरव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीकालिका देवता, शत्रुसंहारार्थं जपे विनियोगः[१] ।

ध्यानम्

ध्यायेत् कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीम् ।
चतुर्भुजां ललज्जिह्वां पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥८॥

विनियोग—साधक को चाहिए कि, हाथ में जल लेकर—'ॐ अस्य श्रीकालिका-कवचस्य' यह वाक्य पढ़ कर पृथ्वी पर जल छोड़ दे ।

ध्यान—तीन नेत्र वाली, बहुरूपधारिणी, चतुर्भुजी, चन्द्रमुखी, लपलपाती जिह्वा वाली, महामाया काली का ध्यान करे ॥८॥

---

१. ऋषिच्छन्दोऽपरिज्ञानात् न मन्त्रः फलदो भवेत् ।
दौर्बल्यं याति मन्त्राणां विनियोगमजानताम् ॥
—बृहन्मत्स्य सूक्त

ऋषिच्छन्दो देवतानां विन्यासेन विना यदि ।
करोति साधको यच्च तत् सर्वं विफलं भवेत् ॥
—शाक्तानन्दतरङ्गिणी

आगमोक्तेन मार्गेण न्यासान् नित्यं करोति यः ।
देवताभावमाप्नोति मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥
यो न्यास-कवचच्छन्दो मन्त्रं जपति तं प्रिये ! ।
दृष्ट्वा विघ्नाः पलायन्ते सिंहं दृष्ट्वा यथा गजाः ॥
अकृत्वा न्यासजालं यो मूढात्मा कुरुते जपम् ।
विघ्नैः स बाध्यते नूनं व्याघ्रैर्मृगशिशुर्यथा ॥
—मेरुतन्त्र

नीलोत्पलदलश्यामां शत्रुसङ्घ-विदारिणीम् ।
नरमुण्डं तथा खड्गं कमलं च वरं तथा ॥९॥
निर्भयां रक्तवदनां दंष्ट्रालीं-घोररूपिणीम् ।
साट्टहासाननां देवीं सर्वदा च दिगम्बरीम् ॥१०॥
शवासनस्थितां कालीं मुण्डमाला-विभूषिताम् ।
इति ध्यात्वा महाकालीं ततस्तु कवचं पठेत् ॥११॥

कवचम्

ॐ कालिका घोररूपा सर्वकामप्रदा शुभा ।
सर्वदेव-स्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु मे ॥१२॥
ॐ ह्रींह्रींह्रींरूपिणीं चैव ह्रांह्रींह्रांरूपिणीं तथा ।
ह्रां ह्रीं क्षोंक्षौंस्वरूपा सा सदा शत्रून् विदारयेत् ॥१३॥

नीलकमल दल के समान कृष्ण वर्ण वाली, शत्रु-समुदाय की विनाशिनी, नरमुण्डधारिणी तथा खड्ग, कमल एवं मुद्राधारिणी, निडर (निर्भय), रक्त से सने मुख वाली, बड़े-बड़े दाँतों वाली, निरन्तर अट्टहास करने वाली, दिगम्बर (नग्न) स्वरूपिणी, शव (मुर्दे) के आसन पर विराजमान, मुण्डमालाओं से सुशोभित-ऐसी महाकाली का ध्यान कर साधक को चाहिए कि उसके बाद कवच का पाठ करे ॥९-११॥

कवच—घोर रूप वाली, समस्त ऐश्वर्य-प्रदायिनी तथा सभी देवों से स्तुत्य कालिका देवी, आप मेरे शत्रुओं का नाश करें ॥१२॥

ॐ ह्रीं, ह्रीं, ह्रीं तथा ह्रां, ह्रीं, ह्रां एवं ह्रां, ह्रीं; क्षों क्षौं बीज-रूपिणी कालिका देवी, आप निरन्तर मेरे शत्रुओं का संहार करें ॥१३॥

श्रीं ह्रीं ऐं रूपिणी देवी भवबन्ध-विमोचनी ।
हुँरूपिणो महाकाली रक्षाऽस्मान् देवि ! सर्वदा ॥१४॥
यया शुम्भो हतो दैत्यो निशुम्भश्च महासुरः ।
वैरिनाशाय वन्दे तां कालिकां शङ्करप्रियाम् ॥१५॥
ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च वाराही नारसिंहिका ।
कौमार्यैन्द्री च चामुण्डा खादन्तु मम विद्विषः ॥१६॥
सुरेश्वरी घोररूपा चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी ।
मुण्डमालावृताङ्गी च सर्वतः पातु मां सदा ॥१७॥
ह्रीं ह्रीं ह्रीं कालिके घोरे दंष्ट्रवि रुधिरप्रिये ! ।
रुधिरापूर्णवक्त्रे च रुधिरेणावृतस्तनि ॥१८॥

उसी प्रकार श्रीं ह्रीं ऐं बीजरूपिणी, भवबन्धविनाशिका तथा हुं बीज वाली महाकाली, आप सर्वदा मेरी रक्षा करें ॥१४॥

आपने ही दैत्य शुम्भ एवं महासुर निशुम्भ का वध किया था, ऐसी शंकरप्रिया कालिका को अपने शत्रुओं को विनष्ट करने के लिए मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५॥

आप ही ब्राह्मी, शैवी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, कौमारी, ऐन्द्री एवं चामुण्डारूपिणी हैं, अतः आप मेरे शत्रुओं का भक्षण कर लीजिए ॥१६॥

आप सुरेश्वरी, घोर रूपधारिणी, चण्डमुण्ड-विनाशिनी तथा मुण्डमाला-धारिणी हैं, अतः आप समस्त आपत्तियों से मेरी रक्षा करें ॥१७॥

हे ह्रीं ह्रीं ह्रीं रूपिणी कालिके !, घोर रूप वाली, दाँत एवं मुख तथा स्तन रुधिर से सनी हुई कालिके ! मैं अपने शत्रुओं को आपके लिए समर्पित करता हूँ ॥१८॥

'मम शत्रून् खादय खादय हिंस हिंस मारय मारय भिन्धि भिन्धि छिन्धि छिन्धि उच्चाटय उच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय शोषय स्वाहा। ह्रां ह्रीं कालिकायै मदीय-शत्रून् समर्पयामि स्वाहा।

ॐ जय जय किरि किरि किटि किटि कट कट मर्द मर्द मोहय मोहय हर हर मम रिपून् ध्वंस ध्वंस भक्षय भक्षय त्रोटय त्रोटय यातुधानान् चामुण्डे सर्वजनान् राज्ञो राजपुरुषान् स्त्रियो मम वश्यान् कुरु कुरु तनु तनु धान्यं धनं मेऽश्वान् गजान् रत्नानि दिव्यकामिनीः पुत्रान् राजश्रियं देहि यच्छ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्वाहा।'

इत्येतत् कवचं दिव्यं कथितं शम्भुना पुरा।
ये पठन्ति सदा तेषां ध्रुवं नश्यन्ति शत्रवः ॥१९॥

वैरिणः प्रलयं यान्ति व्याधिता वा भवन्ति हि।
बलहीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्य सर्वदा ॥२०॥

मन्त्र—'मम शत्रून् खादय-खादय' से 'क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्वाहा' पर्यन्त कालिका मन्त्र का स्वरूप है।

इस दिव्य कवच का निरूपण महादेव जी ने पहले ही किया था। जो भी प्राणी इस दिव्य कवच का पाठ करते हैं, निःसन्देह उनके शत्रुगण नष्ट हो जाते हैं ॥१९॥

उनके शत्रुगण रोगी, बलहीन, पुत्रहीन होते हैं और स्वतः नष्ट हो जाते हैं ॥२०॥

सहस्रपठनात् सिद्धिः कवचस्य भवेत्तदा ।
तत्कार्याणि च सिद्धयन्ति यथा शङ्करभाषितम् ॥२१॥
श्मशानाङ्गारमादाय चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।
पादोदकेन पिष्ट्वा तल्लिखेल्लोहशलाकया ॥२२॥
भूमौ शत्रून् हीनरूपानुत्तराशिरसस्तथा ।
हस्तं दत्त्वा तु हृदये कवचं तु स्वयं पठेत् ॥२३॥
शत्रोः प्राणप्रतिष्ठां तु कुर्यान्मन्त्रेण मन्त्रवित् ।
हन्यादस्त्रं प्रहारेण शत्रो ! गच्छ यमक्षयम् ॥२४॥
ज्वलदङ्गारतापेन भवन्ति ज्वरिता भृशम् ।
प्रोञ्छनैर्वामपादेन दरिद्रो भवति ध्रुवम् ॥२५॥

शंकर भगवान् के कहे अनुसार जो साधक एक सहस्र एक हजार) बार इस कवच का पाठ करता है, उसके समस्त कार्य अनायास सिद्ध हो जाते हैं ॥२१॥

श्मशान के चिता की प्रज्वलित अग्नि लेकर उसका चूरा बना ले, पुनः अपने पैर के जल से उसे पीसकर पृथ्वी पर अपने शत्रु के हीन स्वरूप को लोहे की लेखनी से लिख, उसका मस्तक उत्तर दिशा की ओर रखकर तथा उस शत्रु के हृदय-स्थल पर हाथ रख, स्वयं कालिका-कवच का पाठ करे और मन्त्र द्वारा अपने शत्रु की प्राण-प्रतिष्ठा कर अस्त्र प्रहार करता हुआ कहे कि, 'हे मेरे शत्रु ! तुम यमराज के घर जाओ अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हो' ॥२२-२४॥

यदि उस अवस्था में अपने शत्रु को प्रज्वलित अग्नि से तपाया जाय, तो वह शत्रु रोगी हो जाता है और उसका बायाँ पैर पोंछने पर वह शत्रु निश्चय ही दरिद्र हो जाता है ॥२५॥

वैरिनाशकरं प्रोक्तं कवचं वश्यकारकम् ।
परमैश्वर्यदं चैव पुत्र-पौत्रादि-वृद्धिदम् ॥२६॥
प्रभातसमये चैव पूजाकाले च यत्नतः ।
सायङ्काले तथा पाठात् सर्वसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥२७॥
शत्रुरुच्चाटनं याति देशाद् वा विच्युतो भवेत् ।
पश्चात् किङ्करतामेति सत्यं सत्यं न संशयः ॥२८॥
शत्रुनाशकरे देवि ! सर्वसम्पत्करे शुभे ! ।
सर्वदेवस्तुते देवि कालिके ! त्वां नमाम्यम् ॥२९॥

इति काली-रहस्ये रुद्रयामलोक्तं कालिका-कवचं सम्पूर्णम् ।

फलश्रुति—उक्त कवच विशेषकर शत्रु-नष्टकारक एवं समस्त प्राणि-मात्र को वश में करने वाला, परम ऐश्वर्य-प्रदायक एवं पुत्र-पौत्रादि को बढ़ाने वाला है ॥२६॥

प्रातःकाल तथा पूजन के समय और सायंकाल इस कवच का पाठ करने से समस्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ॥२७॥

इस कवच का पाठ करने से निश्चय ही शत्रु का उच्चाटन अथवा जिस देश में वह रहता है, उस देश से उसका निष्कासन होता है और वह शत्रु साधक का सेवक बन जाता है ॥२८॥

हे शत्रुविनाशिनी, समस्त सौभाग्य-प्रदायिनी, समस्त देवताओं से स्तुत्य, कालिके ! आपको मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ ॥२९॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री कृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित काली-रहस्य में रुद्रयामलोक्त कालिका-कवच समाप्त ।

कर्पूरस्तोत्रम्

विनियोग:

ॐ अस्य श्रीकर्पूरस्तवराजस्य महाकाल ऋषि:, गायत्री छन्द:; श्रीदक्षिणकालिका देवता, हलो बीजानि, स्वरा: शक्तय:, अव्यक्तं कीलकं, श्रीदक्षिणकालिका-देवताप्रसादसिद्ध्यर्थं तत्तत्कामनासिद्धये वा विनियोग: ।

कर्पूरं मध्यमा-ऽन्त्य-स्वर-पररहितं सेन्दुवामाक्षियुक्तं
बीजं ते मातरेतत् त्रिपुरहरवधु ! त्रिष्कृतं ये जपन्ति ।
तेषां गद्यानि पद्यानि च मुखकुहरादुल्लसन्त्येव[1] वाच:
[2]स्वच्छन्दं ध्वान्त-धाराधर-रुचिरुचिरे सर्वसिद्धिं गतानाम् ।१।

हे माता, हे त्रिपुर हरवधु ! हे कृष्णमेघ के समान काले वर्ण-वाली भगवति, 'कर्पूर' शब्द के मध्य एवं अन्त्य व्यञ्जन (प एवं र) तथा उसमें लगे हुए स्वर-पकार के अकार तथा र के अकार से अलग करके अर्थात् 'क्र' शब्द के आगे इन्दु (अनुस्वार), वामाक्षि दीर्घ ईकार से युक्त कर 'क्रीं' इस मन्त्र का जो तीन बार जप करते हैं उनके मुख-विवर से अनायास ही गद्य एवं पद्य का स्वच्छन्द स्फुरण होने लगता है और उन्हें अणिमादि सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं ॥१॥

---

१. 'दुल्लसन्तोऽव वाच:' इति क्वचित्पुस्तके ।

२. 'स्वच्छन्द-ध्वान्त-' इति च पाठ: ।

ईशानः सेन्दुवाम-श्रवणपरिगतो[1] बीजमन्यन् महेशि !
द्वन्द्वं ते मन्दचेता यदि जपति जनो वारमेकं कदाचित् ।
जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं [2]मोहयन्नम्बुजाक्षी-
वृन्दं चन्द्रार्धचूडे प्रभवति स[3] महाघोरशावावतंसे ॥२॥
ईशो वैश्वानरस्थः शशधर-विलसद् वामनेत्रेण युक्तो[4]
बीजं ते द्वन्द्वमन्यद् विगलित-चिकुरे कालिके ये जपन्ति ।
द्वेष्टारं घ्नन्ति[5] ते च त्रिभुवनमभितो[6] वश्यभावं नयन्ति
सृक्क-द्वन्द्वास्र[7]-धाराद्वयधर-वदने दक्षिणे कालिकेति ॥३॥

हे महेशि, हे चन्द्रार्धचूडे, हे महाभयानक बाल-शव का कर्ण-भूषण धारण करने वाली, हे भगवती, ईशान-हकार उसमें विन्दु तथा वाम श्रवण अर्थात् 'ऊँ' लगाकर अर्थात् 'हूँ हूँ' इसको दो बार उच्चारण कर अर्थात् 'हूँ-हूँ' इस मन्त्र को यदि मूर्ख भी एक बार जप करे तो वह शास्त्रार्थ में बृहस्पति, धन में कुबेर को भी जीतने में समर्थ हो जाता है और समस्त सुन्दरी-वृन्दों को भी मोह लेने में पूर्ण समर्थ होता है ॥२॥

ईश 'हकार', वैश्वानर 'रेफ' को, शशधर, 'अनुस्वार' एवं वाम नेत्र 'ईकार' से युक्त कर अर्थात् 'ह्रीं' इस बीजमन्त्र को दो बार अर्थात् 'ह्रीं-ह्रीं' का जो लोग जप कर लेते हैं, वे शत्रु का वध कर सकते हैं तथा हे विस्रस्त केशों वाली, हे ओष्ठप्रान्तों में निरवच्छिन्न रक्त की दो धाराओं को धारण करने वाले मुख वाली, हे दक्षिणकालिके मातः ! बहुत क्या कहें, 'ह्रीं' इस मन्त्र का जप करने वाला पुरुष समस्त त्रिलोकी को अपने वश में कर लेने का सामर्थ्य रखता है ॥३॥

१. 'परिगतं' इति । २. 'मोहत्यम्बुजाक्षी' इति । ३. 'घोररावावतंसे' इति वा पाठः । ४. 'युक्तं' इति च पाठः । ५. 'निहन्ति' । ६. '-मसिते' इति । ७. 'स्त्र' इति ।

ऊर्ध्वं वामे कृपाणं करकमलतले[1] छिन्नमुण्डं ततोऽधः[2]
सव्येऽभीतिं[3] वरं च त्रिजगदघहरे दक्षिणे कालिके च।
जप्त्वैतन् नामयें[4] वा तव [5]विमलतनुं [6]भावयन्त्येतदम्ब!
तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटितरदने[7] सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य ॥४॥
वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरतिललितं तत् त्रयं कूर्चयुग्मं
लज्जाद्वन्द्वं च पश्चात् स्मितमुखि तदधष्ठद्वयं योजयित्वा।
मातर्ये त्वां जपन्ति स्मरहरमहिले भावयन्तः स्वरूपं
ते लक्ष्मी-लास्यलीला-कमलदलदृशः कामरूपा भवन्ति ।५।

हे प्रकटितवदने (विस्तृतमुख वाली), हे त्रिजगदघहरे ! (तीनों लोकों के पाप को नष्ट करने वाली), हे माता, ऊपर के बायें हाथ में कृपाण तथा नीचे के बायें हाथ में छिन्न मुण्ड तथा ऊपर के दाहिने हाथ में अभय एवं नीचे के दाहिने हाथ में वरमुद्रा धारण किये हुए, तुम्हारे रूप का ध्यान कर जो साधक 'दक्षिणे कालिके' इस मन्त्र का जप करते हैं, वे शिव की आठों अणिमादि-सिद्धियों को प्राप्त करने में समर्थ हो जाते हैं ॥४॥

हे मन्द मुसकान वाली, हे स्मरहरमहिले ! (शिवप्रिये), वर्ग का आदि अक्षर 'ककार' उसे वह्नि 'रेफ' से युक्त कर, उस पर विधुरति-ललित 'ईकार' तथा 'अनुस्वार' की मात्रा लगाकर 'क्रीं' मन्त्र के तीन बार उच्चारण करने के पश्चात् कूर्चयुग्म 'हूँकार द्वय' तथा लज्जाद्वन्द्व 'ह्रींकार' के पश्चात् दो ठ, उसके पश्चात् स्वाहा लगाकर अर्थात् 'क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ठं ठं स्वाहा' इस मन्त्र का जो लोग तुम्हारा ध्यान करते हुए जप करते हैं, वे अपने दृष्टि के प्रक्षेप-मात्र से लक्ष्मी को जहाँ-तहाँ नचाते रहते हैं। बहुत क्या कहें, वे इच्छानुसार रूप धारण करने में समर्थ हो जाते हैं ॥५॥

१. 'करतलकमले' इति। २. 'तथाधः' इति। ३. 'भीतिं' इति च। ४. 'वर्णं' इति। ५. 'मनुविभवं' इति। ६. 'भावयन्तस्तदर्थं' इति। ७. 'वदने' इति।

प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परं बीजमत्यन्तगुह्यं
त्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा[1] भावयन्तो जपन्ति ।
तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला वस्त्रशुभ्रांशुबिम्बे
वाग्देवी, [2]देवि! मुण्ड-स्रगतिशय-लसत्-कण्ठि-पीनस्तनाढ्ये ।६
गतासूनां बाहु-प्रकरकृतकाञ्ची-परिलसन्
नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभुवनविधात्रीं त्रिनयनाम् ।
श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि महाकालसुरत-
प्रसक्तां त्वां ध्यायन् जननि जड़चेता अपि कविः ॥७॥

हे मुण्डमाला से विभूषित कण्ठ वाली, हे पीन स्तनों वाली भगवति कालिके ! उपर्युक्त कहे गये 'ॐ क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं' इन सात अक्षर वाले बीज मन्त्र के प्रथम भाग केवल 'ॐ क्रीं क्रीं क्रीं' अथवा दो भाग 'क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ' अथवा तीन भाग 'ॐ क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं' इन तीन भागों के साथ तुम्हारा नाम 'दक्षिणे कालिके स्वाहा' लगाकर जो लोग इस परम गुह्य मन्त्र का जप करते हैं, उनके नेत्रारविन्द में लक्ष्मी विहार करती हैं, तथा चन्द्रमण्डल के सदृश उनके मुख में वाग्देवी निवास करती हैं ॥६॥

हे मातः, यदि श्मशान के शय्या पर शव के हाथों की बनी हुई काञ्ची को नितम्बस्थल पर धारण करने वाली वस्त्ररहित, त्रिलोक की सृष्टि में समर्थ, त्रिनेत्रयुक्त और शव के हृदय पर महाकाल के साथ सुरत में प्रसक्त तुम्हारे इस रूप का जड़ प्रकृति का महामूर्ख भी ध्यान करे, तो वह महाकवि हो जाता है ॥७॥

---

१. 'भाववन्तो' इति । २. 'दिव्य'- इति ।

शिवाभिर्घोराभिः शवनिवह-मुण्डास्थि-निकरैः
परं सङ्कीर्णायां प्रकटितचितायां हरवधूम् ।
प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरिसुरतेनातियुवतीं
सदा त्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः ।।८।।

वदामस्ते किं वा जननि ! वयमुच्चैर्जड़धियो
न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम् ।
तथापि त्वद्भक्तिर्मुखरयति [1]चास्माननमिते
तवेतत् क्षन्तव्यं[2] न खलु पशुरोषः समुचितः ।।९।।

हे माता, भयङ्कर शृगालियों से व्याप्त तथा मुर्दों के मुण्ड एवं हड्डियों से युक्त, श्मशान में जलती हुई चिता के मध्य में प्रविष्ट हुई शान्त चित्त वाली, विपरीत रति से सन्तुष्ट होने वाली, युवतिरूप से सम्पन्न तुम्हारे रूप का जो लोग ध्यान करते हैं, उनका पराभव कभी नहीं होता ।।८।।

हे मातः ! ब्रह्मा, विष्णु तथा सदाशिव भी तुम्हारे जिस परम तत्त्व को नहीं जानते, फिर उसे मेरे जैसा महामन्द मति भला किस प्रकार जान सकता है ? फिर भी, हे भगवति ! तुम्हारी भक्ति ही मुझे तुम्हारी स्तुति के लिए विवश करती है, अतः मेरे इस अपराध को क्षमा कीजिए, क्योंकि मेरे जैसे अज्ञ जीव पर तुम्हारा क्रोध करना उचित नहीं है ।।९।।

१. 'चास्माकमसिते' इत्यपि पाठः । २. 'क्षन्तव्यो' इति ।

समन्तादापीन-स्तन-जघन - [1]दृग्यौवनवती-
रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम् ।
विवासास्त्वां ध्यायन् गलित-चिकुरस्तस्य वशगाः
समस्ताः सिद्धौघा भुवि चिरतरं जीवति कविः ॥१०॥
समाः[2] स्वस्थीभूतां[3] जपति विपरीतां यदि सदा
विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशय-महाकाल-सुरताम् ।
तदा तस्य क्षोणीतल-विहरमाणस्य विदुषः
कराम्भोजे वश्या [5]हरवधु महासिद्धिनिवहाः ॥११॥
प्रसूते संसारं जननि ! जगतीं पालयति च[6]
समस्तं क्षित्यादि प्रलयसमये संहरति च ।

हे भगवति, रात्रि के समय वस्त्ररहित एवं बिखरे केशों वाला जो भक्त पीन स्तन एवं पीन जघन वाली युवती स्त्री से संभोग करता हुआ तुम्हारा ध्यान कर तुम्हारे मन्त्र का जप करे तो उसके वश में सभी सिद्धियाँ होती हैं, और वह कवि एवं चिरञ्जीवि होता है ॥१०॥

हे शिवप्रिये, महाकाल से विपरीत रति में प्रसक्त तुम्हारे रूप का ध्यान करता हुआ जो भक्त तुम्हारे मन्त्र का संवत्सर पर्यन्त अथवा सदैव जप करता है, समस्त पृथ्वी तल में विहार करने वाले उस विद्वान् भक्त के हाथ में समस्त महासिद्धियाँ वशीभूत हो जाती हैं। इससे अधिक और क्या कहें ? ॥११॥

हे माता, समस्त संसार को आप उत्पन्न करतीं, पालन करतीं एवं संहार करती हैं, इसीलिए ब्रह्मा, तीनों लोक के पति विष्णु और

१. 'धृग्यौवन-' इति । २. 'समः' इति । ३. 'भूतो' इति ।
४. 'विपरीतो' इति । ५. स्मरहरवधू' इत्यपि पाठः । ६. 'वा' इति ।

अतस्त्वां धाताऽपि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि
महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं[1] स्तौति भवतीम् ॥१२॥
अनेके सेवन्ते भवदधिक-गीर्वाण-निवहान्[2]
विमूढास्ते मातः ! किमपि नहि जानन्ति परमम् ।
समाराध्यामाद्यां हरि-हर-विरञ्च्यादि-विबुधैः
प्रपन्नोऽस्मि स्वैरं रतिरस-महानन्द-निरताम् ॥१०॥
धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं
त्वमेका कल्याणी गिरिशरमणी कालि सकलम् ।
स्तुतिः का ते मातर्निजकरुणया मामगतिकं
प्रसन्ना त्वं भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः ॥१४॥

शंकर भी प्रायः आपकी स्तुति करते हैं। जब ये तीनों देव आपके एक-एक अंश की स्तुति करते हैं, फिर मैं सर्व-शक्तिसम्पन्न आपकी किस प्रकार स्तुति करने में समर्थ हो सकता हूँ ॥१२॥

हे माता, अनेक लोग देवताओं को तुम्हारे से अधिक जान कर उनकी सेवा करते हैं, वे लोग महामूर्ख हैं, कुछ भी नहीं जानते, अतः दुर्बुद्धि हैं। पर मैं तो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवादि देवताओं से समाराधन के योग्य आदि एवं रति रस रूप महान् आनन्द में निरत आपकी शरण में स्वच्छन्द होकर आया हूँ ॥१३॥

हे माता, तुम पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा गगन रूप वाली हो, इस प्रकार हे गिरीशरमणि, हे कालि ! संसार के सभी पदार्थ भी तुम्हीं हो। मैं तुम्हारी स्तुति करने में किस प्रकार समर्थ हो सकता हूँ। हे मातः ! अशरण मुझ पर करुणा करके तुम प्रसन्न हो जाओ, जिससे मेरा जन्म पुनः इस संसार में न हो ॥१४॥

---

१. 'स्तौमि' इति वा पाठः । २. 'निवहा' इति ।

श्मशानस्थः स्वस्थो गलितचिकुरो दिक्पटधरः
सहस्रं त्वर्काणां निजगलितवीर्येण कुसुमम् ।
जपंस्तत्[1] प्रत्येकं मनुमपि तव ध्याननिरतो
महाकालि ! स्वैरं स भवति धरित्री परिवृढः ॥१५॥
गृहे संमार्जन्या परिगलितवीर्यं हि चिकुरं[2]
समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने ।
समुच्चार्य प्रेम्णा मनुमपि सकृत् कालि ! सततं
गजारूढो याति क्षितिपरिवृढः सत्कविवरः ॥१६॥
स्वपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मन्दिरमहो
पुरो ध्यायन् ध्यायन् [3]यदि जपति भक्तस्तव मनुम् ।

हे माता, श्मशान में निवास करता हुआ, विवस्त्र एवं विखरित केशों वाला होकर जो भक्त स्वस्थ चित्त से अपने वीर्य से युक्त (हजार) मन्दार पुष्पों से ध्यान करता हुआ तुम्हारे प्रति पुष्प मन्त्र द्वारा हजार आहुति देता है। वह इस पृथ्वी तल का राजा बन जाता है ॥१५॥

हे कालि ! मङ्गलवार के दिन जड़ से केश को उखाड़ कर संमार्जनी (झाड़ू) के साथ अपने वीर्य से उसे युक्त कर चिता में तुम्हारे मन्त्र का उच्चारण करता हुआ प्रेम के साथ एक बार भी हवन कर देता है, तो वह साधक मस्त हाथी पर सवार हो जाता है। तथा सत्कवि एवं राजा हो जाता है ॥१६॥

जो भक्त ऋतु से युक्त योनि का ध्यान करता हुआ भक्तिपूर्वक तुम्हारे मन्त्र का जप करता है। अहा ! बड़े आश्चर्य की बात है कि

१. 'त्वत्' इति । २. 'कुसुमं' इति । ३. 'जपति यदि' इति च पाठः ।

स गन्धर्वश्रेणीपतिरपि कवित्वामृतनदी-
नदीनः पर्यन्ते परमपदलीनः प्रभवति ॥१७॥
त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां
महाकालेनोच्चैर्मदनरस-लावण्य-निरताम् ।
समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो
जनो यो ध्यायेत्त्वामपि जननि! स स्यात् स्मरहरः ॥१८॥
सलोमास्थि स्वैर पललमपि मार्जारमसिते !
परं [1]वौष्ट्र मैष नरमहिषयोश्छागमपि वा ।
बलिं ते पूजायामपि वितरतां मर्त्यवसतां
सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति ॥१९॥

वह गाने में गन्धर्वों का पति हो जाता है एवं कविता रूप अमृत नदियों का वह समुद्र के समान पति बन जाता है। तथा मरण काल में वह भगवती महाकाली के परम पद को प्राप्त करता है ॥१७॥

हे माता! पञ्चदश कोण के पीठ में शवरूपी शिव के हृदय पर महाकाल के साथ रत्यानन्द में आसक्त एवं मन्द हास से युक्त मुख-वाली तुम्हारे रूप का ध्यान स्वयं एकाग्र मन से जो भक्त रात्रि में स्वयं रत्यानन्द में आसक्त होकर करते हैं, वे भक्त साक्षात् शिव हो जाते हैं ॥१७॥

हे असिते, तुम्हारे पूजा में मार्जार, उष्ट्र, मेष, नर, महिष एवं छाग के लोम एवं हड्डियों के सहित मांस की बलि, स्वच्छन्दता से करने वाले मनुष्यों को प्रतिदिन अपूर्व सिद्धि प्राप्त होती रहती है ॥१९॥

१. 'च्चौष्ट्रं मेषं' इति ।

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो
　　दिवा मातर्युष्मच्चरण - [1]कमलध्यान-निरतः ।
परं नक्तं नग्नो निधुवन-विनोदेन च मनुं
　　[2]जपेल्लक्षं स स्यात् स्मरहरसमानः क्षितितले ॥२०॥

इदं स्तोत्रं मातस्तव मनुसमुद्धारणमनु[3]
　　स्वरूपाख्यं पादाम्बुज-युगल-पूजाविधि-युतम् ।
निशार्धे वा पूजासमयमधि वा यस्तु पठति
　　प्रलापस्तस्याऽपि प्रसरति कवित्वामृतरसः ॥२१॥

हे माता, जो साधक हविष्य (खीर) भोजन कर दिन में तुम्हारे चरण-कमल का ध्यान करता हुआ तुम्हारे मन्त्र का एक लक्ष (एक लाख) जप करता है तथा रात्रि में भी नंगा होकर रतिक्रीडा में आसक्त रहता हुआ तुम्हारे मन्त्र का एक लाख जप करता है वह साधक इस पृथ्वी तल पर निश्चय ही शिव के समान योगीश्वर हो जाता है ॥२०॥

हे माता ! जो साधक मन्त्रोद्धारपूर्वक तुम्हारे युगल-चरणों की सविधि पूजा एवं ध्यान करते हुए इस स्वरूपाख्य नामक स्तोत्र का पाठ महानिशा (अर्धरात्रि) में अथवा पूजा के समय करते हैं उनके मुख से निकला हुआ अनर्थक प्रलाप भी कवित्वरूप अमृत रस से परिपूर्ण रहता है ॥२१॥

---

१. 'युगल-' इति । २. 'जनो लक्षं सम्यक्' इति क्वचित्पुस्तके ।
३. 'जप-' इति । ४. 'मथवा' इति ।

कुरङ्गाक्षीवृन्दं तमनुसरति प्रेमतरलं
वशस्तस्य क्षोणीपतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः ।
रिपुः कारागारं कलयति च तं केलिकलया
चिरं जीवन्मुक्तः प्रभवति[2] स भक्तः प्रतिजनुः ॥२२॥

इति काली-रहस्ये श्रीमहाकालप्रणीतं कर्पूरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

इस स्तोत्र का पाठ करने वाले साधक के पीछे-पीछे तरुणी-वृन्दों का समूह प्रेम-रस से उन्मत्त होकर चलता है। कुबेर के समान धनी राजा भी उसके वश में हो जाते हैं तथा उसके प्रतापी शत्रु भी कारागार में विलाप करते हैं। वह केलिकला से युक्त होकर बहुत काल पर्यन्त जीता है और जीता हुआ भी वह जीवन्मुक्त हो जाता है ॥२२॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित काली-रहस्य में
कर्पूरस्तोत्र समाप्त ।

१. 'तत्' इत्यपि पाठः । २. 'स भवति सुभक्तः' इति पाठः ।

काली-स्तोत्रम्

प्राग्-देहस्थो यदाऽहं तव चरणयुगं नाश्रितो नार्चितोऽहं
तेनाद्याकीर्तिवर्गै-र्जठरज-दहनैर्बाध्यमानो बलिष्ठैः ।
क्षिप्त्वा जन्मान्तरान्नः पुनरिह भविता क्वाश्रयः क्वाऽपि सेवा
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥१॥
बाल्ये बालाऽभिलाषै-र्जड़ित-जड़मति-र्बाललीलाप्रसक्तो
न त्वां जानामि मातः ! कलिकलुषहरां भोग-मोक्षप्रदात्रीम् ।
नाचारो नैव पूजा न च यजनकथा न स्मृतिर्नैव सेवा
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥२॥

हे माता ! जब मैं पूर्व जन्म में था, तब आपके दोनों चरण-कमल का आश्रय नहीं ग्रहण किया, एवं आपका पूजन भी नहीं किया, इसी कारण तो नव मास-पर्यन्त माता के जठर (पेट) की भयंकर ज्वाला में दग्ध हुआ था। तदनन्तर अन्य जन्म धारण करने पर पुनः आपकी सेवा, अर्चना आदि मैं कर सकता हूँ या नहीं ? अतः प्रकटितवदन, कामरूप, विकराल-कालिके ! मेरे अपराध को क्षमा करो ॥१॥

बाल्यावस्था में मैं बाल्य-चंचलता से युक्त, मूर्ख तथा निरन्तर बाल्य चरित्र में प्रवृत्त था। हे माता ! कलियुग के कलुष (पाप) को नष्ट करने वाली, भोग-मोक्ष-प्रदायिनी, ऐसे आपको मैंने नहीं पहचाना। आपका विधि-विधान से पूजन, यज्ञ एवं कथा और आपका स्मरण तथा सेवा भी नहीं की। अतः हे माता ! प्रकटित वदन, कामरूप, विकरालकालिके ! मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥२॥

प्राप्तोऽहं यौवनं चेद् विषधर-सदृशैरिन्द्रियैर्दष्टगात्रो
नष्टप्रज्ञः परस्त्री-परधन-हरणे सर्वदा साऽभिलाषः ।
त्वत्पादाम्भोजयुग्मं क्षणमपि मनसा न स्मृतोऽहं कदापि
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥३॥
प्रौढा भिक्षाभिलाषी सुत-दुहितृ-कलत्रार्थमन्नादिचेष्टः
क्व प्राप्स्ये कुत्र यामीत्यनुदिनमनिशं चिन्तया भग्नदेहः ।
नो ते ध्यानं न चास्था न च भजनविधिर्नामसंकीर्त्तनं वा
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥४॥

हे माँ ! जब मैं युवा अवस्था को प्राप्त हुआ तब भयंकर विषधर (सर्प) के समान इन्द्रियादिकों के द्वारा अपना शरीर डंसा दिया । तथा मेरी बुद्धि नष्ट हो गयी, और मैं पर-स्त्री एवं पर-धन हरण में ही सर्वदा तत्पर रहा । मैंने आपके दोनों चरण-कमल का एक क्षण भी अन्तःकरण से स्मरण नहीं किया । इसलिए हे जननि ! प्रकटितवदन, कामरूप, विकरालकालिके ! मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥३॥

जिस समय, मैं प्रौढ़ अवस्था को प्राप्त हुआ, उस समय पुत्र, कन्या एवं पत्नी के लिए अन्न, द्रव्यादि की प्राप्ति में प्रवृत्त हुआ । किस उपाय से धन प्राप्त करूँ और कहाँ जाऊँ ? इस प्रकार के प्रतिदिन की चिन्ता से मेरा शरीर टूट गया । इतना कष्ट पाने पर भी मैंने आपका ध्यान, आपमें आस्था एवं आपका भजन-कीर्तन नहीं किया । एतदर्थ हे माता कालिके ! मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥४॥

वृद्धत्वे बुद्धिहीनः कृशविवशतनुः श्वास-कासातिसारैः
कर्मानर्होऽक्षिहीनः प्रगलितदशनः क्षुत्पिपासाभिभूतः ।
पश्चात्तापेन दग्धो मरणमनुदिनं ध्येयमात्रं न चाऽन्यत्
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥५॥
कृत्वा स्नानं दिनादौ क्वचिदपि सलिलं नो कृतं नैव पुष्पं
ते नैवेद्यादिकं च क्वचिदपि न कृतं नाऽपि भावो न भक्तिः ।
न न्यासो नैव पूजा न च गुणकथनं नाऽपि चाऽर्चा कृता ते
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥६॥
जानामि त्वां न चाऽहं भव-भयहरणीं सर्वसिद्धिप्रदात्रीं
नित्यानन्दोदयाढ्यां त्रितयगुणमयीं नित्यशुद्धोदयाढ्याम् ।

जिस समय मेरी वृद्धावस्था आयी, उस समय मैं बुद्धिहीन, शक्तिहीन एवं कृश तनु, श्वास, कास रोग से पीड़ित, शुभकर्म करने में अयोग्य, अक्षिहीन (अन्धा) तथा दांतों से हीन, निरन्तर भूख-प्यास से पीड़ित, पश्चात्ताप से दुःखी, निरन्तर प्रतिदिन एकमात्र अपनी मृत्यु की कामना करने वाला हुआ । अतः भयंकर रूपधारिणि माँ कालिके ! आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥५॥

प्रातःकाल स्नान-आदि क्रिया से निवृत्त होकर मैंने, न तो कभी आपको स्नान, पुष्प, नैवेद्य आदि से आपकी भाव-भक्ति भी नहीं की । एवं हृदयादि न्यास, पूजन-अर्चन, गुणानुवाद आदि कभी भी नहीं की । अतः हे माँ कालिके ! मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥६॥

प्रतिदिन चारो ओर अनेक दुःखों से पीड़ित, मिथ्या कर्म में प्रवृत्त, मैंने संसार के भय को नष्ट करने वाली, सभी अणिमादि सिद्धि को देने वाली, नित्य आनन्दोदय स्वरूपिणी, सत्त्व, रज, तम-

मिथ्याकर्माभिलाषैरनुदिनमभितः पीड़ितो दुःखसङ्घैः
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥७॥
कालाभ्रां श्यामलाङ्गीं विगलितचिकुरां खड्गमुण्डाभिरामां
त्रासत्राणेष्टदात्रीं कुणपगणशिरोमालिनीं दीर्घनेत्राम् ।
संसारस्यैकसारं भवजननहरां भावितो भावनाभिः
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥८॥
ब्रह्मा विष्णुस्तथेशः परिणमति सदा त्वत्पदाम्भोजयुग्मं
भाग्याभावान्न चाऽहं भवजननि भवत्पादयुग्मं भजामि ।
नित्यं लोभ-प्रलोभैः कृतवशमतिः कामुकस्त्वां प्रयाचे
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥९॥

गुणरूपा, त्रिगुणात्मिका, नित्य शुद्ध स्वरूप ऐसे आपको नहीं जाना। इसलिए हे माता कालिके ! मेरे इस अपराध को क्षमा करें ।।७।।

कृष्ण वर्णवाले मेघ के समान, श्यामाङ्गी, बिखरे बालों वाली, खड्गमुण्ड से सुशोभित भयानक कष्ट से रक्षा करने वाली अपने मस्तक पर कुणप धारण करने वाली, लम्बी नेत्र वाली, संसार के एक-मात्र सारभूत, भवजनन-हारिणि अर्थात् मोक्ष देने वाली, भावना-मात्र से प्रसन्न होने वाली हे माता कालिके ! आप मेरे अपराध को क्षमा करें ।।८।।

आपके दोनों चरण-कमल की सेवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश निरन्तर करते रहते हैं। हे भवजननि ! भाग्यहीन होने के कारण मैं आपके चरण-कमल की सेवा नहीं कर सका। मैं अत्यन्त कामुक हूँ तथा काम, क्रोध, लोभादि के अधीन बुद्धि वाला हूँ। अतः मैं आप से यही याचना करता हूँ कि हे माँ ! आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें ।।९।।

रागद्वेषैः प्रमत्तः कलुषयुततनुः कामनाभोगलुब्धः
कार्याऽकार्याविचारी कुलमतिरहितः कौलसङ्घैर्विहीनः ।
क्व ध्यानं ते क्व चाऽर्चा क्व च मनु जपन्नैव किञ्चित् कृतोऽहं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥१०॥
रोगी दुःखी दरिद्रः परवशकृपणः पांशुलः पापचेता
निद्रालस्यप्रसक्तः सुजठरभरणे व्याकुलः कल्पितात्मा ।
किं ते पूजाविधानं त्वयि क्व च नुमतिः क्वानुरागः क्व चास्था
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥११॥
मिथ्याव्यामोहरागैः परिवृतमनसः क्लेशसङ्घान्वितस्य
क्षुन्निद्रौघान्वितस्य स्मरणविरहिणः पापकर्मप्रवृत्तेः ।

मैं राग-द्वेष से मदोन्मत्त, पापी, निरन्तर कामना के भोग में लिप्त, कार्याकार्य (करने-न-करने) से अनभिज्ञ, अकुलीन, अपने स्वजन (कुटुम्ब) वर्ग से रहित हूँ। इसीलिए तो आपका ध्यान, पूजन, जप आदि से रहित हूँ। इसलिए हे माँ! आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥१०॥

मैं रोगी, दुःखी, दरिद्र, पराधीन, व्यभिचारी, पापी, निद्रा, आलस्य से युक्त, एकमात्र अपने उदर-भरण करने में ही प्रवृत्त हूँ। तभी तो आपके पूजन में मेरी बुद्धि, प्रेम, अनुराग एवं आस्था नहीं है, अतः हे माँ कालिके! मेरे इस अपराध को आप क्षमा करें ॥११॥

मिथ्या व्यामोहादि राग से युक्त चित्त वाले, क्लेश-समूह से पीड़ित, क्षुधा, निद्रा से पीड़ित, आपके स्मरण से हीन, पाप कर्म में प्रवृत्त, हे

दारिद्रचस्थ क्व धर्मः क्व च जननि रुचिः क्व स्थितिः साधुसङ्घैः
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ।।१२।।
मातस्तातस्य देहज्जननि जठरगः संस्थितस्त्वद्वशेऽहं
त्वं हर्त्री कारयित्री करणगुणमयी कर्महेतु-स्वरूपा ।
त्वं बुद्धिश्चित्तसंस्थाऽप्यहमतिभवती सर्वमेतत् क्षमस्व
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ।।१३।।
त्वं भूमिस्त्वं जलं च त्वमसि हुतवहस्त्वं जगद्वायुरूपा
त्वं चाऽऽकाशं मनश्च प्रकृतिरसि महत्पूर्विका पूर्वपूर्वा ।
आत्मा त्वं चाऽसि मातः ! परमसि भवती त्वत्परं नैव किञ्चित्
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ।।१४।।

जननि ! ऐसे मुझ दरिद्र का न तो कोई धर्म है, न आप में प्रेम और न सज्जनों की संगति में प्रवृत्त हूँ। अतः हे माता कालिके ! आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें ।।१२।।

हे माता ! पिता के देह-द्वारा माता के उदर (पेट) में स्थित होने से आपके ही अधीन हूँ। आप ही जगत्-हर्ता, उत्पादयित्री, त्रिगुणात्मिका, कर्महेतुरूपा हैं। यद्यपि आप ही मेरे बुद्धि, चित्त में स्थित हैं तथापि मैं आपको नहीं पहचान सका। अतः हे माँ कालिके ! मेरे इस अपराध को आप क्षमा करें ।।१३।।

आप ही भूमि, जल, अग्नि, जगत्, वायु, आकाश, मन, महाप्रकृतिरूप भूमि-आदि प्रकृतिपर्यन्त पूर्व-पूर्वक क्रमशः हैं। हे माता ! आप ही समस्त चराचर की आत्मा हैं, एवं सबसे परे हैं और आप से परे कुछ भी नहीं है, ऐसी हे महाकाली ! आप मेरे अपराधों को क्षमा करें ।।१४।।

त्वं काली त्वं च तारा त्वमसि गिरिसुता सुन्दरी भैरवी त्वं
त्वं दुर्गा छिन्नमस्ता त्वमसि च भुवना त्वं तु लक्ष्मीः शिवा त्वम् ।
धूमा मातङ्गिनी त्वं त्वमसि च बगला, मङ्गलादिस्तवाख्या
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥१५॥
स्तोत्रेणाऽनेन देवीं परिणमति जनो यः सदा भक्तियुक्तो
दुष्कृत्या दुर्गसङ्घं परितरति शतं विघ्नतां नाशमेति ।
नाधिर्व्याधिः कदाचिद् भवति यदि पुनः सर्वदा सापराधः
सर्वं तत्कामरूपे त्रिभुवनजननि क्षामये पुत्रबुद्ध्या ॥१६॥
ज्ञाता वक्ता कवीशो भवति धनपतिर्दानशीलो दयात्मा
निःपापी निःकलङ्को कुलपतिकुशलः सत्यवाग् धार्मिकश्च ।

हे माँ कालि ! काली, तारा, गिरिसुता (पार्वती), सुन्दरी, भैरवी, दुर्गा, छिन्नमस्ता, भुवनेश्वरी, लक्ष्मी, शिवा, धूमा, मातंगी, कमला एवं मंगला आदि आप ही के नाम हैं। ऐसी हे माँ ! आप मेरे समस्त अपराधों को क्षमा करें ।।१५।।

फलश्रुति—जो साधक श्रद्धा-भक्तिपूर्वक देवी के इस स्तोत्र का निरन्तर पाठ करता है, उसके समस्त दुष्कर्म तथा सैकड़ों विघ्न स्वतः नष्ट हो जाते हैं। तथा उक्त साधक आधि-व्याधि से युक्त कभी भी नहीं रहता। वह साधक सर्वदा अपराधी होने पर भी हे कामरूपे ! त्रैलोक्य-जननि माँ ! इसे अपना पुत्र समझ कर उस साधक के समस्त त्रिविध ताप-पाप आदि को नष्ट करें ।।१६।।

इस स्तोत्र के जानने वाले साधक ज्ञानी, वक्ता, कवीश्वर, दयालु, दानी, धनपति (कुबेर के समान), पाप कलंक से रहित, सत्यवादी,

नित्यानन्दो दयाढ्यः पशुगणविमुखः सत्पथाचारशीलः
संसाराब्धिं सुखेन प्रतरपि गिरिजापाद-युग्मावलम्बात् ॥१७॥

इति आचार्य-पण्डित-शिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते
काली-रहस्ये काली-स्तोत्रं समाप्तम् ।

धार्मिक, अपने कुल की रक्षा करने में कुशल कुलपति, नित्यानन्दरूप, दयालु, पशु बुद्धि से रहित; सन्मार्ग का आश्रय करने वाले होते हैं। जो साधकगण गिरिजा (पार्वती) के चरणकमल का सेवन करते हैं, वे इस संसाररूपी समुद्र को अनायास ही सुखपूर्वक पार कर लेते हैं ॥१७॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रीकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित काली-रहस्य में कालीस्तोत्र समाप्त ।

काली-हृदयम्

श्रीमहाकाल उवाच

महाकौतूहल-स्तोत्रं हृदयाख्यं महोत्तमम् ।
शृणु प्रिये ! महागोप्यं दक्षिणायाः सुगोपितम् ॥ १ ॥
अवाच्यमपि वक्ष्यामि तव प्रीत्या प्रकाशितम् ।
अन्येभ्यः कुरु गोप्यं च सत्यं सत्यं च शैलजे ॥ २ ॥

श्रीदेव्युवाच

कस्मिन् युगे समुत्पन्नं केन स्तोत्रं कृतं पुरा ? ।
तत्सर्वं कथ्यतां शम्भो ! महेश्वर दयानिधे ! ॥ ३ ॥

महाकाल ने कहा—हे प्रिये ! अत्यन्त चमत्कार उत्पन्न करने वाला सर्वश्रेष्ठ काली-हृदय नामक स्तोत्र को सुनो । यह स्तोत्र अत्यन्त गोप-है, इसे दक्षिणा ने यत्नपूर्वक गुप्त रखा था ॥१॥

हे देवि ! यह स्तोत्र यद्यपि किसी से प्रकट करने योग्य नहीं है, फिर भी तुम्हारे प्रेम से इसे प्रकाशित कर रहा हूँ । हे शैलजे ! मैं सत्य कहता हूँ, मैं सत्य कहता हूँ, तुम इसे दूसरों से सदैव गुप्त रखना ॥२॥

श्री देवी ने कहा—हे महादेव ! इस स्तोत्र की उत्पत्ति किस युग में हुई है तथा सर्वप्रथम इस स्तोत्र को किसने किया ? हे दयानिधे ! हे महेश्वर ! इन सभी बातों को आप मुझसे कहिए ? ॥३॥

श्रीमहाकाल उवाच

पुरा प्रजापतेः शीर्षश्छेदनं कृतवानहम् ।
ब्रह्महत्याकृतैः पापैर्भैरवत्वं ममागतम् ॥ ४ ॥
ब्रह्महत्या-विनाशाय कृतं स्तोत्रं मया प्रिये ! ।
कृत्याविनाशकं स्तोत्रं ब्रह्महत्यापहारकम् ॥ ५ ॥

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीदक्षिणकाल्या हृदयस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीमहाकालऋषि-रुष्णिक्छन्दः, श्रीदक्षिणकालिका देवता, क्रीं बीजं, ह्रीं शक्तिः, नमः कीलकम्, सर्वत्र सदा जपे विनियोगः ।

तब महाकाल ने कहा -- हे प्रिये ! सृष्टि के आदि में जब मैंने ब्रह्मा का सिर काट दिया, तब मुझे ब्रह्महत्या लग गयी और मैं शिव न होकर महाभयानक भैरव बन गया ॥४॥

उस समय ब्रह्महत्या के विनाश के लिए, मैंने स्वयं ही इस स्तोत्र का पाठ किया, इसलिए यह महास्तोत्र कृत्या का विनाशक और ब्रह्म-हत्या को भी नष्ट करने वाला है ॥५॥

विनियोग—साधक को चाहिए कि, वह दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य...' इस विनियोग-वाक्य को पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे ।

विनियोगार्थ-- इस दक्षिणकाली स्तोत्र मन्त्र के महाकाल ऋषि हैं, उष्णिक् छन्द है, दक्षिणकालिका देवता हैं, 'क्रीं' बीज है, 'ह्रीं' शक्ति है, 'नमः' कीलक है, सभी जगह और सदैव जप कर रहा हूँ ।

हृदयादिन्यासः

ॐ क्रां हृदयाय नमः, ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्रूं शिखायै वषट्, ॐ क्रैं कवचाय हुम्, ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ क्रः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्

ध्यायेत् कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीम् ।
चतुर्भुजां लल्लज्जिह्वां पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥ १ ॥
नीलोत्पलदलप्रख्यां शत्रुसङ्घविदारिणीम् ।
नरमुण्डं तथा खड्गं कमलं वरदं तथा ॥ २ ॥
बिभ्राणां रक्तवदनां दंष्ट्रालीं घोररूपिणीम् ।
अट्टाट्टहासनिरतां सर्वदा च दिगम्बराम् ॥ ३ ॥

हृदयादिन्यास — ॐ क्रीं हृदयाय नमः' कहकर हृदय का, 'ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा' कहकर शिर का, 'ॐ क्रूं शिखायै वषट्' कह कर शिखा का, 'ॐ क्रैं कवचाय हुम्, कहकर दोनों बाहु का, 'ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्' कहकर दोनों नेत्रों का तथा 'ॐ क्रः अस्त्राय फट्' कहकर सर्वांग का स्पर्श करे। तदनन्तर भगवती श्री काली का ध्यान करना चाहिए।

महामाया, तीन नेत्र वाली, नाना रूपों से विश्व में व्याप्त, चार भुजा वाली, जिह्वा को लपलपाती हुई, पूर्ण चन्द्र के समान मुख वाली, महाकाली का ध्यान करे ॥१॥

काले कमल के पत्ते के समान नील वर्ण वाली, शत्रु-समूह का विनाश करने वाली, नरमुण्ड, खड्ग, कमल तथा वरमुद्रा को धारण करने वाली, ॥२॥

रक्त की धारा को मुख में धारण करने वाली, ऊँचे, भयानक दाँतों वाली, अत्यन्त भयानक रूप वाली, अट्टहास करने वाली, वस्त्र रहित, ॥३॥

शवासन-स्थितां देवीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।
इति ध्यात्वा महादेवीं ततस्तु हृदयं पठेत् ॥ ४ ॥
ॐ कालिका घोररूपाद्या सर्वकामफलप्रदा ।
सर्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु मे ॥ ५ ॥
ह्रीं-ह्रींस्वरूपिणी श्रेष्ठा त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ।
तव स्नेहान् मयाख्यातं न देयं यस्य कस्यचित् ॥ ६ ॥
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि निशामय परात्मिके ।
यस्य विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भविष्यति ॥ ७ ॥

शव के आसन पर विराजमान, मुण्ड की माला से विभूषित महादेवी का ध्यान करे, तदनन्तर काली-हृदय स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥४॥

घोर रूपों को धारण करने वाली तथा मनोरथ पूर्ण करने वाली एवं सभी देवताओं द्वारा संस्तुत भगवती महाकाली हमारे शत्रुओं का विनाश करें ॥५॥

वह महाकाली 'ह्रीं-ह्रीं' स्वरूपा हैं, सबसे श्रेष्ठ हैं तथा तीनों लोकों में दुःख से प्राप्त होने योग्य हैं। उनका यह स्तोत्र हे पार्वती ! स्नेहवश मैं तुम से प्रकाशित कर रहा हूँ। अतः यह परम दुर्लभ स्तोत्र जिस-किसी को मत बताना ॥६॥

हे परात्मिके ! मैं उस महाकाली का ध्यान तुम्हें बता रहा हूँ, उसे तुम सुनो। इसके जान लेने मात्र से ही मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है ॥७॥

नागयज्ञोपवीतां च चन्द्रार्द्धकृतशेखराम्।
जटाजूटां च सञ्चिन्त्य महाकालसमीपगाम् ॥ ८ ॥
एवं न्यासादयः सर्वे ये प्रकुर्वन्ति मानवाः।
प्राप्नुवन्ति च ते मोक्षं सत्यं सत्यं वरानने ! ॥ ९ ॥
यन्त्रं शृणु परं देव्याः सर्वार्थसिद्धिदायकम्।
गोप्याद् गोप्यतरं गोप्यं गोप्याद् गोप्यतरं महत् ॥१०॥
त्रिकोणं पञ्चकं चाऽष्टकमलं भूपुरान्वितम्।
मुण्डपङ्क्ति च ज्वालां च कालियन्त्रं सुसिद्धिदम् ॥११॥
मन्त्रं तु पूर्वकथितं धारयस्व सदा प्रिये !।
देव्या दक्षिणकाल्यास्तु नाममालां निशामय ॥१२॥

वह महाकाली नागों का यज्ञोपवीत धारण की है, मस्तक पर द्वितीया का अर्धचन्द्र विराजमान है, वे जटाजूट से युक्त हैं तथा महाकाल के समीप निवास करने वाली हैं ॥८॥

जो मनुष्य ऊपर कहे गये भगवती के न्यास एवं ध्यान को करते हैं। हे वरानने ! वे अवश्य ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं, यह बात सत्य है ॥९॥

सम्पूर्ण सिद्धियों को प्रदान करने वाला, उस महादेवी के यन्त्र को हे पार्वती ! तुम मुझसे सुनो। वह यन्त्र गोपनीय से भी गोपनीय है, किंबहुना, अत्यन्त गोपनीय है ॥१०॥

उस यन्त्र में पन्द्रह कोण होता है, इसके बाद अष्टदलकमल तथा भूपुर होते हैं। उसके बाद मुण्ड की पंक्ति तथा ज्वाला होती है। सिद्धि प्रदान करने वाला यही महाकाली का यन्त्र है ॥११॥

मैंने महाकाली का मन्त्र तुमसे पहले बतला दिया है, तुम उसे धारण करो। अब दक्षिण काली देवी के नाम-माला को तुम सुनो ॥१२॥

काली दक्षिणकाली च कृष्णरूपा परात्मिका ।
मुण्डमाली विशालाक्षी सृष्टिसंहारकारिका ॥१३॥
स्थितिरूपा महामाया योगनिद्रा भगात्मिका ।
भागसर्पि: पानरता भगोद्योता भगाङ्गजा ॥१४॥
आद्या सदा नवा घोरा महातेजा: करालिका ।
प्रेतवाहा सिद्धिलक्ष्मीरनिरुद्धा सरस्वती ॥१५॥
एतानि नाममाल्यानि ये पठन्ति दिने दिने ।
तेषां दासस्य दासोऽहं सत्यं सत्यं महेश्वरि ! ॥१६॥
कालीं कालहरां देवीं कङ्कालबीजरूपिणीम् ।
काकरूपां कलातीतां कालिकां दक्षिणां भजे ॥१७॥

काली, दक्षिणकाली, कृष्णरूपा, परात्मिका, मुण्डमाली, विशालाक्षी, सृष्टिसंहारकारिका, ॥१३॥

स्थितिरूपा, महामाया, योगनिद्रा, भगात्मिका, भागसर्पि, पानरता, भगोद्योता, भगाङ्गजा, ॥१४॥

आद्या, सदा नवा, घोरा, महातेजा, करालिका, प्रेतवाहा, सिद्धिलक्ष्मी, अनिरुद्धा, सरस्वती, ॥१५॥

भगवती के इस 'नाम-माला' को जो लोग प्रतिदिन पढ़ते हैं, शिवजी कहते हैं कि, हे महेश्वरि ! मैं उनके दास का भी दास हूँ । यह बात सत्य है ॥१६॥

काली, कालहरा, देवी, कङ्काल बीजरूपिणी, काकरूपा (कृष्ण वर्ण वाली), कलातीता तथा दक्षिणा एवं काली नाम से विख्यात देवी का मैं भजन करता हूँ ॥१७॥

कुण्डगोलप्रियां देवीं स्वयम्भूकुसुमेरताम् ।
रतिप्रियां महारौद्रीं कालिकां प्रणमाम्यहम् ॥१८॥
दूतीप्रियां महादूतीं दूतीयोगेश्वरीं पराम् ।
दूतीयोगोद्भवरतां दूतीरूपां नमाम्यहम् ॥१९॥
क्रींमन्त्रेण जलं जप्त्वा सप्तधा सेचनेन तु ।
सर्वे रोगा विनश्यन्ति नाऽत्र कार्या विचारणा ॥२०॥
क्रींस्वाहान्तैर्महामन्त्रैश्चन्दनं साधयेत्ततः ।
तिलकं क्रियते प्राज्ञैर्लोको वश्यो भवेत् सदा ॥२१॥
क्रीं-हूँ-ह्रींमन्त्रजप्तेन चाऽक्षतैः सप्तभिः प्रिये ! ।
महाभयविनाशश्च जायते नाऽत्र संशयः ॥२२॥

कुण्डगोलप्रिया तथा ऋतुमती, रतिप्रिया, महारौद्री तथा कालिका को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१८॥

दूतीप्रिया, महादूती. दूती. योगेश्वरी, पराम्बा, दूतीयोगोद्भवरता तथा दूतीरूपा महाकाली को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१९॥

'क्रीं' इस मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित कर सात बार रोगी के ऊपर छिड़कने से उसके सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है ॥२०॥

'क्रीं स्वाहा' इस मन्त्र को पढ़कर चन्दन घिसे, तत्पश्चात् उसका तिलक करे, तो उस महाप्राज्ञ के वश में सभी लोग हो जाते हैं ॥२१॥

'क्रीं-हूँ-ह्रीं' मन्त्र का जप कर सात अक्षत फेंके तो उसके महाभय का विनाश हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए ॥२२॥

क्रीं-ह्रीं-ह्रूँ-स्वाहामन्त्रेण श्मशानाऽग्नि च मन्त्रयेत् ।
शत्रोर्गृहे प्रतिक्षिप्त्वा शत्रोर्मृत्युर्भविष्यति ॥२३॥
ह्रूँ-ह्रीं-क्रीं चैव उच्चाटे पुष्पं संशोध्य सप्तधा ।
रिपूणां चैव चोच्चाटन्नयत्येव न संशयः ॥२४॥
आकर्षणे च क्रीं-क्रीं-क्रीं जप्त्वाऽक्षतं प्रतिक्षिपेत्।
सहस्रयोजनस्था च शीघ्रमागच्छति प्रिये ! ॥२५॥
क्रीं-क्रीं-क्रीं-ह्रूँ-ह्रूँ-ह्रीं-ह्रीं च कज्जलं शोधितं तथा ।
तिलकेन जगन्मोहं सप्तधा मन्त्रमाचरेत् ॥२६॥
हृदयं परमेशानि सर्वपापहरं परम् ।
अश्वमेधादि-दानानां कोटिकोटिगुणोत्तरम् ॥२७॥

'क्रीं-ह्रीं-ह्रूँ स्वाहा' इस मन्त्र से श्मशानाग्नि को अभिमन्त्रित कर प्रज्वलित करे, फिर उसे शत्रु के घर की ओर फेंक दे, तो अवश्य ही शत्रु की मृत्यु हो जाती है ॥२३॥

'ह्रूँ-ह्रीं-क्रीं' इस मन्त्र से सात बार पुष्प को अभिमन्त्रित कर शत्रु के ऊपर फेंक दे, तो अवश्य ही शत्रु का उच्चाटन हो जाता है ॥२४॥

'क्रीं-क्रीं-क्रीं' मन्त्र का जप कर अक्षत सभी दिशाओं में फेंक दे तो सहस्र योजन दूर रहने वाला भी आकृष्ट होकर शीघ्र ही चला आता है ॥२५॥

'क्रीं-क्रीं-क्रीं ह्रूँ-ह्रूँ ह्रीं-ह्रीं' इस मन्त्र से सात बार कज्जल को पारित कर उसका तिलक करने से सारा संसार मोह को प्राप्त हो जाता है ॥२६॥

हे परमेशानि ! काली हृदय नामक यह स्तोत्र सभी पापों को नष्ट करता है । अश्वमेधादि यज्ञों एवं सभी दानों से करोड़ों गुना यह उत्तम है ॥२७॥

कन्यादानादि-दानानां कोटिकोटिगुणं फलम् ।
द्वतीयागादि-यागानां कोटिकोटिफलं स्मृतम् ॥२८॥
गङ्गादिसर्वतीर्थाणां फलं कोटिगुणं स्मृतम् ।
एकधा पाठमात्रेण सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥२९॥
कौमारी स्वेष्टरूपेण पूजां कृत्वा विधानतः ।
पठेत् स्तोत्रं महेशानि ! जीवन्मुक्तः स उच्यते ॥३०॥
रजस्वलाभगं दृष्ट्वा पठेदेकाग्रमानसः ।
लभते परमं स्थानं देवीलोके वरानने ! ॥३१॥
महादुःखे महारोगे महासङ्कटके दिने ।
महाभये महाघोरे पठेत् स्तोत्रं महोत्तमम् ॥

कन्यादान अन्य सभी दान से करोड़ों गुना उत्तम है, एवं देवी यज्ञों से भी उत्तम है ॥२८॥

यह काली-हृदय एक बार मात्र पाठ करने से गङ्गादि सभी तीर्थों से भी श्रेष्ठ फल देने वाला है, यह सत्य है ॥२९॥

हे महेशानि ! कौमारी को इष्ट देवता मान कर जो लोग उनकी विधियुक्त पूजा करते हैं तथा पूजा के अनन्तर इस स्तोत्र का पाठ करते हैं, वे निःसन्देह जीवन्मुक्त हो जाते हैं ॥३०॥

हे वरानने ! रजस्वला के भग का दर्शन कर शुद्ध-चित्त हो एकाग्रमन से इस काली हृदय का पाठ करने मात्र से ही साधक देवी-लोक में परम पद को प्राप्त करता है ॥३१॥

अत्यन्त दुःख में, असाध्य रोग में, महासङ्कट में, महाभय में तथा महाघोर (अनिष्ट) काल में इस उत्तम स्तोत्र का पाठ करना

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं गोपयेन्मातृजारवत् ॥३२॥

इति काली-रहस्ये काली-हृदयं समाप्तम् ।

कालिका-शतनाम-स्तोत्रम्

भैरव उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि कालिकाया वरानने ! ।
यस्य प्रपठनाद् वाग्मी सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ १ ॥
काली कपालिनी कान्ता कामदा कामसुन्दरी ।
कालरात्रिः कालिका च कालभैरव-पूजिता ॥ २ ॥

चाहिए। हम सत्य कहते हैं हम सत्य कहते हैं, हम सत्य कहते हैं। कि माता के साथ व्यभिचार करने वाले पुरुष तथा मातृयोनिवत् जैसे गुप्त रखा जाता है उसी प्रकार इसे भी गोपनीय रखना चाहिए ॥३२॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित काली-रहस्य में
काली हृदय समाप्त ।

भैरव ने कहा – हे वरानने ! कालिका शतनाम (१०० नाम) को मैं तुमसे कह रहा हूँ, जिसके पढ़ने से ही मनुष्य प्रशस्त वाणी वाला होकर सर्वत्र विजय को प्राप्त करता है ॥१॥

१. काली, २. कपालिनी, ३. कान्ता, ४. कामदा, ५. कामसुन्दरी, ६. कालरात्रि. ७. कालिका, ८. कालभैरव-पूजिता, ॥२॥

कुरुकुल्ला कामिनी च कमनीयस्वभाविनी ।
कुलीना कुलकर्त्री च कुलवर्त्म-प्रकाशिनी ।। ३ ।।
कस्तूरीरसनीला च काम्या कामस्वरूपिणी ।
ककारवर्णनिलया कामधेनुः करालिका ।। ४ ।।
कुलकान्ता करालास्या कामार्ता च कलावती ।
कृशोदरी च कामाख्या कौमारी कुलपालिनी ।। ५ ।।
कुलजा कुलकन्या च कलहा कुलपूजिता ।
कामेश्वरी कामकान्ता कुञ्जरेश्वरगामिनी ।। ६ ।।

९. कुरुकुल्ला, १०. कामिनी, ११ कमनीय-स्वभाविनी, १२. कुलीना, १३. कुलकर्त्री, १४. कुलवर्त्म-प्रकाशिनी, ।।३।।

१५. कस्तूरी रस के समान नीलकर्ण वाली, १६. काम्या, १७, कामस्वरूपिणी, १८. ककारवर्ण में निवास करने वाली, १९. कामधेनु (कामनाओं को पूर्ण करने वाली), २०. करालिका ।।४।।

२१. कुलकान्ता (कुलीन स्त्री), २२. करालास्या (कराल मुखवाली), २३. कामार्त्ता (काम से सदैव सन्तप्त रहने वाली), २४. कलावती, २५. कृशोदरी, २६. कामाख्या, २७. कौमारी २८. कुलपालिनी, ।।५।।

२९. कुलजा, ३०. कुलकन्या, ३१. कलहा, ३२. कुलपूजिता, ३३. कामेश्वरी, ३४. कामकान्ता, ३५. कुञ्जरेश्वरगामिनी (हाथी पर सवार होकर चलने वाली), ।।६।।

कामदात्री कामहर्त्री कृष्णा चैव कपर्दिनी ।
कुमुदा कृष्णदेहा च कालिन्दी कुलपूजिता ।। ७ ।।
काश्यपी कृष्णमाता च कुलिशाङ्गी कला तथा ।
क्रींरूपा कुलगम्या च कमला कृष्णपूजिता ।। ८ ।।
कृशाङ्गी किन्नरी कर्त्री कलकण्ठी च कार्तिकी ।
कम्बुकण्ठी कौलिनी च कुमुदा कामजीविनी ।। ९ ।।
कुलस्त्री कीर्त्तिका कृत्या कीर्तिश्च कुलपालिका ।
कामदेवकला कल्पलता कामाङ्गवर्द्धिनी ।।१०।।
कुन्ती च कुमुदप्रीता कदम्ब-कुसुमोत्सुका ।
कादम्बिनी कमलिनी कृष्णानन्दप्रदायिनी ।।११।।

३६. कामदात्री (काम को देने वाली), ३७. कामहर्त्री, (काम का संहार करने वाली), ३८. कृष्णा, ३९. कपर्दिनी, ४०. कुमुदा, ४१. कृष्णदेहा, ४२. कालिन्दी, ४३. कुलपूजिता, ।।७।।

४४ काश्यपी, ४५. कृष्णमाता, ४६. कुलिशाङ्गी, ४७. कला ४८. क्रींरूपा, ४९ कुलगम्या, ५०. कमला, ५१. कृष्णपूजिता, ।।८।।

५२. कृशाङ्गी, ५३. किन्नरी, ५४. कर्त्री, ५५. कलकण्ठी, ५६. कार्तिकी, ५७. कम्बुकण्ठी, (शंख के समान कण्ठ वाली), ५८. कौलिनी, ५९. कुमुदा, ६०. कामजीविनी, ।।९।।

६१. कुलस्त्री, ६२. कार्तिकी, ६३. कृत्या, ६४. कीर्ति, ६५. कुलपालिका, ६६. कामदेवकला, ६७. कल्पलता, ६८. कामाङ्गवर्धिनी, ।।१०।।

६९. कुन्ती, ७०. कुमुदप्रीता, ७१. कदम्बकुसुमोत्सुका (कदम्ब के पुष्प की इच्छा वाली), ७२. कादम्बिनी (बादल के समान सुख देने वाली), ७३. कमलिनी, ७४. कृष्णानन्दप्रदायिनी, ।।११।।

कुमारीपूजनरता कुमारीगणशोभिता ।
कुमारीरञ्जनरता कुमारीव्रतधारिणी ॥१२॥
कङ्काली कमनीया च कामशास्त्रविशारदा ।
कपालखट्वाङ्गधरा कालभैरवरूपिणी ॥१३॥
कोटरी कोटराक्षी च काशी कैलासवासिनी ।
कात्यायिनी कार्यकरी काव्यशास्त्रप्रमोदिनी ॥१४॥
कामाकर्षणरूपा च कामपीठनिवासिनी ।
कङ्गिनी काकिनी क्रीड़ा कुत्सिता कलहप्रिया ॥१५॥
कुण्डगोलोद्भवप्राणा कौशिकी कीर्तिवर्द्धिनी ।
कुम्भस्तनी कटाक्षा च काव्या कोकनदप्रिया ॥१६॥

---

७५. कुमारीपूजनरता, ७६. कुमारीगणशोभिता, ७७. कुमारी-रञ्जनरता, ७८. कुमारीव्रतधारिणी, ॥१२॥

७९. कङ्काली, ८०. कमनीया, ८१, कामशास्त्रविशारदा, ८२. कपालखट्वाङ्गधरा, ८३. कालभैरवरूपिणी, ॥१३॥

८४. कोटरी, ८५. कोटराक्षी, ८६. काशी, ८७. कैलासवासिनी, ८८. कात्यायिनी, ८९. कार्यकरी, ९०. काव्यशास्त्रप्रमोदिनी, ॥१४॥

९१. कामाकर्षणरूपा, ९२. कामपीठनिवासिनी, ९३. कङ्गिनी, ९४. काकिनी, ९५. क्रीडा, ९६. कुत्सिता, ९७. कलहप्रिया ॥१५॥

९८. कुण्डगोलोद्भवप्राणा, ९९, कौशिकी, १००. कीर्तिवर्धिनी, १०१. कुम्भस्तनी, १०२. कटाक्षा, १०३. काव्या, १०४. कोकनदप्रिया (लाल कमल को प्यार करने वाली), ॥१६॥

कान्तारवासिनी कान्तिः कठिना कृष्णवल्लभा ।
इति ते कथित देवि ! गुह्याद् गुह्यतरं परम् ॥१७॥
प्रपठेद् य इदं नित्यं कालीनाम शताष्टकम ।
त्रिषु लोकेषु देवेशि ! तस्याऽसाध्यं न विद्यते ॥१८॥
प्रातःकाले च मध्याह्ने सायाह्ने च सदा निशि ।
यः पठेत् परया भक्त्या कालीनाम शताष्टकम् ॥१९॥
कालिका तस्य गेहे च संस्थानं कुरुते सदा ।
शून्यागारे श्मशाने वा प्रान्तरे जलमध्यतः ॥२०॥
वह्निमध्ये च सङ्ग्रामे तथा प्राणस्य संशये ।
शताष्टकं जपन् मन्त्री लभते क्षेममुत्तमम् ॥२१॥

---

१०५ कान्तारवासिनी (भयानक वन में रहने वाली), १०६. कान्ति, १०७ कठिना, १०८. कृष्णवल्लभा। हे देवि ! महाकालिका के अत्यन्त गुप्त एक सौ आठ नाम को मैंने तुमसे कहा ॥१७॥

जो काली के ये एक सौ आठ नामों का नित्यप्रति पाठ करेगा; उसे इस लोक में कोई भी वस्तु असाध्य नहीं होगी ॥१८॥

जो प्रातःकाल, मध्याह्न, सायंकाल तथा अर्धरात्रि में काली के इन एक सौ आठ नामों का पाठ करता है ।॥१९॥

उसके घर में कालिका का नित्य निवास रहता है। शून्यागार, श्मशान, घोर जंगल अथवा जल के मध्य में, ॥२०॥

आग के बीच, संग्राम में तथा प्राणबाधा उपस्थित होने पर भगवती महाकाली के एक सौ आठ नामों का पाठ करने वाला अथवा मन्त्र का जप करने वाला पुरुष श्रेष्ठ कल्याण को प्राप्त करता है ॥२१॥

कालीं संस्थाप्य विधिवत् स्तुत्वा नामशताष्टकैः ।
साधकः सिद्धिमाप्नोति कालिकायाः प्रसादतः ॥२२॥

इति काली-रहस्ये कालिकाऽष्टोत्तरशतनाम-स्तोत्रं समाप्तम् ।

काली सहस्रनाम-स्तोत्रम्

कैलासशिखरे रम्ये नानादेवगणावृते ।
नानावृक्षलताकीर्णे नानापुष्पैरलङ्कृते ॥१॥
चतुर्मण्डलसंयुक्ते शृङ्गारमण्डपे स्थिते ।
समाधौ संस्थितं शान्तं क्रीडन्तं योगिनीप्रियम् ॥२॥

शास्त्रीय विधि से काली की स्थापना कर उपर्युक्त एक सौ आठ नामों से उनकी स्तुति करने वाला साधक कालिका के प्रसाद से उत्तमोत्तम सिद्धि को प्राप्त करता है ॥२२॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित काली-रहस्य में कालिका-अष्टोत्तर-शतनाम-स्तोत्र समाप्त ।

अनेक देवगणों से युक्त, वृक्षलता एवं पुष्पों से अलंकृत, अत्यन्त सुन्दर कैलास नाम का पर्वत है ॥१॥

वहीं पर चारों ओर घिरे हुए शृङ्गार-मण्डप के मध्य समाधि लगाये हुए शान्त,आत्माराम एवं योगिनियों से सेवित मुनिरूप धारण किये हुए भगवान् शङ्कर से पार्वती ने पूछा ॥२॥

तत्र मौनधरं दृष्ट्वा देवी पृच्छति शङ्करम् ।

देव्युवाच

किं त्वया जप्यते देव ! किं त्वया स्मर्यते सदा ॥३॥

सृष्टिः कुत्र विलीनाऽस्ति पुनः कुत्र प्रजायते ।

ब्रह्माण्डकारणं यत् तत् किमाद्यं कारणं महत् ॥४॥

मनोरथमयी सिद्धिस्तथा वाञ्छामयी शिव ! ।

तृतीया कल्पनासिद्धिः कोटिसिद्धीश्वरत्वकम् ॥५॥

शक्तिपाताष्टदशकं चराऽचरपुरीगतिः ।

महेन्द्रजालमिन्द्रादिजालानां रचनां तथा ॥६॥

अणिमाद्यष्टकं देव ! परकाया-प्रवेशनम् ।

नवीनसृष्टिकरणं समुद्रशोषणं तथा ॥७॥

देवि ने कहा—हे देवाधिदेव ! आप किसका जप करते हैं तथा किसका स्मरण करते हैं ? ॥३॥

यह समस्त सृष्टि किसमें लीन होती है ? फिर इस सृष्टि की उत्पत्ति कैसे होती है ? इस ब्रह्माण्डरूपी कार्य का सब से आद्य और महान् कारण क्या है ? ॥४॥

मनोरथमयी, वाञ्छामयी, कल्पनामयी, कोटिसिद्धि, ईश्वरत्व-सिद्धि, अठारह प्रकार के शक्तिसम्पात, चराचर जगत् में अव्याहत गति । महेन्द्रजाल, इन्द्रजालादिकों की रचना, अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ, परकायाप्रवेश, नवीन सृष्टिरचना का सामर्थ्य, समुद्र-शोषण, ॥५–७॥

अमायां चन्द्रसंदर्शो दिवा चन्द्रप्रकाशनम् ।
चन्द्राष्टकं चाऽष्टदिक्षु तथा सूर्याष्टकं शिव ! ॥८॥
जले जलमयत्वं च वह्नौ वह्निमयत्वकम् ।
ब्रह्म-विष्ण्वादि-निर्माणमिन्द्राणां कारणं करे ॥९॥
पातालगुटिका-यक्ष-वेताल-पञ्चकं तथा ।
रसायनं तथा गुप्तिस्तथैव चाऽखिलाञ्जनम् ॥१०॥
महामधुमती सिद्धिस्तथा पद्मावती शिव ! ।
तथा भोगवती सिद्धिर्यावत्यः सन्तिः सिद्धयः ॥११॥
केन मन्त्रेण तपसा कलौ पापसमाकुले ।
आयुष्यं पुण्यरहिते कथं भवति तद् वद ? ॥१२॥

अमावास्या एवं दिन के समय चन्द्रमा का दर्शन एवं आठों दिशाओं में प्रत्येक दिशा में चन्द्रदर्शन तथा सूर्यदर्शन, जल में जलमयत्व, अग्नि में अग्निमयत्व, ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्रादि देवताओं के निर्माण की क्षमता, ॥८–९॥

पाताल-गुटिका, जिसमें पाताल तक की वस्तुएँ दिखाई पड़ती हैं। यक्ष, वेताल के समान अदृश्य एवं प्रकट होना। रसायन-सिद्धि तथा सर्वत्र गोपनीय हो जाना। एवं समस्त जगत् की वस्तुओं को प्रत्यक्ष कर देने वाला अञ्जन (आँजन) ॥१०॥

इसी प्रकार हे शिव ! महा मधुमती तथा पद्मावती सिद्धि, भोगवती आदि सिद्धियों की प्राप्ति ॥११॥

इस पापसमाकुल कलियुग में तथा दीर्घ आयु की प्राप्ति किस प्रकार होती है ? ॥१२॥

शिव उवाच

विना मन्त्रं विना स्तोत्रं विनैव तपसा प्रिये।
विना बलिं विना न्यासं भूतशुद्धिं विना प्रिये ॥१३॥
विना ध्यानं विना यन्त्रं विना पूजादिना प्रिये।
विना क्लेशादिभिर्देवि ! देहदुःखादिभिर्विना ॥१४॥

सिद्धिराशु भवेद्येन तदेवं कथ्यते मया।
शून्ये ब्रह्माण्डगोले तु पञ्चाशच्छून्यमध्यके ॥१५॥
पञ्चशून्यस्थिता तारा सर्वान्ते कालिका स्मृता।
अनन्तकोटि-ब्रह्माण्ड-राजदन्ताग्रके शिवे ! ॥१६॥

तब भगवान् शिव ने कहा—हे प्रिये ! मन्त्र के जप के बिना, स्तोत्र-पाठ के बिना, तपस्या के बिना, बलि, अङ्गन्यास तथा भूत-सिद्धि के बिना ॥१३॥

ध्यान यन्त्र एवं पूजा के बिना, बिना मानसिक क्लेश तथा शरीर के दुःख के बिना ॥१४॥

मनुष्य को जिस प्रकार सिद्धि होती है वह उपाय मैं तुमसे कह रहा हूँ। पचास हजार योजन की पृथ्वी से युक्त इस ब्रह्माण्ड गोलक का जब प्रलय हो जाता है तथा जब पाँचों तत्त्वों से सृष्टि शून्य हो जाती है। उस समय तारा नाम से विख्यात केवल महाकाली ही शेष रह जाती हैं और हे देवि ! उस समय अनन्त-कोटि-ब्रह्माण्डों के रचयिता ब्रह्मादि भी तुम्हारे दाँत के ग्रास बन जाते हैं ॥१५-१६॥

स्थाप्यं शून्यलयं कृत्वा कृष्णवर्णं विधाय च ।
महानिर्गुणरूपा च वाचातीता परा कला ॥१७॥
क्रीडायां संस्थिता देवी शून्यरूपा प्रकल्पयेत् ।
सृष्टेरारम्भकार्ये[1] तु दृष्टा छाया तया यदा ॥१८॥
इच्छाशक्तिस्तु सा जाता तथा कालो विनिर्मितः ।
प्रतिबिम्बं तत्र दृष्टं जाता ज्ञानाभिधातु सा ॥१९॥
इदमेतत् किं विशिष्टं जातं विज्ञानकं मुदा ।
तदा क्रियाभिधा जाता तदीक्षातो महेश्वरी ॥२०॥
ब्रह्माण्डगोले देवेशि ! राजदन्तस्थितं च यत् ।
सा क्रिया स्थापयामास स्व-स्वस्थान क्रमेण च ॥२१॥

और महाप्रलय का भार उन्हीं पर स्थापित कर भगवती महाकाली उस शून्य में अपना कृष्णवर्ण बना कर वाणी से अतीत, परा कला के रूप में क्रीडा करती हैं ॥१७॥

पुनः सृष्टि के आरम्भ काल में उसी भगवती से छाया के रूप में इच्छाशक्ति का निर्माण होता है, जिससे महाकाल की उत्पत्ति होती है और वह इच्छाशक्ति स्वयं ज्ञानरूप में परिणत हो जाती है ॥१८-१९॥

इस प्रकार की विशिष्टताओं से युक्त विज्ञान की उत्पत्ति हुई फिर स्वयं महेश्वरी अपनी इच्छा से क्रिया रूप में परिणत हो गयीं ॥२०॥

इस प्रकार हे देवि ! इस ब्रह्माण्ड में उस क्रिया ने पुनः सभी स्थानों में उन-उन देवताओं को स्थापित किया ॥२१॥

१. 'काले तु' इत्यपि पाठः ।

तत्रैव स्वेच्छया देवि ! सामरस्य परायणा ।
तदिच्छा कथ्यते देवि ! यथावदवधारय ॥२२॥
युगादिसमये देवि ! शिवं परगुणोत्तमम् ।
तदिच्छा निर्गुणं शान्तं सच्चिदानन्दविग्रहम् ॥२३॥
शाश्वतं सुन्दरं शुक्लं सर्वदेवयुतं वरम् ।
आदिनाथं गुणातीतं काल्या संयुतमीश्वरम् ॥२४॥
विपरीतरतं देवं सामरस्यपरायणम् ।
पूजार्थमागतं देव-गन्धर्वा-ऽप्सरसां गणम् ॥२५॥
यक्षिणीं किन्नरीमन्यामुर्वश्याद्यां तिलोत्तमाम् ।
वीक्ष्य तन्मायया प्राह सुन्दरी प्राणवल्लभा ॥२६॥

ब्रह्माण्ड में समरस (समता) के रूप में विद्यमान उस देवी की इसी क्रिया को इच्छा कहते हैं। हे पार्वति ! इसे अच्छी तरह समझो ॥२२॥

परमब्रह्म स्वरूप वह परमात्मा शिव ही भगवती की इच्छा के रूप में वर्त्तमान रहने के कारण निर्गुण, शान्त एवं सच्चिदानन्द के विग्रह रूप में अवतरित हुआ ॥२३॥

उस शाश्वत, सुन्दर, स्वच्छ, सर्वदेव युक्त, आदिनाथ, निर्गुण शिव (इच्छा) को काली में विपरीत रति से आसक्त देख कर देव, गन्धर्व तथा अप्सराओं का समूह पूजा करने के लिए वहाँ उपस्थित हुआ ॥२४-२५॥

यक्षिणी, किन्नरी उर्वशी तथा तिलोत्तमा आदि को वहाँ आयी हुई देखकर शिव-प्राणवल्लभा महाकाली ने महाकाल रूप शिव से कहा ॥२६॥

त्रैलोक्यसुन्दरी प्राणस्वामिनी प्राणरञ्जिनी ।
किमागतं भवत्याद्य मम भाग्यार्णवो महान् ॥२७॥
उक्त्वा मौनधरं शम्भुं पूजयन्त्यप्सरोगणाः ।

अप्सरस ऊचुः

संसारात्तारितं देव ! त्वया विश्वजनप्रिय ॥२८॥
सृष्टेरारम्भकार्यार्थमुद्युक्तोऽसि महाप्रभो ! ।
वेश्याकृत्यमिदं देव ! मङ्गलार्थप्रगायनम् ॥२९॥
प्रयाणोत्सवकाले तु समारम्भे प्रगायनम् ।
गुणाद्यारम्भकालो हि वर्तते शिवशङ्कर ! ॥३०॥

त्रैलोक्यसुन्दरी, प्राणस्वामिनी, प्राणरञ्जिनी महाकाली ने उन अप्सराओं को वहाँ आया देख कर उनके आने का कारण पूछा ।

उन अप्सराओं ने कहा—हमारे भाग्यरूपी समुद्र का आज उदय हुआ है ॥२७॥

ऐसा कह कर उन अप्सराओं ने मौनरूप में स्थित शिवशङ्कर की पूजा की ।

अप्सराओं ने कहा—हे जनप्रिय भगवान् शङ्कर ! आप इस जगत् के निर्माण करने में संलग्न दिखाई पड़ रहे हैं । अतः हे देव ! सृष्टि के आरम्भरूप कार्य के मङ्गल के लिए हम लोगों को गाने की आज्ञा दीजिए, जो हम वेश्याओं के लिए उपयुक्त है ॥२८-२९॥

हे शिवशङ्कर ! जिस प्रकार यात्रा एवं उत्सव कार्य में गाना मङ्गलदायक है, उसी प्रकार त्रिगुणात्मक सृष्टि के आरम्भ होने के कारण मङ्गलार्थ गायन करना आवश्यक है ॥३०॥

इन्द्राणीकोटयः सन्ति तस्याः प्रसवबिन्दुतः ।
ब्रह्माणी वैष्णवी चैव माहेशीकोटिकोटयः ॥३१॥
तव सामरसानन्द-दर्शनार्थं समुद्भवाः ।
सञ्जाताश्चाऽग्रतो देव ! चाऽस्माकं सौख्यसागर ! ॥३२॥
रतिं हित्वा कामिनीनां नाऽन्यत् सौख्यं महेश्वर ! ।
सा रतिर्दृश्यतेऽस्माभिर्महत् सौख्यार्थकारिका ॥३३॥
एवमेतत्तु चाऽस्माभिः कर्तव्यं भर्तृणा सह ।
एवं श्रुत्वा महादेवो ध्यानावस्थित-मानसः ॥३४॥
ध्यानं हित्वा मायया तु प्रोवाच कालिकां प्रति ।
कालि कालि रुण्डमाले प्रिये भैरववादिनि ! ॥३५॥
शिवारूपधरे क्रूरे घोरदंष्ट्रे भयानके ! ।
त्रैलोक्य-सुन्दरकरी-सुन्दर्यः सन्ति मेऽग्रतः ॥३६॥

इस सृष्टिरूप कार्य के लिए विपरीत रति में आसक्त हुए आप के दर्शन के लिए आप दोनों से उत्पन्न हुई करोड़ों इन्द्राणी, ब्रह्माणी तथा वैष्णवी शक्तियाँ आयी हुई हैं। हे सौख्यसागर ! वे सभी शक्तियाँ लज्जायुक्त होकर आप के आगे खड़ी हैं ॥३१-३२॥

हे महेश्वर ! स्त्रियों के रति से बढ़ कर और कोई दूसरा सुख नहीं है। और वह सुखदायक रति हम लोग आनन्द से यहाँ देख रहे हैं ॥३३॥

हम लोग भी सृष्टि के लिए अपने पतियों से इसी प्रकार की रति करना चाहते हैं। अप्सराओं की इस बात को सुन कर ध्यान में संलग्न महादेव ने ॥३४॥

अपना ध्यान छोड़ दिया और महाकाली से कहने लगे—हे कालि, हे महाकालि, हे रुण्डमाले, हे भैरवि, हे शिवारूप-धारिणी, हे क्रूरे, हे भयानक दाँतों वाली भगवति ! अनेक त्रैलोक्य-सुन्दरी कामिनियाँ हमारे आगे हैं ॥३५-३६॥

सुन्दरीवीक्षणं कर्म कुरु कालि प्रिये शिवे ! ।
ध्यानं मुञ्च महादेवि ! ता गच्छन्ति गृहं प्रति ॥३७॥
तं रूपं महाकालि ! महाकालप्रियङ्करम् ।
एतासां सुन्दरं रूपं त्रैलोक्य-प्रियकारकम् ॥३८॥
एवं मायाप्रभाविष्टो महाकालो वदन्निति ।
इति कालवचः श्रुत्वा कालं प्राह च कालिका ॥३९॥
माययाऽऽच्छाद्य चात्मानं निजस्त्रीरूपधारिणी ।
इतः प्रभृति स्त्रीमात्रं भविष्यति युगे युगे ॥४०॥
वल्ल्याद्यौषधयो देवि ! दिवा वल्लीस्वरूपताम् ।
रात्रौ स्त्रीरूपमासाद्य रतिकेलिः परस्परम् ॥४१॥

हे काली, हे प्रिये, हे शिवे ! तुम इन सुन्दरियों को देखो। ध्यान छोड़ दो, देखो, ये सभी सुन्दरियाँ अपने-अपने घरों को जा रही हैं ॥३७॥

हे महाकाली ! तुम्हारा रूप तो केवल महाकाल को मनोहर दिखाई पड़ता है। परन्तु ये अप्सराएँ तो त्रिलोक को भी मोह लेती हैं ॥३८॥

जब माया के वशीभूत उस महाकाल ने महाकाली से ऐसा कहा, तब काली ने महाकाल से कहा ॥३९॥

स्त्रीरूपधारिणी महाकाली ने माया से अपने को मोहित कर लिया और वे महादेव से कहने लगीं। आज से प्रत्येक युग में हर योनियों में स्त्रियाँ उत्पन्न होंगी ॥४०॥

वल्ली (लता) औषधियाँ आदि दिन में वल्ली एवं ओषधि के रूप में दिखाई पड़ेंगी। परन्तु रात्रि में ये सभी स्त्रीरूप धारण कर परस्पर रति-केलि करेंगी ॥४१॥

अज्ञानं चैव सर्वेषां भविष्यति युगे युगे ।
एवं शापं च दत्त्वा तु पुनः प्रोवाच कालिका ॥४२॥
विपरीतरतिं कृत्वा चिन्तयन्ति भजन्ति ये ।
तेषां वरं प्रदास्यामि नित्यं तत्र वसाम्यहम् ॥४३॥
इत्युक्त्वा कालिका विद्या तत्रैवान्तरधीयत ।
त्रिंशत् - त्रिखर्वं - षड्वृन्द-नवत्यर्बुद - कोटयः ॥४४॥
दर्शनार्थं तपस्तेपे सा वै कुत्र गता प्रिया ।
मम प्राणप्रिया देवी हाहा प्राणप्रिये शिवे ! ॥४५॥
किं करोमि क्व गच्छामि इत्येवं भ्रमसङ्कुलः ! ।
तस्याः काल्या दया जाता मम चिन्ता परः शिवः ।४६॥

इन्हें प्रत्येक युग में अज्ञान होगा । इस प्रकार शाप देकर कालिका ने पुनः कहा ॥४२॥

जो लोग विपरीत रति में आसक्त मेरा ध्यान करेंगे तथा भजन करेंगे, उन्हें मैं वरदान दूंगी तथा वहाँ नित्य निवास करूँगी ॥४३॥

ऐसा कहकर वह छत्तीस खरब छियानबे अरब करोड़ संख्या वाली कालीरूपी महाविद्या वहीं अन्तर्धान हो गयीं ॥४४॥

तब शङ्कर जी हा हा प्राणप्रिये, हा शिवे ! तुम कहाँ चली गयी ? ऐसा बारम्बार विलाप कर तप करने लगे ॥४५॥

अब मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? इस प्रकार भ्रम में पड़े हुए शिव को देख कर उस महाकाली के मन में दया आ गयी कि शिव हमारे बिना व्याकुल हो रहे हैं ॥४६॥

यन्त्रप्रस्तारबुद्धिस्तु काल्या दत्तातिसत्वरम् ।
यन्त्रयागं तदारभ्य पूर्वं बिन्दुत्वगोचरम् ॥४७॥
श्रीचक्रं यन्त्रप्रस्तार-रचनाभ्यास-तत्परः ।
इतस्ततो भ्राम्यमाणस्त्रैलोक्यं चक्रमध्यकम् ॥४८॥
चक्रपारं दर्शनार्थं कोट्यर्बुद-युगं गतम् ।
भक्तप्राणप्रिया देवी महाश्रीचक्रनायिका ॥४९॥
तत्र बिन्दौ परं रूपं सुन्दरं सुमनोहरम् ।
रूपं जातं महेशानि जाग्रत्-त्रिपुरसुन्दरि ! ॥५०॥
रूपं दृष्ट्वा महादेवो राजराजेश्वरोऽभवत् ।
तस्याः कटाक्षमात्रेण तस्या रूपधरः शिवः ॥५१॥

तब काली ने यन्त्र में अपने छिपे रहने की बुद्धि विस्तारपूर्वक शिव को बतायी। तभी से श्रीचक्ररूपी यन्त्रयाग में बिन्दु के द्वारा महाकाली का साक्षात्कार होने लगा ॥४७॥

श्रीचक्ररूपी यन्त्र के प्रस्तार की रचना का अभ्यास करने वाले शिव ने चक्र के मध्य में अवस्थित इधर-से-उधर भ्रमण करते हुए त्रिलोकी का दर्शन किया ॥४८॥

फिर चक्र के परे भगवती के दर्शन के लिए करोड़ों और अरबों वर्ष बीत गये। परन्तु शिव को भगवती का दर्शन नहीं मिला। तत्पश्चात् चक्र के परे बिन्दु में भक्त-प्राणप्रिया श्रीचक्र की नायिका भगवती का जाग्रत् परम मनोहर रूप दिखाई पड़ा ॥४९-५०॥

श्रीचक्र के बिन्दु में त्रिपुरसुन्दरी भगवती के उस रूप को देख कर महादेव ने राजराजेश्वर का रूप धारण कर लिया, तब उस भगवती के कटाक्ष मात्र के देखने से ही शिव त्रिपुरसुन्दरी के रूप में परिणत हो गये ॥५१॥

विना शृङ्गारसंयुक्ता तदा जाता महेश्वरी ।
विना काल्यंशतो देवि ! जगत्-स्थावर-जङ्गमम् ।५२।।
न शृङ्गारो न शक्तित्वं क्वाऽपि नास्ति महेश्वरी ।
सुन्दर्या प्रार्थिता काली तुष्टा प्रोवाच कालिका ।।५३।।
सर्वासां नेत्रकेशे च ममांशोऽत्र भविष्यति ।
पूर्वावस्थासु देवेशि ! ममांशस्तिष्ठति प्रिये ! ।।५४।।
साऽवस्था तरुणाख्या तु तदन्ते नैव तिष्ठति ।
मद्भक्तानां महेशानि ! सदा तिष्ठति निश्चितम् ।।५५।।

शिव को त्रिपुरसुन्दरी के रूप में देख कर महाकाली महेश्वरी शृङ्गाररहित हो गयीं और सारा स्थावर-जंगमात्मक विश्व काली के अंश से रहित हो गया ।।५२।।

महेश्वरी महाकाली के शृङ्गाररहित हो जाने के कारण त्रिलोकी में न कोई शक्ति रह गयी और न कोई शृंगार-सज्जा ही रह गयी । तब त्रिपुरसुन्दरी ने महाकाली की प्रार्थना की जिससे सन्तुष्ट होकर महाकालिका ने त्रिपुरसुन्दरी से कहा ।।५३।।

हे देवेशि, हे प्रिये ! सभी प्राणियों के पूर्वावस्था में नेत्र तथा केशों पर मेरा अंश विद्यमान रहेगा ।।५४।।

उस पूर्वावस्था में, जवानी की स्थिति में मेरा अंश स्पष्टरूप से दिखाई पड़ेगा । जवानी चले जाने पर फिर मेरे अंश का लोप हो जायेगा । परन्तु मेरे भक्तों पर मेरी छाया बराबर निश्चित रूप से रहेगी ।।५५।।

शक्तिस्तु कुण्ठिता जाता तथा रूपं न सुन्दरम् ।
चिन्ताविष्टा तु मलिना जाता तत्र तु सुन्दरी ॥५६॥
क्षणं स्थित्वा ध्यानपरा काली चिन्तनतत्परा ।
तदा काली प्रसन्नाऽभूत् क्षणार्द्धेन महेश्वरी ॥५७॥
वरं ब्रूहि वरं ब्रूहि वरं ब्रूहीति सादरम् ।

सुन्दर्युवाच

मम सिद्धिवरं देहि वरो यः प्रार्थ्यते मया ॥५८॥
तादृगुपायं कथय येन शक्तिर्भविष्यति ? ।

श्रीकाल्युवाच

मम नामसहस्रं च मया पूर्वं विनिर्मितम् ॥५९॥

फिर भी त्रिपुरसुन्दरी की शक्ति कुण्ठित हो गयी तथा रूप भी सुन्दर नहीं हुआ। अतः वह मलिन हो चिन्ता से आविष्ट हो गयी ॥५६॥

फिर क्षण भर अवस्थित रह कर महाकाली का ध्यान करने लगीं। तब थोड़े ही देर के बाद महेश्वरी महाकाली प्रसन्न हो गयीं ॥५७॥

और त्रिपुरसुन्दरी को कहने लगीं—हे त्रिपुरसुन्दरि ! वर माँगो, वर माँगो।

त्रिपुरसुन्दरी ने कहा—हे महेश्वरि ! मुझे जो वर चाहिए वह वरदान दो। मुझे सिद्धि प्रदान करो तथा उस उपाय को भी कहो, जिससे मुझमें शक्ति उत्पन्न हो ॥५८॥

तब महाकाली ने कहा--मेरे द्वारा पूर्व में बनाया हुआ मेरा सहस्र नाम है ॥५९॥

मत्स्वरूपं ककाराख्यं महासाम्राज्यनामकम् ।
वरदानाभिधं नाम क्षणार्द्धाद् वरदायकम् ॥६०॥
तत् पठस्व महामाये ! तव शक्तिर्भविष्यति ।
ततः प्रभृति श्रीविद्या तन्नामपाठतत्परा ॥६१॥
तदेव नामसाहस्रं सुन्दरीशक्तिदायकम् ।
कथ्यते नामसाहस्रं सावधानमनाः शृणु ॥६२॥
सर्वसाम्राज्यमेधाख्य-नामसाहस्रकस्य च ।
महाकाल ऋषिः प्रोक्तं उष्णिक्छन्दः प्रकीर्तितम् ॥६३॥
देवता दक्षिणा काली मायाबीजं प्रकीर्तितम् ।
हूँशक्तिः कालिका बीजं कीलकं परिकीर्तितम् ॥६४॥

उसमें ककाररूप से मेरा स्वरूप संस्थित है। जो महासाम्राज्य को देने वाला है। उस सहस्रनाम का दूसरा नाम 'वरदान' भी है, जो क्षणभर में समस्त इच्छाओं को पूर्ण करता है ॥६०॥

हे महामाये ! मेरे उस सहस्रनाम का पाठ करो, तुम्हें शक्ति प्राप्त होगी। तभी से श्रीविद्या त्रिपुरसुन्दरी उस महाकाली सहस्रनाम का पाठ करती है ॥६१॥

यह वही कालीसहस्रनाम है, जो त्रिपुरसुन्दरी को भी शक्ति प्रदान करने वाला है। उसी कालीसहस्रनाम को हे पार्वती ! मैं तुमसे कह रहा हूँ, सावधानी से सुनो ॥६२॥

इस 'सर्वसाम्राज्यमेधादायक काली सहस्रनाम' के महाकाल ऋषि हैं, उष्णिक छन्द है, दक्षिण महाकाली देवता हैं, ह्रीं बीज है, 'हूँ' शक्ति है, 'क्रीं' कीलक है ॥६३-६४॥

ध्यानं च पूर्ववत् कृत्वा साधयस्वेष्टसाधनम् ।
कालिका - वरदानादि - स्वेष्टार्थे विनियोगतः ।
कीलकेन षडङ्गानि षड्दीर्घाब्जेन कारयेत् ॥६५॥

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीसर्वसाम्राज्यमेधानामकालीरूप-ककरात्मक-सहस्र-नामस्तोत्रमन्त्रस्य महाकाल ऋषिरनुष्टुप्छन्दः श्रीदक्षिणमहाकाली देवता, ह्रीं बीजम्, हूं शक्तिः, क्रींकीलकम्, कालीवरदानाद्यखिलेष्टार्थे जपे विनियोगः ।

ॐ क्रींकाली क्रूंकराली च कल्याणी कमला कला ।
कलावती कलाढ्या च कलापूज्या कलात्मिका ॥१॥
कलादृष्टा कलापुष्टा कलामस्ता कलाधरा ।
कलाकोटिसमाभासा कलाकोटि-प्रपूजिता ॥२॥
कलाकर्मकलाधारा कलापारा कलागमा ।
कलाधारा कमलिनी ककारा करुणा कविः ॥३॥

कालिका के वरदान से इष्टसिद्धि के लिए विनियोग है। फिर कीलक से षडंगन्यास, करन्यास तथा पूर्ववत् महाकाली का ध्यान कर अपने अभीष्टसिद्धि के लिए काली-सहस्रनाम का पाठ करे ॥५६॥

विनियोगार्थ – इस श्रीसर्वसाम्राज्य मेधादायक ककाररूप काली-सहस्रनामस्तोत्र मन्त्र के महाकाल ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, दक्षिण-महाकाली देवता, 'ह्रीं' बीज, 'हूँ' शक्ति, 'क्रीं' कीलक, काली के वरदान से सकल अभीष्ट सिद्धि के लिए विनियोग है।

इसके बाद 'ॐ क्रींकाली क्रूंकराली च' श्लोक ॥ १ ॥ से लेकर

ककारवर्णसर्वाङ्गी कलाकोटिप्रभूषिता ।
ककारकोटिगुणिता ककारकोटिभूषणा ॥४॥
ककारवर्णहृदया ककारमनुमण्डिता ।
ककारवर्णनिलया काकशब्दपरायणा ॥५॥
ककारवर्णमुकुटा ककारवर्णभूषणा ।
ककारवर्णरूपा च ककशब्दपरायणा ॥६॥
ककवीरास्फालरता कमलाकरपूजिता ।
कमलाकरनाथा च कमलाकररूपधृक् ॥७॥
कमलाकरसिद्धिस्था कमलाकरपारदा ।
कमलाकरमध्यस्था कमलाकरतोषिता ॥८॥
कथङ्कारपरालापा कथङ्कारपरायणा ।
कथङ्कारपदान्तस्था कथङ्कारपदार्थभूः ॥९॥
कमलाक्षी कमलजा कमलाक्षप्रपूजिता ।
कमलाक्षवरोद्युक्ता ककारकर्बुराक्षरा ॥१०॥
करतारा करच्छिन्ना करश्यामा करार्णवा ।
करपूज्या कररता करदा करपूजिता ॥११॥

'क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं तथा हूं हूं फट स्वाहा मन्त्ररूपिणी' श्लोक ॥१८२॥ पर्यन्त 'सर्वसाम्राज्यमेधा' नामक काली सहस्रनाम का पाठ करे ।

विशेष—ग्रन्थ विस्तृत न हो, एतदर्थं इस काली-सहस्रनाम स्तोत्र में मात्र नाम-गणना होने के ही कारण इसकी हिन्दी टीका नहीं लिखी गयी है । इस विवशता हेतु पाठक-गण क्षमा करेंगे । —सम्पादक

करतोया करामर्षा कर्मनाशा करप्रिया ।
करप्राणा करकजा करका करकान्तरा ॥१२॥
करकाचलरूपा च करकाचलशोभिनी ।
करकाचलपुत्री च करकाचलतोषिता ॥१३॥
करकाचलगेहस्था करकाचलरक्षिणी ।
करकाचलसम्मान्या करकाचलकारिणी ॥१४॥
करकाचलवर्षाढ्या करकाचलरञ्जिता ।
करकाचलकान्तारा करकाचलमालिनी ॥१५॥
करकाचलभोज्या च करकाचलरूपिणी ।
करामलकसंस्था च करामलकसिद्धिदा ॥१६॥
करामलकसम्पूज्या करामलकतारिणी ।
करामलककाली च करामलकरोचिनी ॥१७॥
करामलकमाता च करामलकसेविनी ।
करामलकवद्ध्येया करामलकदायिनी ॥१८॥
कञ्जनेत्रा कञ्जगतिः कञ्जस्था कञ्जधारिणी ।
कञ्जमालाप्रियकरी कञ्जरूपा च कञ्जना ॥१९॥
कञ्जजातिः कञ्जगतिः कञ्जहोमपरायणा ।
कञ्जमण्डलमध्यस्था कञ्जाभरणभूषिता ॥२०॥
कञ्जसम्माननिरता कञ्जोत्पत्तिपरायणा ।
कञ्जराशि-समाकारा कञ्जारण्यनिवासिनी ॥२१॥
करञ्जवृक्षमध्यस्था करञ्जवृक्षवासिनी ।
करञ्जफलभाषाढ्या करञ्जारण्यवासिनी ॥२२॥

करञ्जमालाभरणा करवालपरायणा ।
करवालप्रहृष्टात्मा करवालप्रियागतिः ॥२३॥
करवालप्रियाकन्या करवालविहारिणी ।
करवालमयीकर्मा करवालप्रियंकरी ॥२४॥
कबन्धमालाभरणा कबन्धराशिमध्यगा ।
कबन्धकूटसंस्थाना कबन्धानन्तभूषणा ॥२५॥
कबन्धनादसन्तुष्टा कबन्धासनधारिणी ।
कबन्धगृहमध्यस्था कबन्धवनवासिनी ॥२६॥
कबन्धकाञ्चीकरणी कबन्धराशिभूषणा ।
कबन्धमालाजयदा कबन्धदेहवासिनी ॥२७॥
कबन्धासनमान्या च कपालमाल्यधारिणी ।
कपालमालामध्यस्था कपालव्रततोषिता ॥२८॥
कपालदीपसन्तुष्टा कपालदीपरूपिणी ।
कपालदीपवरदा कपालकज्जलस्थिता ॥२९॥
कपालमालाजयदा कपालजपतोषिणी ।
कपालसिद्धिसंहृष्टा कपालभोजनोद्यता ॥३०॥
कपालव्रतसंस्थाना कपालकमलालया ।
कवित्वामृतसारा च कवित्वामृतसागरा ॥३१॥
कवित्वसिद्धिसंहृष्टा कवित्वादानकारिणी ।
कविपूज्या कविगतिः कविरूपा कविप्रिया ॥३२॥
कविब्रह्मानन्दरूपा कवित्वव्रततोषिता ।
कविमानससंस्थाना कविवाञ्छाप्रपूरिणी ॥३३॥

कविकण्ठस्थिता कंह्रींकंकंकंकविपूर्तिदा ।
कज्जला कज्जलादान-मानसा कज्जलप्रिया ॥३४॥
कपालकज्जलसमा कज्जलेशप्रपूजिता ।
कज्जलार्णवमध्यस्था कज्जलानन्दरूपिणी ॥३५॥
कज्जलप्रियसन्तुष्टा कज्जलप्रियतोषिणी ।
कपालमालाभरणा कपालकरभूषणा ॥३६॥
कपालकरभूषाढ्या कपालचक्रमण्डिता ।
कपालकोटिनिलया कपालदुर्गकारिणी ॥३७॥
कपालगिरिसंस्थाना कपालचक्रवासिनी ।
कपालपात्रसन्तुष्टा कपालार्घ्यपरायणा ॥३८॥
कपालार्घ्यप्रियप्राणा कपालार्घ्यवरप्रदा ।
कपालचक्ररूपा च कपालरूपमात्रगा ॥३९॥
कदली कदलीरूपा कदलीवनवासिनी ।
कदलीपुष्पसम्प्रीता कदलीफलमानसा ॥४०॥
कदलीहोमसन्तुष्टा कदलीदर्शनोद्यता ।
कदलीगर्भमध्यस्था कदलीवनसुन्दरी ॥४१॥
कदम्बपुष्पनिलया कदम्बवनमध्यगा ।
कदम्बकुसुमामोदा कदम्बवनतोषिणी ॥४२॥
कदम्बपुष्पसम्पूज्या कदम्बपुष्पहोमदा ।
कदम्बपुष्पमध्यस्था कदम्बफलभोजिनी ॥४३॥

कदम्बकाननान्तःस्था　कदम्बाचलवासिनी ।
कक्षपा कक्षपाराध्या　कक्षपासनसंस्थिता ॥४४॥
कर्णपूरा कर्णनासा　कर्णाढ्या कालभैरवी ।
कलप्रीता कलहदा　कलहा कलहातुरा ॥४५॥
कर्णयक्षी कर्णवार्ता　कथिनी कर्णसुन्दरी ।
कर्णपिशाचिनी कर्णमञ्जरी　कविकक्षदा ॥४६॥
कविकक्षाविरूपाढ्या　कविकक्षस्वरूपिणी ।
कस्तूरीमृगसन्तोषा　कस्तूरीमृगरूपिणी ॥४७॥
कस्तूरीमृगसंस्थाना　कस्तूरीमृगमध्यगा ।
कस्तूरीरसनीलाङ्गी　कस्तूरीगन्धतोषिता ॥४८॥
कस्तूरीपूजकप्राणा　कस्तूरीपूजकप्रिया ।
कस्तूरीप्रेमसन्तुष्टा　कस्तूरीप्राणधारिणी ॥४९॥
कस्तूरीपूजकानन्दा　कस्तूरीगन्धरूपिणी ।
कस्तूरीमालिकारूपा　कस्तूरीभोजनप्रिया ॥५०॥
कस्तूरीतिलकानन्दा　कस्तूरीतिलकप्रिया ।
कस्तूरीहोमसन्तुष्टा　कस्तूरीतर्पणोद्यता ॥५१॥
कस्तूरीमार्जनोद्युक्ता　कस्तूरीचक्रपूजिता ।
कस्तूरीपुष्पसम्पूज्या　कस्तूरीचर्वणोद्यता ॥५२॥
कस्तूरीगर्भमध्यस्था　कस्तूरीवस्त्रधारिणी ।
कस्तूरिकामोदरता　कस्तूरीवनवासिनी ॥५३॥
कस्तूरीवनसंरक्षा　कस्तूरीप्रेमधारिणी ।
कस्तूरीशक्तिनिलया　कस्तूरीशक्तिकुण्डगा ॥५४॥

कस्तूरीकुण्डसंस्नाता कस्तूरीकुण्डमज्जना ।
कस्तूरीजीवसन्तुष्टा कस्तूरीजीवधारिणी ॥५५॥

कस्तूरीपरमामोदा कस्तूरीजीवनक्षमा ।
कस्तूरीजातिभावस्था कस्तूरीगन्धचुम्बना ॥५६॥

कस्तूरीगन्धसंशोभा-विराजित-कपालभूः ।
कस्तूरीमदनान्तःस्था कस्तूरीमदहर्षदा ॥५७॥

कस्तूरीकविताढ्या कस्तूरीगृहमध्यगा ।
कस्तूरीस्पर्शकप्राणा कस्तूरीविन्दकान्तका ॥५८॥

कस्तूर्यामोदरसिका कस्तूरीक्रीडनोद्यता ।
कस्तूरीदाननिरता कस्तूरीवरदायिनी ॥५९॥

कस्तूरीस्थापनासक्ता कस्तूरीस्थानरञ्जिनी ।
कस्तूरीकुशलप्रश्ना कस्तूरीस्तुतिवन्दिता ॥६०॥

कस्तूरीवन्दकाराध्या कस्तूरीस्थानवासिनी ।
कहरूपा कहाख्या च कहानन्दा कहात्मभूः ॥६१॥

कहपूज्या कहात्याख्या कहहेया कहात्मिका ।
कहमाला कण्ठभूषा कहमन्त्रजपोद्यता ॥६२॥

कहनामस्मृतिपरा कहनामपरायणा ।
कहपरायणरता कहदेवी कहेश्वरी ॥६३॥

कहहेतुकहानन्दा कहनादपरायणा ।
कहमाता कहान्तःस्था कहमन्त्रा कहेश्वरा ॥६४॥

कहगेया कहाराध्या कहध्यानपरायणा ।
कहतन्त्रा कहकहा कहचर्यापरायणा ॥६५॥
कहचारा कहगतिः कहताण्डवकारिणी ।
कहारण्या कहगतिः कहशक्तिपरायणा ॥६६॥
कहराज्यनता कर्मसाक्षिणी कर्मसुन्दरी ।
कर्मविद्या कर्मगतिः कर्मतन्त्रपरायणा ॥६७॥
कर्ममात्रा कर्मगात्रा कर्मधर्मपरायणा ।
कर्मरेखानाशकर्त्री कर्मरेखाविनोदिनी ॥६८॥
कर्मरेखामोहकारी कर्मकीर्तिपरायणा ।
कर्मविद्या कर्मसारा कर्मधारा च कर्मभूः ॥६९॥
कर्मकारी कर्महारी कर्मकौतुकसुन्दरी ।
कर्मकाली कर्मतारा कर्मच्छिन्ना च कर्मदा ॥७०॥
कर्मचाण्डालिनी कर्मवेदमाता च कर्मभूः ।
कर्मकाण्डरतानन्ता कर्मकाण्डानुमानिता ॥७१॥
कर्मकाण्डपरीणाहा कमठी कमठाकृतिः ।
कमठाराध्यहृदया कमठाकण्ठसुन्दरी ॥७२॥
कमठासनसंसेव्या कमठीकर्मतत्परा ।
करुणाकरकान्ता च करुणाकरवन्दिता ॥७३॥
कठोराकरमाला च कठोरकुचधारिणी ।
कपर्दिनी कपटिनी कठिनी कङ्कभूषणा ॥७४॥
करभोरूः कठिनदा करभा करमालया ।
कलभाषामयी कल्पा कल्पना कल्पदायिनी ॥७५॥

कमलस्था कलामाला कमलास्या क्वणत्प्रभा ।
ककुद्मिनी कष्टवती करणीयकथार्चिता ॥७६॥
कथार्चिता कचतनुः कचसुन्दरधारिणी ।
कठोरकुचसंलग्ना कटिसूत्रविराजिता ॥७७॥
कर्णभक्षप्रिया कन्दाकथा कन्दगतिः कलिः ।
कलिघ्नी कलिदूती च कविनायकपूजिता ॥७८॥
कणकक्षानियन्त्री च कश्चित्कविवरार्चिता ।
कर्त्री च कर्तृकाभूषा करिणी कणशत्रुपा ॥७९॥
करणेशी करणपा कलवाचा कलानिधिः ।
कलना कलनाधारा कलनाकारिकाकरा ॥८०॥
कलगेया कर्कराशिः कर्कराशिप्रपूजिता ।
कन्याराशिः कन्यका च कन्यकाप्रियभाषिणी ॥८१॥
कन्यकादानसन्तुष्टा कन्यकादानतोषिणी ।
कन्यादानकरानन्दा कन्यादानग्रहेष्टदा ॥८२॥
कर्षणाकक्षदहना कामिता कमलासना ।
करमालानन्दकर्त्री करमालाप्रपोषिता ॥८३॥
करमालाशयानन्दा करमालासमागमा ।
करमालासिद्धिदात्री करमालाकरप्रिया ॥८४॥
करप्रिया कररता करदानपरायणा ।
कलानन्दा कलिगतिः कलिपूज्या कलिप्रसूः ॥८५॥

कलनाद-निनादस्था कलनाद-वरप्रदा ।
कलनाद-समाजस्था कहोला च कहोलदा ॥८६॥
कहोलगेह-मध्यस्था कहोलवरदायिनी ।
कहोलकविताधारा कहोलऋषिमानिता ॥८७॥
कहोलमानसाराध्या कहोलवाक्यकारिणी ।
कर्तृरूपा कर्तृमयी कर्तृमाता च कर्तरी ॥८८॥
कनीया कनकाराध्या कनीनकमयी तथा ।
कनीयानन्दनिलया कनकानन्दतोषिता ॥८९॥
कनीयककराकाष्ठा कथार्णवकरी करी ।
करिगम्या करिगतिः करिध्वजपरायणा ॥९०॥
करिनाथप्रिया कण्डा कथानकप्रतोषिता ।
कमनीया कमनका कमनीय-विभूषणा ॥९१॥
कमनीयसमाजस्था कमनीयव्रतप्रिया ।
कमनीयगुणाराध्या कपिला कपिलेश्वरी ॥९२॥
कपिलाराध्यहृदया कपिलाप्रियवादिनी ।
कहचक्रमन्त्रवर्णा कहचक्रप्रसूनका ॥९३॥
क-ए-ईल्-ह्रींस्वरूपा च क-ए-ईल्ह्रीं-वरप्रदा ।
क-ए-ईल्-ह्रींसिद्धिदात्री क-ए-ईल् ह्रींस्वरूपिणी ॥९४॥
क-ए-ईल्-ह्रींमन्त्रवर्णा क-ए-ईल्-ह्रींप्रसूकला ।
कवर्गा च कपाटस्था कपाटोद्घाटनक्षमा ॥९५॥
कङ्काली च कपाली च कङ्कालप्रियभाषिणी ।
कङ्कालभैरवाराध्या कङ्कालमानसंस्थिता ॥९६॥

कङ्कालमोहनिरता कङ्कालमोहदायिनी ।
कलुषघ्नी कलुषहा कलुषार्तिविनाशिनी ॥९७॥
कलिपुष्पा कलादाना कशिपुः कश्यपार्चिता ।
कश्यपा कश्यपाराध्या कलिपूर्णकलेवरा ॥९८॥
कलेवरकरी काञ्ची कवर्गा च करालका ।
करालभैरवाराध्या करालभैरवेश्वरी ॥९९॥
कराला कलनाधारा कपर्दीशवरप्रदा ।
कपर्दीशप्रेमलता कपर्दिमालिकायुता ॥१००॥
कपर्दिजपमालाढ्या करवीरप्रसूनदा ।
करवीरप्रियप्राणा करवीरप्रपूजिता ॥१०१॥
कर्णिकारसमाकारा कर्णिकारप्रपूजिता ।
करिषाग्निस्थिता कर्षाकर्षमात्रसुवर्णदा ॥१०२॥
कलशा कलशाराध्या कषाया करिगानदा ।
कपिला कलकण्ठी च कलिकल्पलता मता ॥१०३॥
कल्पलता कल्पमाता कल्पकारी च कल्पभूः ।
कर्पूरामोदरुचिरा कर्पूरामोदधारिणी ॥१०४॥
कर्पूरमालाभरणा कर्पूरवासपूर्तिदा ।
कर्पूरमालाजयदा कर्पूरार्णवमध्यगा ॥१०५॥
कर्पूरतर्पणरता कटकाम्बरधारिणी ।
कपटेश्वरसम्पूज्या कपटेश्वररूपिणी ॥१०६॥

कट्ुः कविध्वजाराध्या कलापपुष्पधारिणी ।
कलापपुष्परुचिरा कलापपुष्पपूजिता ॥१०७॥
ऋकचा ऋकचाराध्या कथं ब्रूमा करालता ।
कथंकार-विनिर्मुक्ता काली कालक्रिया क्रतुः ॥१०८॥
कामिनी कामिनीपूज्या कामिनीपुष्पधारिणी ।
कामिनीपुष्पनिलया कामिनीपुष्पपूर्णिमा ॥१०९॥
कामिनीपुष्पपूजार्हा सामिनीपुष्पभूषणा ।
कामिनीपुष्पतिलका कामिनीकुण्डचुम्बना ॥११०॥
कामिनीयोगसन्तुष्टा कामिनीयोगभोगदा ।
कामिनीकुण्डसम्मग्ना कामिनीकुण्डमध्यगा ॥१११॥
कामिनीमानसाराध्या कामिनीमानतोषिता ।
कामिनीमानसञ्चारा कालिका कालकालिका ॥११२॥
कामा च कामदेवी च कामेशी कामसम्भवा ।
कामभावा कामरता कामार्ता काममञ्जरी ॥११३॥
काममञ्जीर-रणिता कामदेवप्रियान्तरा ।
कामकाली कामकला कालिका कमलार्चिता ॥११४॥
कादिका कमला काली कालानलसमप्रभा ।
कल्पान्तदहना कान्ता कान्तारप्रियवासिनी ॥११५॥
कालपूज्या कालरता कालमाता च कालिनी ।
कालवीरा कालघोरा कालसिद्धा च कालदा ॥११६॥
कालाञ्जन-समाकारा कालञ्जरनिवासिनी ।
कालऋद्धिः कालवृद्धिः कारागृहविमोचिनी ॥११७॥

कादिविद्या कादिमाता कादिस्था कादिसुन्दरी ।
काशी काञ्ची च काञ्चीशा काशीशवरदायिनी ॥११८॥
क्रींबीजा चैव क्रांबीजा हृदयाय नमः स्मृता ।
काम्या काम्यगतिः काम्यसिद्धिदात्री च काम्यभूः॥११९॥
कामाख्या कामरूपा च काम्यचापविमोचिनी ।
कामदेवकलारामा कामदेवकलालया ॥१२०॥
कामरात्रिः कामदात्री कान्ताराचलवासिनी ।
कामरूपा कालगतिः कामयोगपरायणा ॥१२१॥
कामसम्मर्दनरता कामगेहविकाशिनी ।
कालभैरवभार्या च कालभैरवकामिनी ॥१२२॥
कालभैरवयोगस्था कालभैरवभोगदा ।
कामधेनुः कामदोग्ध्री काममाता च कान्तिदा ॥१२३॥
कामुका कामुकाराध्या कामुकानन्दवर्द्धिनी ।
कार्तवीर्या कार्तिकेया कार्तिकेयप्रपूजिता ॥१२४॥
कार्या कारणदा कार्यकारिणी कारणान्तरा ।
कान्तिगम्या कान्तिमयी कात्या कात्यायनी च का॥१२५॥
कामसारा च काश्मीरा काश्मीराचारतत्परा ।
कामरूपाचाररता कामरूपप्रियंवदा ॥१२६॥
कामरूपाचारसिद्धिः कामरूपमनोमयी ।
कार्तिकी कार्तिकाराध्या काञ्चनारप्रसूनभूः ॥१२७॥
काञ्चनारप्रसूनाभा काञ्चनारप्रपूजिता ।
काञ्चरूपा काञ्चभूमिः कांस्यपात्रप्रभोजिनी ॥१२८॥

कांस्यध्वनिमयी कामसुन्दरी कामचुम्बना ।
काशपुष्पप्रतीकाशा कामद्रुमसमागमा ॥१२९॥
कामपुष्पा कामभूमिः कामपूज्या च कामदा ।
कामदेहा कामगेहा कामबीजपरायणा ॥१३०॥
कामध्वजसमारूढा कामध्वजसमास्थिता ।
काश्यपी काश्यापाराध्या काश्यपानन्ददायिनी ॥१३१॥
कालिन्दीजलसङ्काशा कालिन्दीजलपूजिता ।
कामदेवपूजानिरता कामदेवपरमार्थदा ॥१०२॥
कार्मणा कार्मणाकारा कामकार्मणकारिणी ।
कार्मणत्रोटनकरी काकिनी कारणाह्वया ॥१३३॥
काव्यामृता च कालिङ्गा कालिङ्गमर्दनोद्यता ।
कालागुरुविभूषाढ्या कालागुरुविभूतिदा ॥१३४॥
कालागुरुसुगन्धा च कालागुरुप्रतर्पणा ।
कावेरीनीरसम्प्रीता कावेरीतीरवासिनी ॥१३५॥
कालचक्रभ्रमाकारा कालचक्रनिवासिनी ।
कानना काननाधारा कारुः कारुणिकामयी ॥१२६॥
काम्पिल्यवासिनी काष्ठा कामपत्नी च कामभूः ।
कादम्बरीपानरता तथा कादम्बरीकला ॥१२७॥
कामवन्द्या च कामेशी कामराजप्रपूजिता ।
कामराजेश्वरीविद्या कामकौतुकसुन्दरी ॥१३८॥
काम्बोजजा काञ्चिनदा कांस्यकाञ्चनकारिणी ।
काञ्चनाद्रिसमाकारा काञ्चनाद्रिप्रदानदा ॥१२९॥

कामकीर्तिः कामकेशी कारिका कान्तराश्रया ।
कामभेदी च कामार्तिनाशिनी कामभूमिका ॥१४०॥
कालनिर्णाशिनी काव्यवनिता कामरूपिणी ।
कायस्था कामसन्दीप्तिः काव्यदा कालसुन्दरी ॥१४१॥
कामेशी कारणवरा कामेशीपूजनोद्यता ।
काञ्चीनूपुरभूषाढ्या कुङ्कुमाभरणान्विता ॥१४२॥
कालचक्रा कालगतिः कालचक्रामनोभवा ।
कुन्दमध्या कुन्दपुष्पा कुन्दपुष्पप्रिया कुजा ॥१४३॥
कुजमाता कुजाराध्या कुठारवरधारिणी ।
कुञ्जरस्था कुशरता कुशेशयविलोचना ॥१४४॥
कुनठी कुररी कुद्रा कुरङ्गी कुटजाश्रया ।
कुम्भीनसविभूषा च कुम्भीनसवधोद्यता ॥१४५॥
कुम्भकर्णमनोल्लासा कुलचूडामणिः कुला ।
कुलालगृहकन्या च कुलचूडामणिप्रिया ॥१४६॥
कुलपूज्या कुलाराध्या कुलपूजापरायणा ।
कुलभूषा तथा कुक्षिः कुररीगणसेविता ॥१४७॥
कुलपुष्पा कुलरता कुलपुष्पपरायणा ।
कुलवस्त्रा कुलाराध्या कुलकुण्डसमप्रभा ॥१४८॥
कुलकुण्डसमोल्लासा कुण्डपुष्पपरायणा ।
कुण्डपुष्पाप्रसन्नास्या कुण्डगोलोद्भवात्मिका ॥१४९॥
कुण्डगोलोद्भवाधारा कुण्डगोलमयी कुहूः ।
कुण्डगोलप्रियप्राणा कुण्डगोलप्रपूजिता ॥१५०॥

कुण्डगोलमनोल्लासा कुण्डगोलबलप्रदा ।
कुण्डदेवरता क्रुद्धा कुलसिद्धिकरा परा ॥१५१॥
कुलकुण्डसमाकारा कुलकुण्डसमानभूः ।
कुण्डसिद्धिः कुण्डऋद्धिः कुमारीपूजनोद्यता ॥१५२॥
कुमारीपूजकप्राणा कुमारीपूजकालया ।
कुमारीकामसन्तुष्टा कुमारीपूजनोत्सुका ॥१५३॥
कुमारीव्रतसन्तुष्टा कुमारीरूपधारिणी ।
कुमारीभोजनप्रीता कुमारी च कुमारदा ॥१५४॥
कुमारमाता कूलदा कुलयोनिः कुलेश्वरी ।
कुललिङ्गा कुलानन्दा कुलरम्या कुतर्कधृक् ॥१५५॥
कुन्ती च कुलकान्ता च कुलमार्गपरायणा ।
कुल्ला च कुरुकुल्ला च कुल्लुका कुलकामदा ॥१५६॥
कुलिशाङ्गी कुब्जिका च कुब्जिकानन्दवर्धिनी ।
कुलीना कुञ्जरगतिः कुञ्जरेश्वरगामिनी ॥१५७॥
कुलपाली कुलवती तथैव कुलदीपिका ।
कुलयोगेश्वरी कुण्डा कुङ्कुमारुणविग्रहा ॥१५८॥
कुङ्कुमानन्दसन्तोषा कुङ्कुमार्णववासिनी ।
कुसुमा कुसुमप्रीता कुलभूः कुलसुन्दरी ॥१५९॥
कुमुद्वती कुमुदिनी कुशला कुलटालया ।
कुलटालयमध्यस्था कुलटासङ्गतोषिता ॥१६०॥
कुलटाभवनोद्युक्ता कुशावर्ता कुलार्णवा ।
कुलार्णवाचाररता कुण्डली कुण्डलाकृतिः ॥१६१॥

कुमती च कुलश्रेष्ठा कुलचक्रपरायणा ।
कूटस्था कूटदृष्टिश्च कुन्तला कुन्तलाकृतिः ॥१६२॥
कुशलाकृतिरूपा च कूर्चबीजधरा च कूः ।
कुं कुं कुं कुं शब्दरता क्रूं क्रूं क्रूं क्रूं परायणा ॥१६३॥
कुं कुं कुं शब्दनिलया कुक्कुरालयवासिनी ।
कुक्कुरासङ्गसंयुक्ता कुक्कुरानन्तविग्रहा ॥१६४॥
कूर्चारम्भा कूर्चबीजा कूर्चजापपरायणा ।
कुचस्पर्शनसन्तुष्टा कुचालिङ्गनहर्षदा ॥१६५॥
कुगतिघ्नी कुबेरार्च्या कुचभूः कुलनायिका ।
कुगायना कुचधरा कुमाता कुन्ददन्तिनी ॥१६६॥
कुगेया कुहराभाषा कुगेया कुघ्नदारिका ।
कीर्तिः किरातिनी क्लिन्ना किन्नरा किन्नरी क्रिया॥१६७॥
क्रींकारा क्रींजपासक्ता क्रींह्रूँस्त्रींमन्त्ररूपिणी ।
कीर्मीरितदृशापाङ्गी किशोरी च किरीटिनी ॥१६८॥
कीटभाषा कीटयोनिः कीटमाता च कीटदा ।
किंशुका कीरभाषा च क्रियासारा क्रियावती ॥१६९॥
कींकींशब्दपरा क्लींक्लींक्लूंक्लैंक्लौंमन्त्ररूपिणी ।
कांकींकूंकैंस्वरूपा च कःफट्मन्त्रस्वरूपिणी ॥१७०॥
केतकीभूषणानन्दा केतकीभरणान्विता ।
कैकदा केशिनी केशी केशीसूदनतत्परा ॥१७१॥

केशरूपा केशमुक्ता कंकेयी कौशिकी तथा ।
कैरवा कैरवाह्लादा केशरा केतुरूपिणी ॥१७२॥
केशवाराध्यहृदया केशवासक्तमानसा ।
क्लव्यविनाशिनी क्लैं च क्लैंबीजजपतोषिता ॥१७३॥
कौशल्या कोशलाक्षी च कोशा च कोमला तथा ।
कोलापुरनिवासा च कोलासुरविनाशिनी ॥१७४॥
कोटिरूपा कोटिरता क्रोधिनी क्रोधरूपिणी ।
केका च कोकिला कोटिः कोटिमन्त्रपरायणा ॥१७५॥
कोटयनन्तमन्त्रयुता कैंरूपा केरलाश्रया ।
केरलाचारनिपुणा केरलेन्द्रगृहस्थिता ॥१७६॥
केदाराश्रमसंस्था च केदारेश्वरपूजिता ।
क्रोधरूपा क्रोधपदा क्रोधमाता च कौशिकी ॥१७७॥
कोदण्डधारिणी क्रौञ्ची कौशल्या कौलमार्गगा ।
कौलिनी कौलिकाराध्या कौलिकागारवासिनी ॥१७८॥
कौतुकी कौमुदी कौला कुमारी कौरवार्चिता ।
कौण्डिन्या कौशिकी क्रोधाज्वालाभासुररूपिणी ॥१७९॥
कोटिकालानलज्वाला कोटिमार्तण्डविग्रहा ।
कृत्तिका कृष्णवर्णा च कृष्णकृत्या [1]क्रियातुरा ॥१८०॥
कृशाङ्गी कृतकृत्या च क्रःफट्स्वाहास्वरूपिणी ।
क्रौंक्रौंहूंफट्मन्त्रवर्णा क्रौंह्रौंहूंफट् नमः स्वधा ॥१८१॥

१. 'कृपातुरा' इत्यपि पाठः ।

क्रींक्रींह्रींह्रीं तथा ह्रूँ ह्रूँ फट्स्वाहामन्त्ररूपिणी ।
इति श्रीसर्वसाम्राज्य-मेधानाम सहस्रकम् ।।१८२।।
सुन्दरीशक्तिदानाख्या-स्वरूपाभिधमेव च ।
कथितं दक्षिणाकाल्याः सुन्दर्यै प्रीतियोगतः ।। १ ।।
वरदानप्रसङ्गेन रहस्यमपि दर्शितम् ।
गोपनीयं सदा भक्त्या पठनीयं परात्परम् ।। २ ।।
प्रातर्मध्याह्नकाले च मध्याद्धरात्रयोरपि ।
यज्ञकाले जपान्ते च पठनीयं विशेषतः ।। ३ ।।

'क्रीं क्रीं तथा ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं फट् स्वाहा' रूप मन्त्र वाली भगवती श्री महाकाली के सर्वसाम्राज्यमेधा नामक सहस्त्र नाम मन्त्र को मैंने हे पार्वती ! तुमसे कहा ।।१८२।।

यह काली सहस्रनाम त्रिपुरसुन्दरी को शक्ति देने वाला एवं ककार रूप इसका स्वरूप है, जिसे महाकाली ने त्रिपुसुन्दरी के लिए उपदेश किया था ।।१।।

तथा त्रिपुरसुन्दरी को वरदान देने के प्रसंग से महाकाली के रहस्य को भी मैंने तुमसे कहा । इसे गोपनीय रखना चाहिये तथा श्रद्धा से इसका पाठ करना चाहिए ।।२।।

प्रातःकाल, मध्याह्नकाल तथा मध्यरात्रि एवं रात्रि के बीच के समय, यज्ञकाल, जपकाल में विशेषरूप से इसका पाठ करना चाहिए ।।३।।

यः पठेत् साधको धीरः कालीरूपो हि वर्षतः ।
पठेद् वा पाठयेद् वाऽपि शृणोति श्रावयेदपि ॥ ४ ॥
वाचकं तोषयेद् वाऽपि स भवेत् कालिकातनुः ।
सहेलं वा सलीलं वा यश्चैनं मानवः पठेत् ॥ ५ ॥
सर्वदुःखविनिर्मुक्तस्त्रैलोक्यविजयी कविः ।
मृतबन्ध्या काकबन्ध्या कन्याबन्ध्या च बन्ध्यका ॥ ६ ॥
पुष्पबन्ध्या शूलबन्ध्या शृणुयात् स्तोत्रमुत्तमम् ।
सर्वसिद्धिप्रदातारं सत्कविं चिरजीवितम् ॥ ७ ॥

जो साधक धैर्य के साथ इस काली सहस्रनाम का पाठ करते हैं, वे वर्ष भर में ही काली के समान शक्तिमान् हो जाते हैं। जो इस स्तोत्र को पढ़ता है, पढ़ाता है तथा सुनता एवं सुनाता है, अथवा वाचक को सन्तुष्ट रखता है वह कालिका के समान शक्तिमान् हो जाता है ॥४-५॥

अवज्ञा से अथवा लीला से जो इस काली सहस्र नाम का पाठ करता है. वह भी सभी दुखों से छुटकारा पा जाता है तथा शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है एवं कवि हो जाता है ॥६॥

जिस स्त्री के लड़के मर जाते हैं, वह मृतबन्ध्या तथा जिसे एक ही लड़का होता है उसे काकबन्ध्या तथा केवल कन्या उत्पन्न करने वाली कन्याबन्ध्या, पुष्प न होने वाली पुष्पबन्ध्या तथा शूल से पीड़ा होने के कारण पुत्र प्रसव न करने वाली शूलबन्ध्या, सर्वथा पुत्र न उत्पन्न करने वाली बन्ध्या इन सभी प्रकार की बन्ध्या स्त्री को इस स्तोत्र का पाठ अवश्य करना चाहिए। इसके पाठ करने वाले को सत्कवि तथा दीर्घायु पुत्र, उन्हें काली के प्रसाद से प्राप्त होता है ॥७॥

पाण्डित्यं कीर्तिसंयुक्तं लभते नाऽत्र संशयः ।
स यं काममुपस्कृत्य कालीं ध्यात्वा जपेत् स्तवम् ॥ ८ ॥
तं तं कामं करे कृत्वा मन्त्री भवति नान्यथा ।
योनिपुष्पैर्लिङ्गपुष्पैः कुण्डगोलोद्भवैरपि ॥ ९ ॥
संयोगामृतपुष्पैश्च वस्त्रदेवीप्रसूनकैः ।
कालिपुष्पैः पीठतोयैर्योनिक्षालनतोयकैः ॥१०॥
कस्तूरी-कुङ्कुमैर्देवीं नखकालागुरुक्रमात् ।
अष्टगन्धैर्धूप-दीपै-र्यव-यावय-संयुतैः ॥११॥
रक्तचन्दन-सिन्दूरै-र्मत्स्य-मांसादिभूषणैः ।
मधुभिः पायसैः क्षोरैः शोधितैः शोणितैरपि ॥१२॥
महोपचारैः रक्तैश्च नैवेद्यैः सुरसान्वितैः ।
पूजयित्वा महाकालीं महाकालेन लालिताम् ॥१३॥
विद्याराज्ञीं कुल्लुकां च जप्त्वा स्तोत्रं जपेच्छिवे ! ।
कालीभक्तस्त्वेकचित्तः सिन्दूर-तिलकान्वितः ॥१४॥

मनुष्य इस महाकालीसहस्रनाम के पाठ करने से कीर्त्ति-युक्त पाण्डित्य प्राप्त करता है, इसमें संशय नहीं है। मनुष्य जिन-जिन कामनाओं के लिए महाकाली का ध्यान करता हुआ काली मन्त्र का जप करता है वह उन-उन कामनाओं को प्राप्त कर लेता है अन्यथा नहीं। योनिपुष्प (रज), लिङ्गपुष्प (वीर्य), संयोगामृतपुष्प (स्त्री-पुरुष संयोगकालीन मिश्रित रजवीर्य), रजस्वला के पुष्प, कालिपुष्प, योनितोय (स्त्री का मूत्र), पीठतोय, योनिक्षालिततोय से, कस्तूरी, कुङ्कुम से, नख, कालागुरु, अष्टगन्ध, धूप, दीप, यव, यावय संयुक्त, रक्त चन्दन, सिन्दूर, मत्स्य-मांस, भूषण, मधु, पायस,

ताम्बूल-पूरितमुखो मुक्तकेशो दिगम्बरः ।
शवयोनिस्थितो वीरः श्मशानसुरतान्वितः ॥१५॥
शून्यालये बिन्दुपीठे पुष्पाकीर्णे शिवावने ।
शयानोत्थ-प्रभुञ्जानः कालीदर्शनमाप्नुयात् ॥१६॥
तत्र यद्यत् कृतं कर्म तदनन्तफलं भवेत् ।
ऐश्वर्यं कमला साक्षात् सिद्धौ श्रीकालिकाम्बिका ॥१७॥

दूध, शुद्ध शोणित, सुन्दररस से युक्त फलादि महोपचार, रक्त तथा अत्यन्त सरस नैवेद्य द्वारा महाकाल के अङ्क में स्थित महाकाली का पूजन करे । फिर विद्याराज्ञी एवं कुल्लुका का जप कर महाकाली-सहस्र नाम का पाठ करे । पाठ के समय काली में चित लगा रहना चाहिए तथा पाठकर्त्ता को सिन्दूर का तिलक लगाना चाहिए ॥ ८-१४ ॥

साधक को पाठ करते समय मुख में ताम्बूल धारण कर मुक्तकेश एवं वस्त्ररहित रहना चाहिए ॥ १५ ॥

शव पर स्थित होकर अकेले श्मशान में पाठ करना चाहिये । शून्य घर में, त्रिकोण मध्यगामी बिन्दु के आसन पर, अथवा रजोयुक्त स्त्री के साथ तथा शृगालियों के स्थान पर शयन करने से, खड़े रहने से एवं भोजन करने से काली का दर्शन प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

इन उपर्युक्त स्थानों पर साधक जो-जो काम करता है, वह अनन्तफल देने वाला होता है। महाकाली का पाठ करने वाला

कवित्वे तारिणीतुल्यः सौन्दर्ये सुन्दरीसमः ।
सिन्धोर्धारासमः कार्ये श्रुतौ श्रुतिधरस्तथा ॥१८॥
वज्रास्त्र इव दुर्धर्षस्त्रैलोक्य-विजयास्त्रभृत् ।
शत्रुहन्ता काव्यकर्ता भवेच्छिवसमः कलौ ॥१९॥
दिग्-विदिक्-चन्द्रकर्ता च दिवारात्रिविपर्ययी ।
महादेवसमो योगी त्रैलोक्यस्तम्भकः क्षणात् ॥२०॥
गानेन तुम्बुरुः साक्षाद् दाने कर्णसमो भवेत् ।
गजाऽश्व-रथ-पत्तीनामस्त्राणामधिपः कृती ॥२१॥
आयुष्येषु भुशुण्डी च जरापलितनाशकः ।
वर्षषोडशवान् भूयात् सर्वकाले महेश्वरि ! ॥२२॥

साधक ऐश्वर्य में कमला के समान, सिद्धि में माता महाकाली के समान, कविता में श्रीविद्या के समान, सुन्दरता में सुन्दरी के समान, कार्य में समुद्र-धारा के समान, श्रुति में श्रुतिधर के समान हो जाता है ॥ १७ १८ ॥

त्रैलोक्य के विजय में इन्द्र के समान पराक्रमी एवं कलियुग में शत्रुहन्ता एवं काव्यकर्त्ता, शिव के समान हो जाता है ॥ १९ ॥

दिशाओं एवं विदिशाओं में चन्द्रमा को प्रकट कर देता है तथा रात को दिन एवं दिन को रात बनाने में समर्थ हो जाता है। योग में महादेव के समान हो जाता है और क्षणभर में त्रिलोकी को भी स्तम्भित कर देता है ॥ २० ॥

गान-विद्या में तुम्बुरु के समान एवं दान में कर्ण के समान होता है, हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल एवं अस्त्रों का पति होता है तथा उसका जीवन सफल हो जाता हैं ॥ २१ ॥

आयु में काकभुशुण्डी के समान दीर्घजीवी होता है। उसके पास बुढ़ाई नहीं फटकती। वह सदैव सोलह वर्ष का किशोर बना रहता है ॥ २२ ॥

ब्रह्माण्डगोले देवेशि ! न तस्य दुर्लभं क्वचित् ।
सर्वं हस्तगतं भूयान्नाऽत्र कार्या विचारणा ॥२३॥
कुलपुष्पयुतं दृष्ट्वा तत्र कालीं विचिन्त्य च ।
विद्याराज्ञीं तु सम्पूज्य पठेन्नामसहस्रकम् ॥२४॥
मनोरथमयी सिद्धिस्तस्य हस्ते सदा भवेत् ।
परदारान् समालिङ्ग्य सम्पूज्य परमेश्वरीम् ॥२५॥
हस्ताहस्तिकयायोगं कृत्वा जप्त्वा स्तवं पठेत् ।
योनीं वीक्ष्य जपेद् स्तोत्रं कुबेरादधिको भवेत् ॥२६॥
कुण्डगोलोद्भवं गृह्य वर्णाक्तं होमयेन्निशि ।
पितृभूमौ महेशानि विधिरेखां प्रमार्जयेत् ॥२७॥

हे पार्वती ! इस ब्रह्माण्ड में उसके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता है। सभी पदार्थ उसके वश में हो जाते हैं, इसमें संशय की आवश्यकता नहीं ॥ २३ ॥

साधक भगवती को रजस्वला के रूप में जान कर ध्यान करे। फिर महाविद्याराज्ञी का पूजन कर काली सहस्रनाम का पाठ करना चाहिए ॥ २४ ॥

परस्त्री का स्पर्श करते हुए परमेश्वरी का पूजन कर, एवं परस्त्री का हाथ पकड़ कर काली सहस्रनाम का पाठ करने वाले पुरुष को सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, उसका मनोरथ सिद्ध हो जाता है, ऐश्वर्य में वह कुबेर से भी अधिक सम्पन्न हो जाता है ॥ २५-२६ ॥

हे महेशानि ! कुण्ड एवं गोलक के वर्णाक्त को लेकर श्मशान में हवन करने वाला पुरुष ब्रह्मा की लेखनी को भी मिटा सकता है ॥ २७ ॥

तरुणीं सुन्दरीं रम्यां चञ्चलां कामगर्विताम् ।
समानीय प्रयत्नेन संशोध्य न्यासयोगतः ॥२८॥
प्रसूनमञ्चं संस्थाप्य पृथिवीं कशितां चरेत् ।
मूलचक्रं तु सम्भाव्य देव्याश्चारणसंयुतम् ॥२९॥
सम्पूज्य परमेशानि सङ्कल्प्य तु महेश्वरि ! ।
जप्त्वा स्तुत्वा महेशानीं प्रणवं संस्मरेच्छिवे ! ॥३०॥
अष्टोत्तरशतैर्योनिं प्रमन्त्र्याचुम्ब्य यत्नतः ।
संयोगीभूय जप्तव्यं सर्वविद्याधिपो भवेत् ॥३१॥
शून्यागारे शिवारण्ये शिवदेवालये तथा ।
शून्यदेशे तडागे च गङ्गागर्भे चतुष्पथे ॥३२॥

अत्यन्त मनोहर तरुणी, जो काम के गर्व से इठलाती हो तथा चञ्चल हो उसे प्रयत्नपूर्वक बुलाये । न्यास-विधि से उसे स्नान करावे ॥ २८ ॥

उसे फूल के सेज पर बिठावे, स्वयं पृथ्वी पर रहे और देवी के चरणों से युक्त फिर मूल मन्त्र का स्मरण करे, ॥ २९ ॥

हे शिवे, हे महेशानि ! फिर सङ्कल्पपूर्वक देवी का पूजन कर देवी के मूल मन्त्र का जप करे। तदनन्तर काली-सहस्रनाम का पाठ करे फिर प्रणव का स्मरण करे ॥ ३० ॥

महाकाली के मूलमन्त्र से एक सौ आठ बार योनि को अभिमन्त्रित कर चुम्बन करे। फिर उस स्त्री के साथ सयुक्त होकर मन्त्र का जप करे। ऐसा करने वाला पुरुष सभी विद्याओं का अधिपति हो जाता है ॥ ३१ ॥

श्मशाने पर्वतप्रान्ते एकलिङ्गे शिवामुखे ।
मुण्डयोनौ ऋतौ स्नात्वा गेहे वेश्यागृहे तथा ॥३३॥
कुट्टिनीगृहमध्ये च कदलीमण्डपे तथा ।
पठत् सहस्रनामाख्यं स्तोत्रं सर्वार्थसिद्धये ॥३४॥
अरण्ये शून्यगर्ते च रणे शत्रुसमागमे ।
प्रजपेच्च ततो नाम काल्याश्चैव सहस्रकम् ॥३५॥
बालानन्दपरो भूत्वा पठित्वा कालिकास्तवम् ।
कालीं संचिन्त्य प्रजपेत् पठेन्नाम-सहस्रकम् ॥३६॥
सर्वसिद्धीश्वरो भूयाद् वाञ्छासिद्धीश्वरो भवेत् ।
मुण्डचूडकयोर्योनौ त्वचि वा कोमले शिवे ॥३७॥

खण्डहर में, शृगालियों के वन में, शिवालय में, शून्य स्थान में; तालाब में, गङ्गा के बीच, चौराहे पर ॥ ३२ ॥

श्मशान में, पर्वत पर, अकेले तथा शिवा-मुख में ऋतुमती स्त्री की योनि को मुण्डित करा कर अपने घर में स्नान करने के उपरान्त अथवा वेश्या के घर में ॥ ३३ ॥

कुटनी के घर में, केला के मण्डप में मनोरथ सिद्धि के लिए काली-सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥ ३४ ॥

अरण्य में, खोह में, शत्रु के साथ युद्ध के लिए रणभूमि में इस काली सहस्र नाम का पाठ करे ॥ ३५ ॥

बालकों को प्रसन्न करने के उपरान्त कालिका-स्तोत्र का पाठ एवं महाकाली का ध्यान करते हुए कालीसहस्रनाम का पाठ करना चाहिए ॥ ३६ ॥

जो ऐसा करते हैं, उनको सभी सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं एवं उनका अभीष्ट सदैव सिद्ध रहता है। मुण्डित अथवा अमुण्डित

विष्टरे शवक्स्त्रे वा पुष्पवस्त्रासनेऽपि वा ।
मुक्तकेशी दिशावासा मैथुनी शयने स्थितः ॥३८॥
जप्त्वा कालीं पठेत् स्तोत्रं खेचरी-सिद्धिभाग् भवेत् ।
चिकुरं योगमासाद्य शुक्रोत्सारणमेव च ॥३९॥
जप्त्वा श्रीदक्षिणां कालीं शक्तिपातशतं भवेत् ।
लतां स्पृशन् जपित्वा च रमित्वा त्वर्चयन्नपि ॥४०॥
आलोकयन् दिशावासाः परशक्ति विशेषतः ।
स्तुत्वा श्रीदक्षिणां कालीं योनिं स्वकरगां चरेत् ॥४१॥
पठेन्नामसहस्रं यः स शिवादधिको भवेत् ।
लतान्तरेषु जप्तव्यं स्तुत्वा कालीं निराकुलः ॥४२॥

योनि में मैथुन करता हुआ अथवा कोमल चमड़े पर, कुशनिर्मित विष्टर पर, कफन पर, रजस्वला स्त्री के वस्त्र के आसन पर, केश को खोले हुए, वस्त्र रहित होकर मैथुन किये गये शयन पर काली का जप करता हुआ जो साधक कालीसहस्रनाम का पाठ करता है, उसे खेचरी मुद्रा सिद्ध हो जाती है ॥ ३७-३९

चिकुर को पकड़ कर श्रीदक्षिणा काली का जप कर शुक्र को निकालने वाला साधक सैंकड़ों बलवानों का सामना करने में समर्थ हो जाता है। (वेश्या) लता का स्पर्श कर जप करे अथवा रमण कर महाकाली का पूजन करे। नङ्गे होकर परशक्ति का ध्यान करे। अपने हाथ से योनि को पकड़ कर दक्षिणा काली का स्मरण करे। फिर काली सहस्रनाम का पाठ करे, ऐसा पुरुष शिव से भी अधिक सामर्थ्यशाली होता है। लता के बीच में काली का स्मरण कर सावधानी से काली सहस्रनाम का पाठ करना चाहिए ॥ ४०-४२ ॥

दशावधानो भवति मासमात्रेण साधकः ।
कालरात्र्यां महाराज्यां वीररात्र्यामपि प्रिये ! ॥४३॥
महारात्र्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां संक्रमेऽपि वा ।
कुहूपूर्णेन्दुशुक्रेषु भौमामायां निशामुखे ॥४४॥
नवम्यां मङ्गलदिने तथा कुलतिथौ शिवे ।
कुलक्षेत्रे प्रयत्नेन पठेन्नाम-सहस्रकम् ॥४५॥
सौन्दर्शनो भवेदाशु किन्नरीसिद्धिभाग् भवेत् ।
पश्चिमाभिमुखं लिङ्गं वृषशून्यं पुरातनम् ॥४६॥
तत्र स्थित्वा जपेत् स्तोत्रं सर्वकामाप्तये शिवे ।
भौमवारे निशीथे वा अमावास्यादिने शुभे ॥४७॥

ऐसा साधक एक मास में दशावधान हो जाता है। कालरात्रि में, महारात्रि में, वीररात्रि में, चतुर्दशी एवं अष्टमी को, संक्रान्ति अमावास्या, पूर्णमासी शुक्र युक्त, भौम युक्त अमावस्या में, सायंकाल ॥ ४३-४४ ॥

मङ्गल दिन युक्त नवमी में तथा कुल तिथि में, कुल क्षेत्र में, प्रयत्नपूर्वक काली सहस्र नाम का पाठ करना चाहिए ॥ ४५ ॥

ऐसा साधक सर्वाङ्ग सुन्दर हो जाता है, किन्नरी सिद्धि उसे प्राप्त हो जाती है। जहाँ प्राचीन पश्चिमाभिमुख लिङ्ग हो किन्तु नन्दी न हो ऐसे (पुराने) स्थान पर बैठकर सर्व-कामना सिद्धि के लिए काली सहस्र नाम का पाठ करना चाहिए। भौमवार को अर्ध रात्रि में अथवा अमावास्या की अर्धरात्रि में काली को ॥ ४६-४७ ॥

माषभक्तबलिं छागं कृसरान्नं च पायसम् ।
दग्धमीनं शोणितं च दधि-दुग्धं गुडार्द्रकम् ॥४८॥
बलिं दत्वा जपेत्तत्र त्वष्टोत्तरसहस्रकम् ।
देव-गन्धर्व-सिद्धौघैः सेवितां सुरसुन्दरीम् ॥४९॥
लभेत् देवेशि ! मासेन तस्य चासनसंहतिः ।
हस्तत्रयं भवेदूर्ध्वं नाऽत्र कार्या विचारणा ॥५०॥
हेलया लीलया भक्त्या कालीं स्तौति नरस्तु यः ।
ब्रह्मादींस्तम्भयेद् देवि ! माहेशीं मोहयेत् क्षणात् ॥५१॥
आकर्षयेत् महाविद्यां दशपूर्वां त्रियामतः ।
कुर्वीत विष्णुनिर्माणं यमादीनां तु मारणम् ॥५२॥

उर्द मिश्रित भात, बकरा, खिचड़ी, खीर, भुनी हुई मछली, रक्त, दूध, दही, गुड़मिश्रित आदि की बलि देकर एक हजार आठ बार काली सहस्र नाम का पाठ करने वाला साधक देव- गन्धर्व एवं सिद्धों से सेवित महाकाली को प्राप्त कर लेता है ॥४८-४९॥

उस पुरुष का आसन जमीन से तीन हाथ ऊपर आकाश में स्थित होता है । इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए ॥५०॥

विना मन के अथवा खेलवाड़ से भी जो मनुष्य महाकाली की स्तुति करता है, वह ब्रह्मादि देवों की भी गति को रोक सकता है तथा क्षण भर में देवी को भी मोहित कर लेता है ॥५१॥

तीन पहर में ही वह दशों महा विद्याओं का आकर्षण कर सकता है, वह विष्णु का निर्माण कर सकता है तथा यमराज का भी वध कर सकता है ॥५२॥

ध्रुवमुच्चाटयेन्नूनं सृष्टिनूतनतां नरः ।
मेष-माहिष-मार्जार-खर-छाग-नरादिकैः ॥५३॥
खड्गी-शूकर-कापोतैष्टिट्टिभैः शशकैः पलैः ।
शोणितैः साऽस्थि-मांसैश्च कारण्डैर्दुग्ध-पायसैः ॥५४॥
कादम्बरी-सीधुमद्यैः सुरारिष्टैश्च सासवैः ।
योनि-क्षालित-तोयैश्च योनिलिङ्गामृतैरपि ॥५५॥
स्वजात-कुसुमैः पूज्यां जपान्ते तर्पयेच्छिवाम् ।
सर्वसाम्राज्यनाम्ना तु स्तुत्वा नत्वा स्वशक्तितः ॥५६॥
शक्त्यालभन् पठेत् स्तोत्रं कालीरूपो दिनत्रयात् ।
दक्षिणाकालिका तस्य गेहे तिष्ठति नाऽन्यथा ॥५७॥
वेश्यालता गृहे गत्वा तस्याश्चुम्बनतत्परः ।
तस्या योनौ मुखं दत्वा तद्रसं विलिहन् जपेत् ॥५८॥

वह ध्रुव का उच्चाटन कर सकता है, नयी सृष्टि के निर्माण में भी समर्थ हो जाता है। साधक को मेष, महिष, मार्जार, गदहा, बकरा, मनुष्य, गैंडा, सूअर, कबूतर, टिट्टिभ, खरगोश आदि के मांस एवं रक्त, अस्थि, बत्तख, दुग्ध, खीर, पुष्परस से बना हुआ मद्य, सीधु मद्य, सुगन्धित आसव, योनि का धोया हुआ जल, संभोग-काल में योनि तथा लिङ्ग-निर्गत रज-वीर्य आदि से जप के अन्त में महाकाली का तर्पण करना चाहिए। फिर अपनी शक्ति के अनुसार सर्वसाम्राज्यदायक महाकाली स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥५३-५५॥

शक्ति का स्पर्श करता हुआ काली सहस्रनाम का पाठ करने वाला साधक तीन दिन में ही काली के समान हो जाता है। उसके घर में सदैव दक्षिण काली का निवास रहता है अन्यथा नहीं ॥५७॥

वेश्या के घर में जाकर चुम्बन करे, पुनः उसकी योनि में मुख लगा कर उसका अवलेहन करते हुए एक हजार बार जप करे ॥५८॥

तदन्ते नामसाहस्रं पठेद् भक्तिपरायणः ।
कालिकादर्शनं तस्य भवेदेव त्रियामतः ॥५९॥
नृत्यपात्रगृहे गत्वा [1]मकार-पञ्चकान्वितः ।
प्रसूनमञ्चे संस्थाप्य शक्तिन्यासपरायणः ॥६०॥
पात्राणां साधनं कृत्वा दिग्वस्त्रान्तां समाचरेत् ।
सम्भाव्य चक्रं तन्मूले तत्र सावरणान् जपेत् ॥६१॥
शतं भाले शतं केशे शतं सिन्दूरमण्डले ।
शतत्रयं कुचद्वन्द्वे शतं नाभौ महेश्वरि ! ॥६२॥

तत्पश्चात् भक्तिपरायण हो काली सहस्रनाम का पाठ करे। इससे उसे तीन पहर में ही काली का दर्शन प्राप्त हो जाता है ॥५९॥

नर्त्तकी के घर जाकर उसको पुष्प-शय्या पर पञ्च मकार से युक्त हो स्थापित करे फिर शक्तिन्यास करे ॥६०॥

काली के उपभोग युक्त मद्य, मांस आदि युक्त पात्र स्थापित कर वेश्या को नङ्गी करे। वहाँ पर चक्र को संभावित कर आवरणसहित जप करे ॥६१॥

हे महेश्वरि! सौ बार भाल पर न्यास करे, सौ मन्त्र केश पर न्यास, सौ मन्त्र सिन्दूर मण्डल के स्थान-सीमन्त में, सौ बार दोनों स्तनों पर; तीन सौ बार नभि पर हाथ के न्यास से सौर मन्त्र का जप करे ॥६२॥

---

१. मद्यं मांसं च मत्स्यं च मुद्रा मैथुनमेव च ।
मकारपञ्चकं देवि ! देवताप्रीतिकारकम् ॥
मादिपञ्चकमीशानि ! देवताप्रीतये सुधीः ।
यथाविधि निषेवेत तृष्णया चेत् स पातकी ॥
—कुलार्णवतन्त्र

शतं योनौ महेशानि संयोगे च शतत्रयम् ।
जपेत्तत्र महेशानि तदन्ते प्रपठेत् स्तवम् ॥६३॥
शतावधानो भवति मासमात्रेण साधकः ।
मातङ्गिनीं समानीय किं वा कापालिनीं शिवे ! ॥६४॥
दन्तमाला जपे कार्या गले धार्या नृमुण्डजा ।
नेत्रपद्मे योनिचक्रं शक्तिचक्रं स्ववक्त्रके ॥६५॥
कृत्वा जपेन् महेशानि मुण्डयन्त्रं प्रपूजयेत् ।
मुण्डासनस्थितो वीरो मकारपञ्चकान्वितः ॥६६॥
अन्यामालिङ्गच प्रजपेदन्यां सञ्चुम्ब्य वै पठेत् ।
अन्यां सम्पूजयेत्तत्र त्वन्यां सम्मर्दयन् जपेत् ॥६७॥
अन्यायोनौ शिवं दत्वा पुनः पूर्ववदाचरेत् ।
अवधानसहस्रेषु शशिपातशतेषु च ॥६८॥
राजा भवति देवेशि ! मासपञ्चकयोगतः ।
यवनीशक्तिमानीय गानशक्तिपरायणाम् ॥६९॥

योनि पर हाथ रख कर सौ बार तथा संभोगकाल में तीन सौ बार जप करे। तदनन्तर स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥६३॥

ऐसा साधक एक महीने में शतावधान हो जाता है। मातङ्गिनी अथवा कापालिनी को स्थापित कर दांत युक्त नृमुण्डमाला को उसके गले में पहनाना चाहिए। नेत्र में योनिचक्र तथा वक्त्र में शक्तिचक्र स्थापित करना चाहिए। स्वयं साधक मुण्ड के आसन पर पञ्चमकार से युक्त मुण्ड यन्त्र का पूजन करे ॥६४-६६॥

अन्य स्त्री का आलिङ्गन कर जप करे तथा अन्य स्त्री का चुम्बन कर पाठ करे, अन्य का पूजन करे तथा अन्य का संमर्दन करे अन्य किसी की योनि में लिङ्ग डाले। ऐसा साधक शतावधानों

कुलाचारमतेनैव तस्या योनिं विकासयेत् ।
तत्र जिह्वां प्रदत्त्वा तु जपेन्नामसहस्रकम् ॥७०॥
नृकपाले तत्र दीपं ज्वाल्य यत्नेन वै जपेत् ।
महाकविवरो भूयान्नाऽत्र कार्या विचारणा ॥७१॥
कामार्त्तो शक्तिमानीय योनौ तु मूलचक्रकम् ।
विलिख्य परमेशानि ! तत्र मन्त्रं लिखेच्छिवे ! ॥७२॥
तल्लिहन् प्रजपेद् देवि ! सर्वशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।
अश्रुतानि च शास्त्राणि वेदादीन् पाठयेद् ध्रुवम् ।७३॥
विना न्यासैर्विना पाठैर्विना ध्यानादिभिः प्रिये ! ।
चतुर्वेदाधिपो भूत्वा त्रिकालज्ञस्त्रिवर्षतः ॥७४॥

में तथा शक्तिमानों में सर्वाधिक राजा होता है। गानविद्या में निपुण किसी यवनी को बुलाकर कुलाचार परम्परा के अनुसार उसकी योनि को विकसित करे फिर उसमें जीभ डाल कर सहस्र नाम का पाठ करे ॥६७-६८॥

मनुष्य के कपाल (खोपड़ी) पर दीप की माला स्थापित कर जप करना चाहिए। ऐसा साधक महाकवि होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥७१॥

साधक कामार्त्त हो शक्ति को बुलाकर योनि पर मूलचक्र लिख कर पश्चात् मन्त्र लिखना चाहिए ॥७२॥

ऐसा साधक मन्त्रयुक्त उस योनि का अवलेहन करता हुआ सभी शास्त्र के अर्थों का तत्त्ववेत्ता हो जाता है। अश्रुत एवं अपठित वेदादिकों को भी पढ़ाने में समर्थ होता है ॥७३॥

न्यास, पाठ एवं ध्यान के विना भी वह चारों वेदों का ज्ञाता और तीन वर्ष निरन्तर पाठ करने से त्रिकालज्ञ हो जाता है ॥७४॥

चतुर्विधं च पाण्डित्यं तस्य हस्तगत क्षणात् ।
शिवाबलिः प्रदातव्या सर्वदा शून्यमण्डले ॥७५॥
कालीध्यानं मन्त्रचिन्ता नीलसाधनमेव च ।
सहस्रनामपाठश्च कालीनाम-प्रकीर्तनम् ॥७६॥
भक्तस्य कार्यमेतावदन्यदभ्युदयं विदुः ।
वीरसाधनकं कर्म शिवापूजा बलिस्तथा ॥७७॥
सिन्दूरतिलको देवि ! वेश्यालापो निरन्तरम् ।
वेश्यागृहे निशाचारी रात्रौ पर्यटनं तथा ॥७८॥
शक्तिपूजा योनिदृष्टिः खड्गहस्तो दिगम्बरः ।
मुक्तकेशो वीरवेषः कुलमूर्तिधरो नरः ॥७९॥
कालीभक्तो भवेद् देवि ! नाऽन्यथा क्षोभमाप्नुयात् ।
दुग्धस्वादी योनिलेही संविदासवघूर्णितः ॥८०॥

कालीसहस्रनाम के पाठ करने वाले साधक को चारो प्रकार की पण्डिताई प्राप्त हो जाती है । सर्वथा शून्य स्थान में ही महाकाली को बलि प्रदान करना चाहिए ॥७५॥

काली का ध्यान, मन्त्र का जप, नील साधन, सहस्र नाम का पाठ, काली नाम का जप ॥७६॥

भक्त का केवल इतना ही काम है, फिर तो सर्वत्र अभ्युदय ही है । प्रेतसिद्धि, महाकाली-पूजा, महाकाली की बलि, सिन्दूर का तिलक, सदैव वेश्याओं से आलाप, रात्रि में वेश्या के घर निवास तथा रात्रि में पर्यटन, ॥७७-७८॥

शक्ति-पूजा, योनि दृष्टि, हाथ में खड्ग, वस्त्र रहित, बिखरा केश, वीरवेष, कुल मूर्ति को धारण करने वाला मनुष्य ही महाकाली

वेश्यालता-समायोगान् मासात् कल्पलता स्वयम् ।
वेश्याचक्र-समायोगात् कालीचक्रसमः स्वयम् ॥८१॥
वेश्यादेह-समायोगात् कालीदेहसमः स्वयम् ।
वेश्यामध्यगतं वीरं कदा पश्यामि साधकम् ॥८२॥
एवं वदति सा काली तस्माद् वेश्या वरा मता ।
वेश्याकन्या तथा पीठ-जातिभेद-कुलक्रमात् ॥८३॥
अकुलक्रमभेदेन ज्ञात्वा चाऽपि कुमारिकाम् ।
कुमारीं पूजयेद् भक्त्या जपान्ते भवनं प्रिये ! ॥८४॥
पठेन्नामसहस्रं यः कालीदर्शनभाग् भवेत् ।
भक्त्या पूज्य कुमारीं च वेश्याकुलसमुद्भवाम् ॥८५॥

का भक्त होता है। यदि ऐसा नहीं है, तो वह दुःखी होता है, दूध पीने वाला, योनि का लेह करने वाला, ज्ञानवान्, आसव से घूरता हुआ मनुष्य वेश्यालता का आश्रय लेने से क्षण भर में ही कल्पलता के समान हो जाता है, तथा वेश्याचक्र के सहयोग से कालीचक्र के समान हो जाता है ॥७९-८१ ॥

साधक वेश्यादेह के सहयोग से स्वयं काली देह के समान हो जाता है। 'मैं अपने साधक को वेश्या के मध्य में कब देखूंगी' ऐसा काली कहा करती हैं। इसलिए वेश्या श्रेष्ठ है, वेश्या कन्या, पीठ जाति भेद कुलक्रम से तथा अकुलक्रम भेद से कुमारी का वरण करना चाहिए। जप के अन्त में कुमारी का पूजन करना चाहिए ॥८२-८४॥

जो काली-सहस्त्र नाम का पाठ करता है, वह काली दर्शन के फल को प्राप्त करता है। वेश्या-कुल में उत्पन्न कुमारी का भी पूजन करे ॥८५॥

वस्त्र-हेमादिभिस्तोष्य यत्नात् स्तोत्रं पठेच्छिवे ! ।
त्रैलोक्यविजयी भूयाद् दिवाचन्द्रप्रकाशकः ॥८६॥
यद्यद् दत्तं कुमार्यै तु तदनन्तफलं भवेत् ।
कुमारीपूजनफलं मया वक्तुं न शक्यते ॥८७॥
चाञ्चल्यादुदितं किञ्चित् क्षम्यतामयमञ्जलिः ।
एका चेत् पूजिता बाला द्वितीया पूजिता भवेत् ॥८८॥
कुमार्यः शक्तयश्चैव सर्वमेतच्चराचरम् ।
शक्तिमानीय तद्गात्रे न्यासजालं प्रविन्यसेत् ॥८९॥
वामभागे च संस्थाप्य जपेन्नाम-सहस्रकम् ।
सर्वसिद्धीश्वरो भूयान्नात्र कार्या विचारणा ॥९०॥

कुमारी को वस्त्र तथा होमादि से सन्तुष्ट कर यत्नपूर्वक काली सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। ऐसा पुरुष त्रैलोक्यविजयी होता है तथा दिन में भी चन्द्रमा को प्रकट कर देता है ॥८६॥

कुमारी को दिया गया दान अनन्त फल देने वाला होता है। किंबहुना, कुमारी पूजन का फल अनन्त है, जिसको मैं कहने में असमर्थ हूँ ॥८७॥

चञ्चलता के कारण जो कुछ कहा उसे क्षमा कीजिए, मैं हाथ जोड़ता हूँ। केवल एक बाला का पूजन करने से महाकाली स्वयं पूजित हो जाती हैं ॥८८॥

यह सारा संसार ही कुमारी तथा शक्तिमय है। इसलिए कुमारी के शरीर में शक्ति का आवाहन कर न्यास द्वारा शक्ति स्थापित करनी चाहिए ॥८९॥

कुमारी को महाकाली के वामभाग में स्थापित कर काली-सहस्र नाम का पाठ करे। ऐसा मनुष्य सर्वसिद्धीश्वर हो जाता है, इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है ॥९०॥

श्मशानस्थो भवेत् स्वस्थो गलितं चिकुरं चरेत् ।
दिगम्बरः सहस्रं च सूर्यपुष्पं समानयेत् ॥९१॥
स्ववीर्येण युतं कृत्वा प्रत्येकं प्रजपन् हुनेत् ।
पूज्य ध्यात्वा महाभक्त्या क्षमापालो नरः पठेत् ॥९२॥
नखकेशं स्ववीर्यं च यद्यत् सम्मार्जनीगतम् ।
मुक्तकेशो दिशावासो मूलमन्त्रपुरःसरः ॥९३॥
कुजवारे मध्यरात्रे होमं कृत्वा श्मशानके ।
पठेन्नाम-सहस्रं यः पृथ्वीशाकर्षणं भवेत् ॥९४॥
पुष्पयुक्ते भगे देवि ! संयोगानन्दतत्परः ।
पुनश्चिकुरमासाद्य मूलमन्त्रं जपन् शिवे ! ॥९५॥
चितावह्नौ मध्यरात्रे वीर्यमुत्सार्ययत्नतः ।
कालिकां पूजयेत् तत्र पठेन्नाम-सहस्रकम् ॥९६॥

श्मशान में निर्भय होकर निवास करे। केश को बिखेर कर वस्त्र रहित हो एक हजार धतूर का पुष्प ले आवे ॥९१॥

फिर धतूर-पुष्प ले वीर्य मिलाकर प्रत्येक मन्त्र के क्रम से एक-एक पुष्प का हजार बार हवन करे। फिर पूजा कर भगवती का ध्यान करे, ऐसा करने से मनुष्य राजा हो जाता है ॥९२॥

संमार्जनी में नख, केश तथा अपना वीर्य रखकर खुला केश एवं वस्त्र रहित हो मूलमन्त्र से श्मशान में, भौमवार के दिन, मध्यरात्रि में हवन कर काली-सहस्रनाम का पाठ करने वाला साधक राजा को भी आकृष्ट कर लेता है ॥९३-९४॥

रजस्वला स्त्री में मैथुन कर फिर चिकुर (केशयुक्त आसन) पर बैठकर मूलमन्त्र का जप करे। तदनन्तर मध्यरात्रि में यत्नपूर्वक अपना वीर्य निकाल कर चिता की अग्नि में हवन करे तथा काली का पूजन कर फिर सहस्र नाम का पाठ करे ॥९५-९६॥

पृथ्वीशाकर्षणं कुर्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा ।
कदलीवनमासाद्य लक्षमात्रं जपेन्नरः ॥९७॥
मधुमत्या स्वयं देव्या सेव्यमानः स्मरोपमः ।
श्रीमधुमतीत्युक्त्वा तथा स्थावर-जङ्गमान् ॥९८॥
आकर्षिणीं समुच्चार्य ठं ठं स्वाहा समुच्चरेत् ।
त्रैलोक्याकर्षिणी विद्या तस्य हस्ते सदा भवेत् ॥९९॥
नदीं पुरीं च रत्नानि हेम-स्त्री-शैलभूरुहान् ।
आकर्षयत्यम्बुनिधिं सुमेरुं च दिगन्ततः ॥१००॥
अलभ्यानि च वस्तूनि दूराद् भूमितलादपि ।
वृत्तान्तं च सुरस्थानाद् रहस्यं विदुषामपि ॥१०१॥
राज्ञां च कथयत्येषा सत्यं सत्वरमादिशेत् ।
द्वितीयवर्षपाठेन भवेत् पद्मावती शुभा ॥१०२॥

ऐसा साधक राजा को भी आकृष्ट कर लेता है, इसमें सन्देह नहीं। कदली (केला) के वन में एक लाख का जप करने वाला साधक मधुमती देवी से स्वयं काम के समान पूजित होता है। फिर 'श्रीमधुमति स्थावरजङ्गमान् आकर्षय ठं ठं स्वाहा' ऐसा उच्चारण करे। इससे साधक के हाथ में त्रैलोक्याकर्षिणी विद्या सिद्ध हो जाती है ॥९७-९९॥

यह मधुमती विद्या नदी, नगर, रत्न, सुवर्ण, स्त्री, पर्वत, वृक्ष, समुद्र एवं सुमेरु को भी दिगन्त से आकृष्ट कर लेती है ॥१००॥

दूर की वस्तु, अलभ्यवस्तु, पृथ्वी के नीचे की वस्तु तथा स्वर्ग का वृत्तान्त, विद्वानों का रहस्य ॥१०१॥

तथा राजाओं के रहस्य को भी सत्य-सत्य शीघ्रता से प्रकट कर देती है। दूसरे वर्ष पाठ करने से साधक को पद्मावती विद्या सिद्ध हो जाती है ॥१०२॥

ॐ ह्रीं पद्मावतिपदं ततस्त्रैलोक्यनाम च ।
वार्त्तां च कथय द्वन्द्वं स्वाहान्तो मन्त्र ईरितः ॥१०३॥
ब्रह्म-विष्ण्वादिकानां च त्रैलोक्ये यादृशी भवेत् ।
सर्वं वदति देवेशी त्रिकालज्ञः कविः शुभः ॥१०४॥
त्रिवर्षं पठतो देवि ! लभेद् भोगवतीं कलाम् ।
महाकालेन दष्टोऽपि चितामध्यगतोऽपि वा ॥१०५॥
तस्या दर्शनमात्रेण चिरञ्जीवी नरो भवेत् ।
मृतसञ्जीविनीत्युक्त्वा मृतमुत्थापय द्वयम् ॥१०६॥
स्वाहान्तो मनुराख्यातो मृतसञ्जीवनात्मकः ।
चतुर्वर्षं पठेद्यस्तु स्वप्नसिद्धस्ततो भवेत् ॥१०७॥

'ॐ ह्रीं पद्मावति त्रैलोक्यवार्त्तां कथय कथय स्वाहा' यही पद्मावती विद्या का मन्त्र है ॥१०३॥

ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं का वृत्तान्त तथा त्रैलोक्य-वृत्तान्त यह पद्मावती विद्या बता देती है। पद्मावती विद्या का जप करने वाला साधक त्रिकालज्ञ तथा कवि हो जाता है ॥१०४॥

हे देवि ! तीन वर्ष तक काली-सहस्रनाम का पाठ करने से साधक भोगवती कला को प्राप्त कर लेता है। इस कला को प्राप्त करने वाले पुरुष का दर्शन करने से ही महाकाल के द्वारा डँसा हुआ आदमी तथा चिता के मध्य में रखा हुआ पुरुष भी जी उठता है और दीर्घ-जीवी होता है। 'मृतसञ्जीविनी मृतमुत्थापय उत्थापय स्वाहा' यही मृतसञ्जीविनी मन्त्र है। चार वर्ष तक काली-सहस्रनाम का पाठ करने वाला पुरुष स्वप्न-सिद्ध हो जाता है ॥१०५-१०७॥

ॐ ह्रीं स्वप्नवाराहि कलिस्वप्ने कथयोच्चरेत् ।
अमुकस्याऽमुकं देहि क्रींस्वाहान्तो मनुर्मतः ॥१०८॥
स्वप्नसिद्धा चतुर्वर्षात्तस्य स्वप्ने सदा स्थिता ।
चतुर्वर्षस्य पाठेन चतुर्वेदाधिपो भवेत् ॥१०९॥
तद्धस्त-जलसंयोगान् मूर्खः काव्यं करोति च ।
तस्य वाक्यपरिचयान् मूर्तिर्विन्दति काव्यताम् ॥११०॥
मस्तके तु करं कृत्वा वद वाणीमिति ब्रुवन् ।
साधको वाञ्छया कुर्यात्तत्तथैव भविष्यति ॥१११॥
ब्रह्माण्डगोलके याश्च याः काश्चिज्जगतीतले ।
समस्ताः सिद्धयो देवि ! करामलकवद् भवेत् ॥११२॥

'ॐ ह्रीं स्वप्नवाराहि कलिस्वप्ने कथय अमुकस्य अमुकं देहि क्रीं स्वाहा' यही स्वप्नसिद्धि का मन्त्र है ॥१०८॥

यह स्वप्नसिद्धा देवी चार वर्ष पर्यन्त पाठ करने वाले पुरुष के स्वप्न में सदैव स्थित रहती हैं। चार वर्ष तक सहस्रनाम का पाठ करने वाला चारो वेदों का पण्डित हो जाता है ॥१०९॥

उसके हाथ के जल का संयोग होने से मूर्ख व्यक्ति भी काव्य करने वाला हो जाता है। उसकी वाणी को सुनकर पत्थर की मूर्त्ति भी काव्य भाषा बोलने लगती है ॥११०॥

मस्तक पर हाथ रखकर 'वाणीं वद' ऐसा कहने वाला साधक, जो भी बोलता है वैसा ही होता है ॥१११॥

इस ब्रह्माण्ड में तथा इस जगत् में जितनी भी सिद्धियाँ हैं, वे सभी काली-सहस्रनाम का पाठ करने वाले साधक को हस्तामलकवत् दिखाई पड़ती हैं ॥११२॥

साधकस्मृतिमात्रेण यावन्त्यः सन्ति सिद्धयः।
स्वयमायान्ति पुरतो जपादीनां तु का कथा ? ॥११३॥
विदेशवर्तिनो भूत्वा वर्तन्ते चेटका इव।
अमायां चन्द्रसन्दर्शश्चन्द्रग्रहणमेव च ॥११४॥
अष्टम्यां पूर्णचन्द्रत्वं चन्द्रसूर्याष्टकं तथा।
अष्टदिक्षु तथाऽष्टौ च करोत्येव महेश्वरी ॥११५॥
अणिमाखेचरत्वं च चराऽचरपुरीगतिम्।
पादुका-खड्ग-वेताल-यक्षिणी-गुह्यकादयः ॥११६॥
तिलको गुप्ततादृश्यं चराऽचरकथानकम्।
मृतसञ्जीविनीसिद्धिर्गुटिका च रसायनम् ॥११७॥
उड्डीनसिद्धिर्देवेशि ! षष्टिसिद्धीश्वरत्वकम्।
तस्य हस्ते वसेद् देवि ! नाऽत्र कार्या विचारणा ॥११८॥

इतना ही नहीं, जितनी भी सिद्धियाँ हैं वे सभी साधक के स्मरण करते ही उसके सामने स्वयं आ जाती हैं, फिर जपादि की बात ही क्या है ? ॥११॥

विदेशवासीजन भी उसके सेवक सदृश बन जाते हैं। तथा अमावास्या को चन्द्र का दर्शन एवं चन्द्रग्रहण भी उसे दिखाई पड़ सकता है ॥११४॥

काली के भक्त को अष्टमी को पूर्ण चन्द्रमा तथा आठों दिशाओं में आठ चन्द्रमा और आठ सूर्य भी दिखा सकते हैं ॥११५॥

अणिमादि सिद्धि, आकाश में बेरोक-टोक गमन, सर्वत्र चराचर जगत् में अव्याहत गति उसकी होती है। पादुका, खड्ग, बेताल, यक्षिणी, गुह्यकादि, तिलक, गुप्त वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण, चराचर जगत् का वृत्तान्त, मृतसञ्जीविनी सिद्धि, गुटिका, रसायन, उड्डीन सिद्धि, षष्टिसिद्धि, ईशीत्व सिद्धि आदि सभी चमत्कारिक गुण उसके वश में हो जाते हैं। हे पार्वती ! इसमें सन्देह मत करो ॥११६-११८॥

केतौ वा दुन्दुभौ वस्त्रे विताने वेष्टने गृहे ।
भित्तौ च फलके देवि ! लेख्यं पूज्यं च यत्नतः ॥११९॥
मध्ये चक्रं दशाङ्गोक्तं परितो नामलेखनम् ।
तद्धारणान् महेशानि ! त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥१२०॥
एको हि शतसाहस्त्रं निर्जित्य च रणाङ्गणे ।
पुनरायाति च सुखं स्वगृहं प्रति पार्वति ! ॥१२१॥
एको हि शतसन्दर्शी लोकानां भवति ध्रुवम् ।
कलशं स्थाप्य यत्नेन नाम-साहस्त्रकं पठेत् ॥१२२॥
सेकः कार्यो महेशानि सर्वापत्तिनिवारणे ।
भूत-प्रेत-ग्रहादीनां रक्षसां ब्रह्मरक्षसाम् ॥१२३॥

ध्वज, दुन्दुभि, वस्त्र, चँदवा, बिछौना, घर, भीत, काठ के फलक पर देवी के मन्त्रों को लिखना एवं पूजन करना चाहिए ॥११९॥

दशाङ्ग में कही गयी विधि के अनुसार चक्र को मध्य में स्थापित करे । उसके चारों ओर अपना नाम लिखे, ऐसे यन्त्र के धारण करने से पुरुष त्रैलोक्य-विजयी हो जाता है ॥१२०॥

इस यन्त्र को धारण करने वाला पुरुष अकेला ही युद्ध में सैकड़ों-हजारों को पराजित कर कुशलपूर्वक घर लौट आता है ॥१२१॥

वह अकेला ही लोगों को सैकड़ों अथवा हजारों रूप में दिखाई पड़ता है । यत्नपूर्वक कलश स्थापित कर तदनन्तर काली-सहस्रनाम का पाठ करना चाहिए ॥१२२॥

सभी आपत्तियों के निवारण हेतु काली सहस्रनाम का पाठ करते हुए प्रत्येक नाम से जल का छींटा देना चाहिए । यह काली सहस्र-नाम भूत, प्रेत, ग्रह, राक्षस तथा ब्रह्मराक्षस को दूर भगाने वाला है ॥१२३॥

वेतालानां भैरवाणां स्कन्द-वैनायकादिकान् ।
नाशयेत् क्षणमात्रेण नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१२४॥
भस्माभिमन्त्रितं कृत्वा ग्रहग्रस्ते विलेपयेत् ।
भस्मसंक्षेपणादेव सर्वग्रहविनाशनम् ॥१२५॥
नवनीतं चाऽभिमन्त्र्य स्त्रीणां दद्यान्महेश्वरि ! ।
वन्ध्या पुत्रप्रदा देवि ! नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१२६॥
कण्ठे वा वामबाहौ वा योनौ वा धारणाच्छिवे ! ।
बहुपुत्रवती नारी सुभगा जायते ध्रुवम् ॥१२७॥
पुरुषो दक्षिणाङ्गे तु धारयेत् सर्वसिद्धये ।
बलवान् कीर्तिमान् धन्यो धार्मिकः साधकः कृती ।१२८।

यह वेताल, भैरव, स्कन्द एवं विनायकादिकों का क्षण भर में विनाश करता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥१२४॥

काली-सहस्र नाम से भस्म को अभिमन्त्रित कर ग्रहबाधा युक्त व्यक्ति के शरीर में उस भस्म का लेप कर देना चाहिए। केवल भस्म के प्रक्षेप से ही सभी ग्रह दूर भाग जाते हैं ॥१२५॥

हे महेश्वरि! काली सहस्रनाम द्वारा अभिमन्त्रित नवनीत (मक्खन) को बन्ध्या स्त्री को खिला देने से वह पुत्र का प्रसव करती है; इसमें संशय की कोई बात नहीं है ॥१२६॥

हे शिवे! इस काली के महामन्त्र को कण्ठ में, बायें हाथ में अथवा योनि में धारण करने से स्त्री बहु पुत्रवती एवं सौभाग्य युक्त होती है ॥१२७॥

पुरुष सभी प्रकार की सिद्धियों के लिए अपने दाहिने अङ्ग में काली महामन्त्र को धारण करे, तो बलवान्, कीर्त्तिमान्, धन्य तथा धार्मिक एवं सफल होता है ॥१२८॥

बहुपुत्रो रथानां च गजानामधिपः सुधीः ।
कामिनीकर्षणोद्युक्तः क्रीं च दक्षिणकालिके ॥१२९॥
क्रीं स्वाहा प्रजपेन् मन्त्रमयुतं नामपाठकः ।
आकर्षणं चरेद् देवि ! जलखेचरभूगतान् ॥१३०॥
वशीकरणकामो हि हूं-हूं ह्रीं-ह्रीं च दक्षिणे ।
कालिके पूर्वबीजानि पूर्ववत् प्रजपन् पठेत् ॥१३१॥
उर्वशीमपि वशयेन्नाऽत्र कार्या विचारणा ।
क्रीं च दक्षिणकालिके स्वाहायुक्तं जपेन्नरः ॥१३२॥
पठेन्नाम-सहस्रं तु त्रैलोक्यं मारयेद् ध्रुवम् ।
सद्भक्ताय प्रदातव्या विद्याराज्ञि शुभे दिने ॥१३३॥

'ॐ क्रीं दक्षिणकालिके क्रीं स्वाहा' इस मन्त्र का दस हजार जप तथा काली सहस्र नाम का दस हजार पाठ करने वाला साधक कामिनियों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। तथा आकाश, जल एवं पृथ्वी पर रहने वाले सभी जन्तुओं को आकृष्ट करता है ॥१२९-१३०॥

वशीकरण की इच्छा रखने वाला साधक 'ॐ हूं-हूं ह्रीं-ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहा' इस मन्त्र का दस हजार जप करे, तो वह उर्वशी को भी अपने वश में कर लेता है, इसमें सन्देह नहीं 'क्रीं च दक्षिणकालिके स्वाहा' इस मन्त्र से सम्पुटित काली सहस्र नाम का पाठ करने वाला साधक त्रैलोक्य को मारने में भी समर्थ हो जाता है। इस महाविद्या की दीक्षा शुभ दिन में सदाचारी एवं सद्भक्त को ही देनी चाहिए ॥१३१-१३३॥

सद्विनीताय शान्ताय दान्तायाऽतिगुणाय च ।
भक्ताय ज्येष्ठपुत्राय गुरुभक्तिपराय च ॥१३४॥
वैष्णवाय प्रशुद्धाय शिवाबलिरताय च ।
वेश्यापूजनयुक्ताय कुमारीपूजकाय च ॥१३५॥
दुर्गाभक्ताय रौद्राय महाकालप्रजापिने ।
अद्वैतभावयुक्ताय कालीभक्तिपराय च ॥१३६॥
देयं सहस्रनामाख्यं स्वयं काल्या प्रकाशितम् ।
गुरुदैवतमन्त्राणां महेशस्याऽपि पार्वति ! ॥१३७॥
अभेदेन स्मरेन् मन्त्रं स शिवः स गणाधिपः ।
यो मन्त्रं भावयेन् मन्त्री स शिवो नाऽत्र संशयः॥१३८॥
स शाक्तो वैष्णवः सौरः स एव पूर्णदीक्षितः ।
अयोग्याय न दातव्यं सिद्धिरोधः प्रजायते ॥१३९॥

सुविनीत, सुशान्त, जितेन्द्रिय गुणवान्, भक्त, ज्येष्ठपुत्र, गुरु की भक्ति करने वाले, वैष्णव, मन, कर्म एवं वाणी से विशुद्ध, महाकाली को बलि देने वाले, वेश्या का पूजन करने वाले, कुमारी का पूजन करने वाले, दुर्गा एवं रुद्र के भक्त, महाकाल का जप करने वाले, अद्वैतसिद्धान्त को मानने वाले, महाकाली के भक्त को ही इस काली सहस्रनाम को, जिसे स्वयं महाकाली ने प्रकाशित किया है, देना चाहिए। हे पार्वति ! जो गुरु एवं देवता के मन्त्रों में भेद न मानता हो वह शिव है, गणपति है। जो मन्त्र को सिद्ध करता है वह साक्षात् शिव है, इसमें सन्देह नहीं ॥ १३४-१३८ ॥

वही शाक्त है, वही वैष्णव है, वही सौर है, वही पूर्ण दीक्षित है। अयोग्य को कालीसहस्रनाम का उपदेश नहीं देना चाहिए। ऐसा करने से सिद्धि नहीं होती ॥ १३९ ॥

वेश्यास्त्री-निन्दकायाऽथ सुरासंवित्प्रनिन्दके ।
सुरामुखीमनुं स्मृत्वा सुराचारो भविष्यति ॥१४०॥
आसां वाग्देवता घोरे परघोरे च हूं वदेत् ।
घोररूपे महाघोरे मुखी भीमवदं वदेत् ॥१४१॥
भीषण्यमुपषष्ठ्यन्तं हेतुर्वामयुगे शिवे ।
शिववह्नियुगास्त्रं हूं-हूंकवचमनुर्भवेत् ॥१४२॥
एतस्य स्मरणादेव दुष्टानां च मुखे सुरा ।
अवतीर्णा भवेद् देवि ! दुष्टानां भद्रनाशिनी ॥१४३॥
खलाय परतन्त्राय परनिन्दापराय च ।
भ्रष्टाय दुष्टसत्त्वाय परवादरताय च ॥१४४॥
शिवाभक्ताय दुष्टाय परदाररताय च ।
न स्तोत्रं दर्शयेद् देवि ! शिवाहत्याकरो भवेत् ॥१४५॥

वेश्या स्त्री की निन्दा करने वाले तथा सुरा-मांसादि की निन्दा करने वाले को कदापि काली सहस्र नाम का उपदेश नहीं करना चाहिए । सुरामुखी महाकाली का स्मरण कर मनुष्य सुरा का आचरण करने वाला हो जाता है ॥ १४० ॥

'आसां वाग्देवता घोरे परघोरे हूं घोररूपे महाघोरे भीममुखी भीषण्या हेतुर्वामयुगे शिवे क्लीं-क्लीं हूं-हूं' यही कवच का मन्त्र है। इस मन्त्र के स्मरण करने से दुष्टों का नाश करने वाली देवी अवतीर्ण हो जाती हैं ॥ १४१-२४३ ॥

खल को, पराधीन को, परनिन्दक को, दुष्ट को, दूसरे से विवाह करने वाले, काली में भक्ति न रखने वाले, पर-दारसेवी, दुष्ट को यह स्तोत्र नहीं देना चाहिए, ऐसा करने से कालीहत्या का पाप लगता है ॥ १४४-१४५ ॥

कालिकानन्दहृदयः कालिकाभक्तिमानसः ।
कालीभक्तो भवेत् सो हि धन्यरूपः स एव तु ॥१४६॥
कलौ काली कलौ काली कलौ काली वरप्रदा ।
कलौ काली कलौ काली कलौ काली तु केवला॥१४७॥
[1]बिल्वपत्रसहस्राणि करवीराणि वै तथा ।
प्रतिनाम्ना पूजयेद् हि तेन काली वरप्रदा ॥१४८॥
कमलानां सहस्रं तु प्रतिनाम्ना समर्पयेत् ।
चक्रं सम्पूज्य देवेशि ! कालिकावरमाप्नुयात् ॥१४९॥

सदैव काली में आनन्दित रहने वाले, काली में भक्ति रखने वाले काली भक्त ही धन्य हैं ॥ १४६ ॥

कलियुग में केवल महाकाली ही श्रेष्ठ हैं, एवं वरप्रदान करने वाली हैं ॥ १४७ ॥

'काली सहस्र नाम' के प्रत्येक नाम से बिल्वपत्र तथा करवीर (कनैल) का पुष्प समर्पित कर पूजन करने वाले साधक को काली वरदान देने वाली होती हैं ॥ १४८ ॥

अथवा काली सहस्रनाम के प्रत्येक नाम से महाकाली को कमल-पुष्प समर्पित करने वाले तथा प्रत्येक नाम से महाकाली के श्रीचक्र का पूजन करने वाले साधक को भी महाकाली वरप्रद होती हैं ॥१४९॥

---

१. 'बिल्वपत्रं यथा प्रीतिकरं देव्या वरानने ।
न तथाऽन्यत् किञ्चिदस्ति पुष्पेषु प्रीतिकारकम् ॥
अतो यत्नेन दातव्यं बिल्वपत्रं त्रिपत्रयुक् ।'
—इति महाकालसंहितोक्तम् ।

मन्त्रक्षोभयुतो नैव कलशस्थजलेन च ।
नाम्ना प्रसेचयेद् देवि ! सर्वक्षोभविनाशकृत् ॥१५०॥
तथा मदनकं देवि ! सहस्रमाहरेद् व्रती ।
सहस्रनाम्ना सम्पूज्य कालीवरमवाप्नुयात् ॥१५१॥
चक्रं विलिख्य देहस्थं धारयेत् कालिकातनुः ।
काल्यै निवेदितं यद्यदशं भक्षयेच्छिवे ! ॥१५२॥
दिव्यदेहधरो भूत्वा कालीदेहे स्थिरो भवेत् ।
नैवेद्य-निन्दकान् दुष्टान् दृष्ट्वा नृत्यन्ति भैरवाः ॥१५३॥
योगिन्यश्च महाबीरा रक्तपानोद्यताः प्रिये ! ।
मांसा-ऽस्थि-चर्मगोद्युक्ता भक्षयन्ति न संशयः ॥१५४॥

सावधानी से मन्त्र का पाठ करने वाला साधक कलश के जल से महाकाली के प्रत्येक नाम से जल का छींटा दे तो उसकी समस्त विपत्ति दूर हो जाती है ॥ १५० ॥

दमनक का १००० पत्ते से काली के सहस्र नाम द्वारा पूजन करने से काली के वर को प्राप्त करता है ॥ १५१ ॥

काली का भक्त महाचक्र लिख कर अपने शरीर में धारण करे अथवा किसी पर लिख कर उसे भक्षण करे तो महाकाली उसे वर-दान देने वाली हो जाती हैं ॥ १५२ ॥

ऐसा साधक दिव्य शरीर धारण कर काली के देह में स्थिर हो जाता है। महाकाली के निन्दक दुष्टों को देख कर भैरव तथा योगिनियाँ रक्तपान करने की इच्छा से नृत्य करने लगती हैं तथा उसके मांस, अस्थि एवं चर्म को भी खा जाती हैं। इसमें संशय नहीं है ॥ १५३-१५४ ॥

तस्मान्न निन्दयेद् देवि ! मनसा कर्मणा गिरा ।
अन्यथा कुरुते यस्तु तस्य नाशो भविष्यति ॥१५५॥
क्रमदीक्षायुतानां च सिद्धिर्भवति नाऽन्यथा ।
मन्त्रक्षोभश्च वा भूयात् क्षीणायुर्वा भवेद् ध्रुवम्॥१५६॥
पुत्रहारी स्त्रियोहारी राज्यहारी भवेद् ध्रुवम् ।
क्रमदीक्षायुतो देवि ! क्रमाद्राज्यमवाप्नुयात् ॥१५७॥
एकवारं पठेद् देवि ! सर्वपापविनाशनम् ।
द्विवारं च पठेद् यो हि वाञ्छां विन्दति नित्यशः॥१५८॥
त्रिवारं च पठेद्यस्तु वागीशसमतां व्रजेत् ।
चतुर्वारं पठेद् देवि ! चतुर्वर्णाधिपो भवेत् ॥१५९॥

इसलिए महाकाली की कभी भी मन, वचन एवं कर्म से निन्दा नहीं करनी चाहिए। जो निन्दा करता है, उसका विनाश निश्चित है ॥ १५५ ॥

क्रम से दीक्षा लेने वाले को ही सिद्धि प्राप्त होती है अन्यथा नहीं। जो क्रम से दीक्षा नहीं लेता उसका मन्त्र सिद्ध नहीं होता और वह अल्पायु हो जाता है ॥ १५६ ॥

क्रम से दीक्षा न लेने वाले पुरुष की स्त्री, पुत्र तथा राज्य का विनाश हो जाता है। किन्तु क्रम से दीक्षा लेने वाला साधक पुत्र, स्त्री तथा राज्य भी प्राप्त कर लेता है ॥ १५७ ॥

जो काली सहस्र नाम का नित्य एक बार पाठ करता है उसके समस्त पापों का नाश हो जाता है। दो बार नित्य पाठ करने वाले की मनोरथ सिद्धि होती है ॥ १५८ ॥

नित्य तीन बार पाठ करने वाला साधक बृहस्पति के समान विदग्ध होता है। चार बार पाठ करने वाला चारों वर्णों का अधिपति हो जाता है ॥ १५९ ॥

पञ्चवारं पठद् देवि ! पञ्चकामाधिपो भवेत् ।
षड्वारं च पठेद् देवि ! षडैश्वर्याधिपो भवेत् ॥१६०॥
सप्तवारं पठेत् सप्तकामानां चिन्तितं लभेत् ।
वसुवारं पठेद् देवि ! दिगीशो भवति ध्रुवम् ॥१६१॥
नववारं पठेद् देवि ! नवनाथसमो भवेत् ।
दशवारं कीर्तयेद् यो दशार्हः खेचरेश्वरः ॥१६२॥
विंशद्-वारं कीर्तयेद् यः सर्वैश्वर्यमयो भवेत् ।
पञ्चविंशतिवारैस्तु सर्वचिन्ताविनाशकः ॥१६३॥
पञ्चाशद्वारमावर्त्य पञ्चभूतेश्वरो भवेत् ।
शतवरं कीर्तयेद् यः शतानन-समान-धीः ॥१६४॥

पाँच बार पाठ करने वाला साधक पञ्च ज्ञानेन्द्रियों के काम रूप, रस, गन्ध, स्पर्श तथा शब्द रूप पाँचों कामनाओं को प्राप्त करता है। छह बार पाठ करने वाला साधक ज्ञान-वैराग्यादि छह ऐश्वर्यों को प्राप्त कर लेता है ॥ १६० ॥

सात बार पाठ करने वाला सातों कामनाओं से चिन्तित वस्तु को प्राप्त करता है। आठ बार पाठ करने वाला साधक आठों दिशाओं का अधिपति हो जाता है ॥ १६१ ॥

हे देवि ! जो नव बार पाठ करता है वह गोरखनाथ आदि नव नाथों के समान हो जाता है। जो दस बार पाठ करता है वह आकाश में दस दिशाओं में चलने वाला हो जाता है ॥ १६२ ॥

जो बीस बार पाठ करते हैं उन्हें सभी ऐश्वर्य प्राप्त हो जाते हैं। पचीस बार पाठ कहने से सभी चिन्ताएँ विनष्ट हो जाती हैं ॥१६३॥

पचास बार पाठ करने से पञ्चभूत का ईश्वर हो जाता है। जो सौ बार पाठ करता है वह शतानन के समान बुद्धिमान् होता है ॥१६४॥

शतपञ्चकमावर्त्य राजराजेश्वरो भवेत् ।
सहस्रावर्तनाद् देवि ! लक्ष्मीरावृणुते स्वयम् ॥१६५॥
त्रिसहस्रं समावर्त्य त्रिनेत्रसदृशो भवेत् ।
पञ्चसाहस्रमावर्त्य कामकोटिविमोहनः ॥१६६॥
दशसहस्रावर्तनैर्भवेद् दशमुखेश्वरः ।
पञ्चविंशतिसाहस्रैश्चतुर्विंशति-सिद्धिधृक् ॥१६७॥
लक्षावर्तनमात्रेण लक्ष्मीपतिसमो भवेत् ।
लक्षत्रयावर्त्तनात्तु महादेवं विजेष्यति ॥१६८॥
लक्षपञ्चकमावर्त्य कलापञ्चकसंयुतः ।
दशलक्षावर्तनात्तु दशविद्याप्तिरुत्तमा ॥१६९॥

एक सौ पाँच बार पाठ करने से राजराजेश्वर हो जाता है। एक सहस्र (हजार) बार पाठ करने से लक्ष्मी उसे स्वयं वरण कर लेती हैं ॥ १५६ ॥

तीन हजार बार पाठ करने से त्रिनयन के समान हो जाता है। पाँच हजार बार पाठ करने से काम-कोटि को भी मोह लेता है ॥१६६॥

दशसहस्र बार पाठ करने से दशमुखेश्वर हो जाता है। चौबीस हजार पाठ करने से उसे चौबीस सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं ॥ १६७ ॥

एक लाख आवृति करने से साधक लक्ष्मीपति के समान हो जाता है। तीन लाख बार पाठ करने वाला महादेव को भी जीत लेता है ॥ १६८ ॥

पाँच लाख बार पाठ करने से पाँच कलाओं से युक्त हो जाता है। दश लाख बार पाठ करने से दश महाविद्याओं की प्राप्ति हो जाती है ॥ १६९ ॥

पञ्चविंशतिलक्षैस्तु दशविद्येश्वरो भवेत् ।
पञ्चाशल्लक्षमावृत्य महाकालसमो भवेत् ॥१७०॥
कोटिमावर्तयेद्यस्तु कालीं पश्यति चक्षुषा ।
वरदानोद्युक्तकरां महाकालसमन्विताम् ॥१७१॥
प्रत्यक्षं पश्यति शिवे ! तस्या देहो भवेद् ध्रुवम् ।
श्रीविद्या-कालिका-तारा-त्रिशक्तिविजयी भवेत्॥१७२॥
विधेर्लिपिं च सम्माज्यं किङ्करत्वं विसृज्य च ।
महाराज्यमवाप्नोति नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१७३॥
त्रिशक्तिविषये देवि ! क्रमदीक्षा प्रकीर्तिता ।
क्रमदीक्षायुतो देवि ! राजा भवति निश्चितम् ॥१७४॥

पचीस लाख बार पाठ करने से दश विद्याओं का ईश्वर हो जाता है। पचास लाख बार पाठ करने वाला साधक महाकाल की समता रखता है ॥ १७० ॥

एक करोड़ बार पाठ करने वाला पुरुष महाकाली को अपनी आँखों से देख लेता है। स्वयं काली उसे वरदान की मुद्रा में महाकाल के साथ उसके सामने प्रगट होती हैं ॥१७१॥

वह पुरुष श्रीविद्या, कालिका, तारा आदि तीनों शक्तियों पर विजय प्राप्त करता है। तथा इन्हें वह अपने शरीर में प्रत्यक्ष रूप से देखता है ॥१७२॥

वह पुरुष ब्रह्मा की लिखी हुई लिपि को भी मिटा सकता है एवं वह किसी देवता का किंकर नहीं रहता। वह स्वयं महाराज्य पद को प्राप्त करता है। इसमें सन्देह नहीं ॥१७३॥

महादेव जी पार्वती से कहते हैं कि, हे देवि ! त्रिशक्ति की उपासना में क्रमदीक्षा आवश्यक है। जो क्रम से दीक्षा प्राप्त करता है, वह निःसन्देह राजा हो जाता है ॥१७४॥

क्रमदीक्षाविहीनस्य फलं पूर्वमिहेरितम् ।
क्रमदीक्षायुतो देवि ! शिव एव न चाऽपरः ॥१७५॥
क्रमदीक्षासमायुक्तः काल्योक्तसिद्धिभाग् भवेत् ।
क्रमदीक्षाविहीनस्य सिद्धिहानिः पदे पदे ॥१७६॥
अहो जन्मवतां मध्ये धन्यः क्रमयुतः कलौ ।
तत्राऽपि धन्यो देवेशि ! नामसाहस्रपाठकः ॥१७७॥
दशकालीविधौ देवि ! स्तोत्रमेतत् सदा पठेत् ।
सिद्धिं विन्दति देवेशि ! नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१७८॥
काली काली महाविद्या कलौ काली च सिद्धिदा ।
कलौ काली च सिद्धा च कलौ काली वरप्रदा ॥१७९॥

जो क्रमपूर्वक दीक्षा नहीं लेता, उसका फल हम पहले कह आये हैं। किन्तु क्रम से दीक्षा लेने वाला पुरुष शिव के समान ही है इसमें संशय नहीं करना चाहिए ॥१७५॥

क्रम से दीक्षा लेने वाला साधक ही काली को सिद्ध करने में समर्थ होता है, ऐसा काली का वचन है। किन्तु जो क्रम से दीक्षा नहीं लेता उसे पदे-पदे सिद्धि की हानि उठानी पड़ती है ॥१७६॥

क्रम से दीक्षा लेने वाला पुरुष ही इस कलि के मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ है। उसमें काली-सहस्रनाम का पाठ करने वाला धन्य है ॥१७७॥

काली के सन्निधान में दश बार पाठ करने वाला साधक सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। हे पार्वति ! इसमें सन्देह मत करो ॥१७८॥

काली, काली महाविद्या कलियुग में सिद्धि प्रदान करने वाली है। कलि में काली ही सिद्ध हैं तथा वर देने वाली हैं ॥१७९॥

कलौ काली साधकस्य दर्शनार्थं समुद्यता ।
कलौ काली केवला स्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा।।१८०।।
नाऽन्यविद्या नाऽन्यविद्या नाऽन्यविद्या कलौ भवेत् ।
कलौ कालीं विहायाऽथ यः कश्चित् सिद्धिकामुकः।।१८१।।
स तु शक्ति विना देवि ! रतिसम्भोगमिच्छति ।
कलौ कालीं विना देवि! यः कश्चित् सिद्धिमिच्छति।।१८२।।
स नीलसाधनं त्यक्त्वा परिभ्रमति सर्वतः ।
कलौ कालीं विहायाऽथयः कश्चिन् मोक्षमिच्छति।।१८३।।
गुरुध्यानं परित्यज्य सिद्धिमिच्छति साधकः ।
कलौ कालीं विहायाऽथ यः कश्चिद् राज्यमिच्छति।।१८४।।

कलियुग में एक काली ही अपने साधक को दर्शन देने के लिए तैयार रहती हैं। कलि में केवल काली ही विद्यमान हैं, इसमें सन्देह नहीं ।।१८०।।

कलि में और महाविद्याएँ सिद्धि नहीं देतीं यह मत मैं तीन बार सत्य उच्चारण कर रहा हूँ। कलि में काली को छोड़ कर जो सिद्धि चाहता है ।।१८१।।

मानो वह शक्ति के बिना ही रतिसंभोग का सुख चाह रहा है। इस कलि में काली को छोड़ कर जो सिद्धि चाहता है वह नील मणि को छोड़ कर व्यर्थ ही भ्रमवश इधर-उधर दौड़ रहा है। जो काली को छोड़ कर मोक्ष चाहता है ऐसा साधक गुरुध्यान को छोड़ कर सिद्धि चाहता है। कलि में काली को छोड़ कर जो राज्य चाहता है ।।१८२-१८४।।

स भोजनं परित्यज्य भिक्षुवृत्तिमभीप्सति ।
स धन्यः स च विज्ञानी स एव सुरपूजितः ॥१८५॥
स दीक्षितः सुखी साधुः सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
स वेदवक्ता स्वाध्यायी नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१८६॥
शिवरूपं गुरुं ध्यात्वा शिवरूपं गुरुं स्मरेत् ।
सदाशिवः स एव स्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१८७॥
स्वस्मिन् कालीं तु सम्भाव्य पूजयेज्जगदम्बिकाम् ।
त्रैलोक्यविजयी भूयान्नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१८८॥
गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं प्रयत्नतः ।
रहस्याऽतिरहस्यं च रहस्याऽतिरहस्यकम् ॥१८९॥

वह भोजन का तिरस्कार कर भिक्षावृत्ति करना चाहता है। इस कलि में वही धन्य है वही विज्ञानी है, वही देवपूजित है ॥१८५॥

वही दीक्षित, वही सुखी, वही साधु, वही सत्यवादी एवं वही जितेन्द्रिय है। वही वेदवक्ता और स्वाध्यायी है, इसमें विशेष विचार नहीं करना चाहिए ॥१८६॥

जो साधक शिवरूप गुरु का ध्यान एवं शिवरूप गुरु का स्मरण कर महाकाली की आराधना करता है वही सदाशिव है, इसमें सन्देह नहीं ॥१८७॥

अपने में ही काली की सम्भावना कर जगदम्बा का पूजन करना चाहिए। ऐसा साधक त्रैलोक्य का विजयी होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥१८८॥

यत्नपूर्वक इस काली-सहस्रनाम को गोपनीय रखना चाहिए। यह सभी रहस्यों का रहस्य है तथा सभी रहस्यों का अतिक्रमण करने वाला है ॥१८९॥

श्लोकार्द्धं पादमात्रं वा पादार्द्धं च तदर्द्धकम् ।
नामार्द्धं यः पठेद् देवि ! न वन्ध्यदिवसं न्यसेत् ॥१००॥

पुस्तकं पूजयेद् भक्त्या त्वरितं फलसिद्धये ।
न च मारीभयं तत्र न चाऽग्निर्वायुसम्भवम् ॥१९१॥

न भूतादिभयं तत्र सर्वत्र सुखमेधते ।
कुङ्कुमालक्तकेनैव रोचनाऽगुरुयोगतः ॥१९२॥

भूर्जपत्रे लिखेत् पुस्तं सर्वकामार्थसिद्धये ॥१९३॥

काली-सहस्रनाम के आधा श्लोक अथवा आधा पाद या चरण के आधे का भी आधा तथा उसका भी आधा तथा उसका भी आधा जो पाठ करता है. उसका दिन सफल होता है ॥१९०॥

हे देवि ! सद्यः फलप्राप्ति के लिए इस सहस्रनाम पुस्तक का पूजन आवश्यक है। जहाँ इसकी पूजा होती है, वहाँ मारी का भय नहीं रहता, न अग्नि का, न वायु का भय वहाँ रहता है ॥१९१॥

वहाँ भूतादि का भय नहीं रहता एवं सर्वत्र सुख ही रहता है। कुङ्कुमादि राग, अलक्तक आदि शृङ्गार, दूर्वा, हरिद्रा, अगुरु से पुस्तक का पूजन करना चाहिए ॥१९२॥

सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि के लिए भोजपत्र पर पुस्तक लिखना चाहिए ॥१९३॥

इति गदितमशेषं कालिकावर्णरूपं
प्रपठति यदि भक्त्या सर्वसिद्धीश्वरः स्यात् ।
अभिनवसुखकामः सर्वविद्याभिरामो
भवति सकलसिद्धिः सर्ववीरासमृद्धिः ॥१९४॥

इति संक्षेपतः प्रोक्तं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ? ॥१९५॥

इति काली-रहस्ये कालीसहस्रनामस्तोत्रं[1] सम्पूर्णम् ।

[इति कालीपञ्चाङ्गं समाप्तम् ।]

इस प्रकार हे पार्वती ! मैंने वर्ण के रूप में विद्यमान भगवती काली के सम्पूर्ण सहस्रनामों को तुम से कहा, जो कोई भक्तिपूर्वक इस सहस्रनाम का पाठ करेंगे, वे सर्वसिद्धीश्वर हो जायेंगे ।

उन्हें उत्तमोत्तम अनेक प्रकार के सुखों की प्राप्ति होगी, सम्पूर्ण विद्याओं में वे पारङ्गत होंगे, वे पुत्र-पौत्रादि समृद्धि से युक्त होकर सभी प्रकार की सिद्धि प्राप्त करेंगे ॥ १९४ ॥

यह सब मैंने संक्षेप में तुम से कहा, अब और क्या सुनना चाहती हो ? ॥ १९५ ॥

इस प्रकार आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री कृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित काली-रहस्य में काली-सहस्रनाम-स्तोत्र समाप्त ।

---

१. 'पटलं पद्धती वर्म तथा नाम-सहस्रकम् ।
स्तोत्राणि चेति पञ्चाङ्गं देवतोपासने स्मृतम् ॥१॥
कवचं देवतागात्रं पटलं देवताशिरः ।
पद्धतिर्देवहस्तौ तु मुखं साहस्रकं स्मृतम् ॥
स्तोत्राणि देवतापादौ पञ्चाङ्गं पञ्चभिः स्मृतम् ॥२॥

कालीसहस्रनामावली

सङ्कल्पः

साधकः (यजमानो वा) आचम्य, प्राणानायम्य, हस्ते जला-ऽक्षत-पुष्प-द्रव्याण्यादाय, अद्येत्याद्युच्चार्य, शुभपुण्यतिथौ अमुकनाम्नो मम सकुटुम्बस्य सकल-पापक्षय निवृत्तिपूर्वक-दीर्घायुः-पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न-सन्ततिवृद्धि-स्थिरलक्ष्म्यैहिका-ऽऽमुष्मिक-समस्तकामनासिद्धि-द्वारा धर्मा-ऽर्थ-काम-मोक्ष-चतुर्विध-पुरुषार्थफलावाप्तये श्रीदक्षिण-कालीदेवताप्रीत्यर्थं तद्दिव्यसहस्रनामावलीभि, पुष्पादिसमर्पणं करिष्ये।

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीदक्षिणकालिकामन्त्रस्य, महाकाल ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीदक्षिणमहाकाली देवता, ह्रीं बीजं, हूं शक्तिः, क्रीं कीलकम्, श्रीदक्षिणकालिकादेवताप्रसादसिद्ध्यर्थं चतुर्वर्गफलप्राप्तये वा तद्दिव्य-सहस्रनामभिः पुष्पादिद्रव्यसमर्पणे विनियोगः।

करन्यासः

क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्रैं अनामिकाभ्यां हुम्। क्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अङ्गन्यासः

क्रां हृदयाय नमः। क्रीं शिरसे स्वाहा। क्रूं शिखायै वषट्। क्रैं कवचाय हुम्। क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्रः अस्त्राय फट्।

काली-ध्यानम्

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला-विभूषिताम् ॥ १ ॥
सद्यश्छिन्न-शिरः-खड्ग-वामोर्ध्वाऽधः-कराम्बुजाम् ।
अभयं वरदं चैव दक्षिणाधोर्ध्व-पाणिकाम् ॥ २ ॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ।
कण्ठावसक्त-मुण्डाली-गलद्-रुधिर - चर्चिताम् ॥ ३ ॥
कर्णावतंसतानीत - शवयुग्म - भयानकाम् ।
घोरदंष्ट्रा - करालास्यां पीनोन्नत-पयोधराम् ॥ ४ ॥
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ।
सृक्कद्वय - गलद्रक्त - धराविस्फुरिताननाम् ॥ ५ ॥
घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ।
दन्तुरां दक्षिणव्यापि-लम्बमान - कचोच्चयाम् ॥ ६ ॥
शवरूपमहादेव - हृदयोपरि संस्थिताम् ।
शिवाभिर्घोररूपाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम् ॥ ७ ॥

नामावली

१ ॐ क्रीं काल्यै नमः
२ ॐ क्रूं कराल्यै नमः
३ ॐ कल्याण्यै नमः
४ ॐ कमलायै नमः
५ ॐ कलायै नमः
६ ॐ कलावत्यै नमः
७ ॐ कलाढ्यायै नमः
८ ॐ कलापूज्यायै नमः
९ ॐ कलात्मिकायै नमः
१० ॐ कलाहृष्टायै नमः
११ ॐ कलापुष्टायै नमः
१२ ॐ कलामस्तायै नमः
१३ ॐ कलाकरायै नमः
१४ ॐ कलाकोटिसमाभासायै नमः
१५ ॐ कलाकोटिप्रपूजितायै नमः
१६ ॐ कलाकर्मकलाधरायै नमः
१७ ॐ कलापरायै नमः
१८ ॐ कलागमायै नमः
१९ ॐ कलाधारायै नमः
२० ॐ कमलिन्यै नमः
२१ ॐ ककरायै नमः
२२ ॐ करुणायै नमः
२३ ॐ काव्यै नमः
२४ ॐ ककारवर्णसर्वाङ्ग्यै नमः
२५ ॐ कलाकोटिप्रभूषितायै नमः
२६ ॐ ककारकोटिगुणितायै नमः
२७ ॐ ककारकोटिभूषणायै नमः
२८ ॐ ककारवर्णहृदयायै नमः
२९ ॐ ककारमनुमण्डितायै नमः
३० ॐ काकारवर्णनिलयायै नमः
३१ ॐ काकशब्दपरायणायै नमः
३२ ॐ ककारवर्णमुकुटायै नमः
३३ ॐ ककारवर्णभूषणायै नमः
३४ ॐ ककारवर्णरूपायै नमः
३५ ॐ ककशब्दपरायणायै नमः
३६ ॐ ककवीरास्फालरतायै नमः
३७ ॐ कमलाकरपूजितायै नमः
३८ ॐ कमलाकरनाथायै नमः
३९ ॐ कमलाकररूपधृषे नमः
४० ॐ कमलाकरसिद्धिस्थायै नमः
४१ ॐ कमलाकरपारदायै नमः
४२ ॐ कमलाकरमध्यस्थायै नमः
४३ ॐ कमलाकरतोषितायै नमः
४४ ॐ कथङ्कारपरालापायै नमः
४५ ॐ कथाङ्कारपरायणायै नमः
४६ ॐ कथाङ्कारपदान्तस्थायै नमः
४७ ॐ कथङ्कारपदार्थभुवे नमः
४८ ॐ कमलाक्ष्यै नमः

४९ ॐ कमलजायै नमः
५० ,, कमलाक्षप्रपूजितायै नमः
५१ ,, कमलाक्षवरोद्युक्तायै नमः
५२ ,, ककरायै नमः
५३ ,, कर्बूराक्षरायै नमः
५४ ,, करतारायै नमः
५५ ,, करच्छिन्नायै नमः
५६ ,, करश्यामायै नमः
५७ ,, करार्णवायै नमः
५८ ,, करपूज्यायै नमः
५९ ,, कररतायै नमः
६० ,, करदायै नमः
६१ ,, करजितायै नमः
६२ ,, करतोयायै नमः
६३ ,, करमर्षायै नमः
६४ ,, कर्मनाशायै नयः
६५ ,, करप्रियायै नमः
६६ ,, करप्राणायै नमः
६७ ,, करकजायै नमः
६८ ,, करकायै नमः
६९ ,, करकान्तरायै नमः
७० ,, करकाचलरूपायै नमः
७१ ,, करकाचलशोभिन्यै नमः
७२ ,, करकाचलपुत्र्यै नमः
७३ ,, करकाचलतोषितायै नमः
७४ ,, करकाचलगेहस्थायै नमः
७५ ,, करकाचलरक्षिण्यै नमः
७६ ,, करकाचलसम्मान्यायै नमः
७७ ॐ करकाचलकारिण्यै नमः
७८ ,, करकाचलवर्षाढ्यायै नमः
७९ ,, करकाचलरञ्जितायै नमः
८० ,, करकाचलकान्तारायैः नमः
८१ ,, करकाचलमालिन्यै नमः
८२ ,, करकाचलभोज्यायै नमः
८३ ,, करकाचलरूपिण्यै नमः
८४ ,, करामलकसंस्थायै नमः
८५ ,, करामलकसिद्धिदायै नमः
८६ ,, करामलकसम्पूज्यायै नमः
८७ ,, करामलकतारिण्यै नमः
८८ ,, करामलककाल्यै नमः
८९ ,, करामलकरोचिन्यै नमः
९० ,, करामलकमात्रे नमः
९१ ,, करामलकसेविन्यै नमः
९२ ,, करामलकवद्ध्येयायै नमः
९३ ,, करामलकदायिन्यै नमः
९४ ,, कञ्जनेत्रायै नमः
९५ ,, कञ्जमत्यै नमः
९६ ,, कञ्जस्थायै नमः
९७ ,, कञ्जधारिण्यै नमः
९८ ,, कञ्जमालाप्रियकर्यै नमः
९९ ,, कञ्जरूपायै नमः
१०० ,, कञ्जजायै नमः
१०१ ,, कञ्जजात्यै नमः
१०२ ,, कञ्जगत्यै नमः
१०३ ,, कञ्जहोमपरायणायै नमः
१०४ ,, कञ्जमण्डलमध्यस्थायै नमः

१०५ ॐ कञ्जाभरणभूषितायै नमः
१०६ ,, कञ्जसम्माननिरतायै नमः
१०७ ,, कञ्जोत्पत्तिपरायणायै नमः
१०८ ,, कञ्जराशिसमाकारायै नमः
१०९ ,, कञ्जारण्यनिवासिन्यै नमः
११० ,, करञ्जवृक्षमध्यस्थायै नमः
१११ ,, करञ्जवृक्षवासिन्यै नमः
११२ ,, करञ्जफलभूषाढचायै नमः
११३ ,, करञ्जारण्यवासिन्यै नमः
११४ ;, करञ्जमालाभरणायै नमः
११५ ,, करवालपरायणायै नमः
११६ ,, करवालप्रहृष्टात्मने नमः
११७ ,, करवालप्रियागत्यै नमः
११८ ;, करवालप्रियाकन्थायै नमः
११९ ,, करवालविहारिण्यै नमः
१२० ,, करवालमय्यै नमः
१२१ ,, कर्मायै नमः
१२२ ,, करवालप्रियङ्कर्यै नमः
१२३ ,, कबन्धमालाभरणायै नमः
१२४ ,, कबन्धराशिमध्यगायै नमः
१२५ ,, कबन्धकूटसंस्थानायै नमः
१२६ ;, कबन्धानन्तभूषणायै नमः
१२७ ,, कबन्धनादसन्तुष्टायै नमः
१२८ ,, कबन्धासनधारिण्यै नमः
१२९ ,, कबन्धगृहमध्यस्थायै नमः
१३० ,, कबन्धवनवासिन्यै नमः
१३१ ,, कबन्धकाञ्च्यै नमः
१३२ ,, करण्यै नमः
१३३ ॐ कबन्धराशिभूषणायै नमः
१३४ ,, कबन्धमालाजयदायै नमः
१३५ ,, कबन्धदेहवासिन्यै नमः
१३६ ,, कबन्धासनमान्यायै नमः
१३७ ,, कपालमाल्यधारिण्यै नमः
१३८ ,, कपालमालामध्यस्थायै नमः
१३९ ,, कपालव्रततोषितायै नमः
१४० ,, कपालदीपसन्तुष्टायै नमः
१४१ ,, कपालदीपरूपिण्यै नमः
१४२ ,, कपालदीपवरदायै नमः
१४३ ,, कपालकज्जलस्थितायै नमः
१४४ ,, कपालमालाजयदायै नमः
१४५ ,, कपालजलतोषिण्यै नमः
१४६ ,, कपालसिद्धिसंहृष्टायै नमः
१४७ ,, कपालभोजनोद्यतायै नमः
१४८ ,, कपालव्रतसंस्थानायै नमः
१४९ ,, कपालकमलालयायै नमः
१५० ,, कवित्वामृतसारायै नमः
१५१ ,, कवित्वामृतसागरायै नमः
१५२ ,, कवित्वसिद्धिसंहृष्टायै नमः
१५३ ,, कवित्वादानकारिण्यै नमः
१५४ ,, कविपूज्यायै नमः
१५५ ,, कविगत्यै नमः
१५६ ,, कविरूपायै नमः
१५७ ,, कविप्रियायै नमः
१५८ ,, कविब्रह्मानन्दरूपायै नमः
१५९ ,, कवित्वव्रततोषितायै नमः
१६० ,, कवित्वव्रतसंस्थानायै नमः

१६१ ॐ कविवाञ्छाप्रपूरिण्यै नमः
१६२ ,, कविकण्ठस्थितायै नमः
१६३ ,, कंह्रींकंकंकंकविपूर्तिदायैनमः
१६४ ,, कज्जलायै नमः
१६५ ,, कज्जलदानमानसायै नमः
१६६ ,, कज्जलप्रियायै नमः
१६७ ,, कपालकज्जलसभायै नमः
१६८ ,, कज्जलेशप्रपूजितायै नमः
१६९ ,, कज्जलार्णवमध्यस्थायैनमः
१७० ,, कज्जलानन्यरूपिण्यै नमः
१७१ ,, कज्जलप्रियसन्तुष्टायै नमः
१७२ ,, कज्जलप्रियतोषिण्यै नमः
१७३ ,, कपालमालाभरणायै नमः
१७४ ,, कपालकरभूषणायै नमः
१७५ ,, कपालकरभूषाढ्यायै नमः
१७६ ,, कपालचक्रमण्डितायै नमः
१७७ ,, कपालकोटिनिलयायै नमः
१७८ ,, कपालदुर्गकारिण्यै नमः
१७९ , कपालगिरिसंस्थानायै नमः
१८० ,, कपालचक्रवासिन्यै नमः
१८१ ,, कपालपात्रसन्तुष्टायै नमः
१८२ ,, कपालार्घ्यपरायणायै नमः
१८३ ,,कपालार्घ्यप्रियप्राणायै नमः
१८४ ,, कपालार्घ्यवरप्रदायै नमः
१८५ ,, कपालचक्ररूपायै नमः
१८६ ,, कपालरूपमात्रगायैः नमः
१८७ ,, कदल्यै नमः
१८८ ,, कदलीरूपायै नमः

१८९ ॐ कदलीवनवासिन्यै नमः
१९० ,, कदलीपुष्पसम्प्रीतायै नमः
१९१ ,, कदलीफलमानसायै नमः
१९२ ,, कदलीहोमसम्पुष्टायै नमः
१९३ ,, कदलीदर्शनोद्यतायै नमः
१९४ ,, कदलीगर्भमध्यस्थायै नमः
१९५ ,, कदलीवनसुन्दर्य्यै नमः
१९६ ,, कदम्बपुष्पनिलयायै नमः
१९७ ,, कदम्बवनमध्यगायै नमः
१९८ ,, कदम्बकुसुमामोदायै नमः
१९९ ,, कदम्बवनतोषिण्यै नमः
२०० ,, कदम्बपुष्पसम्पूज्यायै नमः
२०१ ,, कदम्बपुष्पहोमदायै नमः
२०२ ,, कदम्बपुष्पमध्यस्थायै नमः
२०३ ,, कदम्बफलभोजिन्यै नमः
२०४ ,, कदम्बकाननान्तस्थायै नमः
२०५ ,, कदम्बाचलवासिन्यै नमः
२०६ ,, कक्षपायै नमः
२०७ ,, कक्षाराध्यायै नमः
२०८ ,, कच्छपासनस्थितायै नमः
२०९ ,, कर्णपूरायै नमः
२१० ,, कर्णनासायै नमः
२११ ,, कर्णाढ्यायै नमः
२१२ ,, कालभैरव्यै नमः
२१३ ,, कलहप्रीतायै नमः
२१४ ,, कलहदायै नमः
२१५ ,, कलहायै नमः
२१६ ,, कलहातुरायै नमः

२१७ ॐ कर्णयक्ष्यै नमः
२१८ ,, कथिन्यै नमः
२१९ ,, कर्णसुन्दर्यै नमः
२२० ,, कर्णपिशाचिन्यै नमः
२२१ ,, कर्णमञ्जर्यै नमः
२२२ ,, कविकक्षदायै नमः
२२३ ,, कविकक्षविरूपाढ्यायै नमः
२२४ ,, कविकक्षस्वरूपिण्यै नमः
२२५ ,, कस्तूरीमृगसंस्थानायै नमः
२२६ ,, कस्तूरीमृगरूपिण्यै नमः
२२७ ,, कस्तूरीमृगसन्तोषायै नमः
२२८ ,, कस्तूरीमृगमध्यगायै नमः
२२९ ,, कस्तूरीरसनीलाङ्ग्यै नमः
२३० ,, कस्तूरीगन्धतोषितायै नमः
२३१ ,, कस्तूरीपूजकप्राणायै नमः
२३२ ,, कस्तूरीपूजकप्रियायै नमः
२३३ ,, कस्तूरीप्रेमसन्तुष्टायै नमः
२३४ ,, कस्तूरीप्राणधारिण्यै नमः
२३५ ,, कस्तूरीपूजकानन्दायै नमः
२३६ ,, कस्तूरीगन्धरूपिण्यै नमः
२३७ ,, कस्तूरीमालिकारूपायै नमः
२३८ ,, कस्तूरीभोजनप्रियायै नमः
२३९ ,, कस्तूरीतिलकानन्दायै नमः
२४० ,, कस्तूरीतिलकप्रियायै नमः
२४१ ,, कस्तूरीहोमसन्तुष्टायै नमः
२४२ ,, कस्तूरीतर्पणोद्यतायै नमः
२४३ ,, कस्तूरीमार्जनोद्युक्तायै नमः
२४४ ,, कस्तूरीचक्रपूजितायै नमः
२४५ ॐ कस्तूरीपुष्पसम्पूज्यायै नमः
२४६ ,, कस्तूरीचर्वणोद्यतायै नमः
२४७ ,, कस्तूरीगर्भमध्यस्थायै नमः
२४८ ,, कस्तूरीवस्त्रधारिण्यै नमः
२४९ ,, कस्तूरिकामोदरतायै नमः
२५० ,, कस्तूरीवनवासिन्यै नमः
२५१ ,, कस्तूरीवनसंरक्षायै नमः
२५२ ,, कस्तूरीप्रेमधारिण्यै नमः
२५३ ,, कस्तूरीशक्तिनिलयायै नमः
२५४ ,, कस्तूरीकुण्डगायै नमः
२५५ ,, कस्तूरीकुण्डसंस्नातायै नमः
२५६ ,, कस्तूरीकुण्डमज्जनायै नमः
२५७ ,, कस्तूरीजीवसन्तुष्टायै नमः
२५८ ,, कस्तूरीजीवधारिण्यै नमः
२५९ ,, कस्तूरीपरमामोदायै नमः
२६० ,, कस्तूरीजीवनक्षमायै नमः
२६१ ,, कस्तूरीजातिभावस्थायै नमः
२६२ ,, कस्तूरीगन्धचुम्बनायै नमः
२६३ ,, कस्तूरीगन्धसंशोभाविराजितकपालभुवे नमः
२६४ ,, कस्तूरीमदनान्तस्थायै नमः
२६५ ,, कस्तूरीमदहर्षदायै नमः
२६६ ,, कस्तूर्यै नमः
२६७ ,, कवितानाढ्यायै नमः
२६८ ,, कस्तूरीगृहमध्यगायै नमः
२६९ ,, कस्तूरीस्पर्शकप्राणायै नमः
२७० ,, कस्तूरीनिन्दाकान्तकायै नमः

२७१ ॐ कस्तूर्यामोदरसिकायै नमः
२७२ ,, कस्तूरीक्रीडनोद्यतायै नमः
२७३ ,, कस्तूरीदाननिरतायै नमः
२७४ ,, कस्तूरीवरदायिन्यै नमः
२७५ ,, कस्तूरीस्थापनाशक्तायै नमः
२७६ ,, कस्तूरीस्थानरञ्जिन्यै नमः
२७७ ,, कस्तूरीकुशलप्राणायै नमः
२७८ ,, कस्तूरीस्तुतिवन्दितायै नमः
२७९ ,, कस्तूरीवन्दकाराध्यायै नमः
२८० ,, कस्तूरीस्थानवासिन्यै नमः
२८१ ,, कहरूपायै नमः
२८२ ,, कहाढ्यायै नमः
२८३ ,, कहानन्दायै नमः
२८४ ,, कहात्मभुवे नमः
२८५ ,, कहपूज्यायै नमः
२८६ ,, कहेत्याख्यायै नमः
२८७ ,, कहहेयायै नमः
२८८ ,, कहात्मिकायै नमः
२८९ ,, कहमालायै नमः
२९० ,, कण्ठभूषायै नमः
२९१ ,, कहमन्त्रजपोद्यतायै नमः
२९२ ,, कहनामस्मृतिपरायै नमः
२९३ ,, कहनामपरायणायै नमः
२९४ ,, कहपरायणरतायै नमः
२९५ ,, कहदेव्यै नमः
२९६ ,, कहेश्वर्यै नमः
२९७ ,, कहहेत्वै नमः
२९८ ,, कहानन्दायै नमः
२९९ ॐ कहनादपरायणायै नमः
३०० ,, कहमात्रे नमः
३०१ ,, कहान्तस्थायै नमः
३०२ ,, कहमन्त्रायै नमः
३०३ ,, कहेश्वरायै नमः
३०४ ,, कहगेयायै नमः
३०५ ,, कहाराध्यायै नमः
३०६ ,, कहध्यानपरायणायै नमः
३०७ ,, कहतन्त्रायै नमः
३०८ ,, कहकहायै नमः
३०९ ,, कहचर्यापरायणायै नमः
३१० ,, कहाचारायै नमः
३११ ,, कहगत्यै नमः
३१२ ,, कहताण्डवकारिण्यै नमः
३१३ ,, कहारण्यायै नमः
३१४ ,, कहगत्यै नमः
३१५ ,, कहशक्तिपरायणायै नमः
३१६ ,, कहराज्यरतायै नमः
३१७ ,, कर्मसाक्षिण्यै नमः
३१८ ,, कर्मसुन्दर्यै नमः
३१९ ,, कर्मविद्यायै नमः
३२० ,, कर्मगत्यै नमः
३२१ ,, कर्मतन्त्रपरायणायै नमः
३२२ ,, कर्ममात्रायै नमः
३२३ ,, कर्मगात्रायै नमः
३२४ ,, कर्मधर्मपरायणायै नमः
३२५ ,, कर्मरेखानाशकर्त्र्यै नमः

३२६ ॐ कर्मरेखाविनोदिन्यै नमः
३२७ ,, कर्मरेखामोहकर्यै नमः
३२८ ,, कर्मकीर्तिपरायणायै नमः
३२९ ,, कर्मविद्यायै नमः
३३० ,, कर्मसारायै नमः
३३१ ,, कर्माधारायै नमः
३३२ ,, कर्मभुवे नमः
३३३ ,, कर्मकार्यै नमः
३३४ ,, कर्महार्यै नमः
३३५ ,, कर्मकौतुकसुन्दर्यै नमः
३३६ ,, कर्मकाल्यै नमः
३३७ ,, कर्मतारायै नमः
३३८ ,, कर्मछिन्नायै नमः
३३९ ,, कर्मदायै नमः
३४० ,, कर्मचाण्डालिन्यै नमः
३४१ ,, कर्मवेदमात्रे नमः
३४२ ,, कर्मभुवे नमः
३४३ ,, कर्मकाण्डरतानन्तायै नमः
३४४ ,, कर्मकाण्डानुमानितायै नमः
३४५ ,, कर्मकाण्डपरीणाहायै नमः
३४६ ,, कर्मठ्यै नमः
३४७ ,, कमठाकृत्यै नमः
३४८ ,, कमठाराध्यहृदयायै नमः
३४९ ,, कमठायै नमः
३५० ,, कण्ठसुन्दर्यै नमः
३५१ ,, कमठासनसंसेव्यायै नमः
३५२ ,, कमठ्यै नमः

३५३ ॐ कर्मतत्परायै नमः
३५४ ,, करुणाकरकान्तायै नमः
३५५ ,, करुणाकरवन्दितायै नमः
३५६ ,, कठोरायै नमः
३५७ ,, करमालायै नमः
३५८ ,, कठोरकुचधारिण्यै नमः
३५९ ,, कपर्दिन्यै नमः
३६० ,, कपटिन्यै नमः
३६१ ,, कठिन्यै नमः
३६२ ,, कङ्कभूषणायै नमः
३६३ ,, करभोर्वै नमः
३६४ ,, कठिनदायै नमः
३६५ ,, करभायै नमः
३६६ ,, करभालयायै नमः
३६७ ,, कलभाषामय्यै नमः
३६८ ,, कल्पायै नमः
३६९ ,, कल्पनायै नमः
३७० ,, कल्पदायिन्यै नमः
३७१ ,, कमलस्थायै नमः
३७२ ,, कलामालायै नमः
३७३ ,, कमलास्यायै नमः
३७४ ,, क्वणत्प्रभायै नमः
३७५ ,, ककुद्मिन्यै नमः
३७६ ,, कष्टवत्यै नमः
३७७ ,, करणीयकथार्चितायै नमः
३७८ ,, कचार्चितायै नमः
३७९ ,, कचतन्वै नमः

३८० ॐ कचसुन्दरधारिण्यै नमः
३८१ ,, कठोरकुचसंलग्नायै नमः
३८२ ,, कटिसूत्रविराजितायै नमः
३८३ ,, कर्णभक्षप्रियायै नमः
३८४ ,, कन्दायै नमः
३८५ ,, कथायै नमः
३८६ ,, कन्दगत्यै नमः
३८७ ,, कल्यै नमः
३८८ ,, कलिघ्न्यै नमः
३८९ ,, कलिदूत्यै नमः
३९० ,, कविनायकपूजितायै नमः
३९१ ,, कणकक्षानियन्त्र्यै नमः
३९२ ,, कश्चित्कविवरार्चितायै नमः
३९३ ,, कर्त्र्यै नमः
३९४ ,, कर्तृकाभूषायै नमः
३९५ ,, करिण्यै नमः
३९६ ,, कर्णशत्रुपायै नमः
३९७ ,, करणेश्यै नमः
३९८ ,, कर्णपायै नमः
३९९ ,, कलवाचायै नमः
४०० ,, कलानिध्यै नमः
४०१ ,, कलनायै नमः
४०२ ,, कलनाधारायै नमः
४०३ ,, कारिकायै नमः
४०४ ,, करकायै नमः
४०५ ,, करायै नमः
४०६ ,, कलगेयायै नमः
४०७ ,, कर्कराश्यै नमः
४०८ ॐ कर्कराशिप्रपूजितायै नमः
४०९ ,, कन्याराश्यै नमः
४१० ,, कन्यकायै नमः
४११ ,, कन्यकाप्रियभाषिण्यै नमः
४१२ ,, कन्यकादानसतुष्टायै नमः
४१३ ,, कन्यकादानतोषिण्यै नमः
४१४ ,, कन्यादानकरानंदायै नमः
४१५ ,, कन्यादानग्रहेष्टायै नमः
४१६ " कर्षणायै नमः
४१७ " कक्षदहनायै नमः
४१८ " कामितायै नमः
४१९ " कमलासनायै नमः
४२० " करमालानन्दकर्त्र्यै नमः
४२१ " करमालाप्रतोषितायै नमः
४२२ " करमालाशयानन्दायै नमः
४२३ " करमालासमागमायै नमः
४२४ " करमालासिद्धिदात्र्यै नमः
४२५ " करमालायै नमः
४२६ " करप्रियायै नमः
४२७ " करप्रियाकररतायै नमः
४२८ " करदानपरायणायै नमः
४२९ " कलानन्दायै नमः
४३० " कलिगत्यै नमः
४३१ " कलिपूज्यायै नमः
४३२ " कलिप्रस्वै नमः
४३३ " कलनादनिनादस्थायै नमः
४३४ " कलनादवरप्रदायै नमः
४३५ " कलनादसमाजस्थायै नमः

४३६ ॐ कह्ोलायै नमः
४३७ " कह्ोलदायै नमः
४३८ " कह्ोलगेहमध्यस्थायै नमः
४३९ " कह्ोलवरदायिन्यै नमः
४४० " कह्ोलकविताधारायै नमः
४४१ " कह्ोलऋषिमानितायै नमः
४४२ " कह्ोलमानसाराध्यायै नमः
४४३ " कह्ोलवाक्यकारिण्यै नमः
४४४ " कर्तृरूपायै नमः
४४५ " कर्तृमय्यै नमः
४४६ " कर्तृमात्रे नमः
४४७ " कर्त्र्यै नमः
४४८ " कनीयायै नमः
४४९ " कनकाराध्यायै नमः
४५० " कनीनकमय्यै नमः
४५१ " कनीयानन्दनिलयायै नमः
४५२ " कनकानन्दतोषितायै नमः
४५३ " कनीनककरायै नमः
४५४ " काष्ठायै नमः
४५५ " कथार्णवकर्य्यै नमः
४५६ " करय्यै नमः
४५७ " करिगम्यायै नमः
४५८ " करिगत्यै नमः
४५९ " करिध्वजपरायणायै नमः
४६० " करिनाथप्रियायै नमः
४६१ " कण्ठायै नमः
४६२ " कथानकप्रतोषितायै नमः
४६३ ,, कमनीयायै नमः
४६४ ॐ कमनायै नमः
४६५ ,, कमनीयविभूषणायै नमः
४६६ ,, कमनीयसमाजस्थायै नमः
४६७ ,, कमनीयव्रतप्रियायै नमः
४६८ ,, कमनीयगुणाराध्यायै नमः
४६९ ,, कपिलायै नमः
४७० ,, कपिलेश्वर्य्यै नमः
४७१ ,, कपिलाराध्यहृदयायै नमः
४७२ ,, कपिलाप्रियवादिन्यै नमः
४७३ ,, कहचक्रमन्त्रवर्णायै नमः
४७४ ,, कहचक्रप्रसूनकायै नमः
४७५ ,, कएईल्ह्रींस्वरूपायै नमः
४७६ ,, कएईल्ह्रींवरप्रदायै नमः
४७७ ,, कएईल्ह्रींसिद्धिदात्र्यै नमः
४७८ ,, कएईल्ह्रींस्वरूपिण्यै नमः
४७९ ,, कएईल्ह्रींमन्त्रवर्णायै नमः
४८० ,, कएईल्ह्रींप्रसूकलायै नमः
४८१ ,, कवर्गायै नमः
४८२ ,, कपाटस्थायै नमः
४८३ ,, कपाटोद्घाटनक्षमायै नमः
४८४ ,, कङ्काल्यै नमः
४८५ ,, कपाल्यै नमः
४८६ ,, कङ्कालप्रियभाषिण्यै नमः
४८७ ,, कङ्कालभैरवाराध्यायै नमः
४८८ ,, कङ्कालमानससंस्थितायै नमः
४८९ ,, कङ्कालमोहनिरतायै नमः
४९० ,, कङ्कालमोहदायिन्यै नमः

४९१ ॐ कलुषघ्न्यै नमः
४९२ ,, कलुषहार्यै नमः
४९३ ,, कलुषार्तिविनाशिन्यै नमः
४९४ ,, कलिपुष्पायै नमः
४९५ ,, कलादायै नमः
४९६ ,, कशिप्वै नमः
४९७ ,, कश्यपार्चितायै नमः
४९८ ,, कश्यपायै नमः
४९९ ,, कश्यपाराध्यायै नमः
५०० ,, कलिपूर्णकलेवरायै नमः
५०१ ,, कलेवरकर्य्यै नमः
५०२ ,, कांच्यै नमः
५०३ ,, कवर्गायै नमः
५०४ ,, करालकायै नमः
५०५ ,, करालभैरवाराध्यायै नमः
५०६ ,, करालभैरवेश्वर्य्यै नमः
५०७ ,, करालायै नय:
५०८ ,, कलनाधारायै नमः
५०९ ,, कपर्दीशवरप्रदायै नमः
५१० ,, कपर्दीशप्रेमलतायै नमः
५११ ,, कपर्दिमालिकायै नमः
५१२ ,, कपर्दिजपमालाढ्यायै नमः
५१३ ,, करवीरप्रसूनदायै नमः
५१४ ,, करवीरप्रियप्राणायै नमः
५१५ ,, करवीरप्रपूजितायै नमः
५१६ ,, कर्णिकारसमाकारायै नमः
५१७ ,, कर्णिकारप्रपूजितायै नमः
५१८ ,, करीषाग्निस्थितायै नमः
५१९ ॐ कर्षायै नमः
५२० ,, कर्षमात्रसुवर्णदायै नमः
५२१ ,, कलशायै नमः
५२२ ,, कलशाराध्यायै नमः
५२३ ,, कषायायै नमः
५२४ ,, करिगानदायै नमः
५२५ ,, कपिलायै नमः
५२६ ,, कलकण्ठ्यै नमः
५२७ ,, कलिकल्पलतायै नमः
५४८ ,, कल्पलतायै नमः
५२९ ,, कल्पमात्रे नमः
५३० ,, कल्पकायै नमः
५३१ ,, कल्पभुवे नमः
५३२ , कर्पूरामोदरुचिरायै नमः
५३३ ,, कर्पूरामोदधारिण्यै नमः
५३४ ,, कर्पूरमालाभरणायै नमः
५३५ ,, कर्पूरवासपूर्त्तिदायै नमः
५३६ ,, कर्पूरमालाजयदायै नमः
५३७ ,, कर्पूरार्णवमध्यगायै नमः
५३८ ,, कर्पूरतर्पणरतायै नमः
५३९ ,, कटकाम्बरधारिण्यै नमः
५४० ,, कपटेश्वरसम्पूज्यायै नमः
५४१ ,, कपटेश्वररूपिण्यै नमः
५४२ ,, कट्वै नमः
५४३ ,, कपिध्वजाराध्यायै नमः
५४४ ,, कलापपुष्परूपिण्यै नमः
५४५ ,, कलापपुष्परुचिरायै नमः
५४६ ,, कलापपुष्पपूजितायै नमः

५४७ ॐ क्रकचायै नमः
५४८ ,, क्रकचाराध्यायै नमः
५४९ ,, कथंभ्रमायै नमः
५५० ,, करलतायै नमः
५५१ ,, कथङ्कारविनिर्मुक्तायै नमः
५५२ ,, काल्यै नमः
५५३ ,, कालक्रियायै नमः
५५४ ,, क्रत्वै नमः
५५५ ,, कामिन्यै नमः
५५६ ,, कामिनीपूज्यायै नमः
५५७ ,, कामिनीपुष्पधारिण्यै नमः
५५८ ,, कामिनीपुष्पनिलयायै नमः
५५९ ,, कामिनीपुष्पपूर्णिमायै नमः
५६० ,, कामिनीपुष्पपूजार्हायै नमः
५६१ ,, कामिनीपुष्पभूषणायै नमः
५६२ ,, कामिनीपुष्पतिलकायै ममः
५६३ ,, कामिनीकुण्डचुम्बनायै नमः
५६४ ,, कामिनीयोगसंतुष्टायै नमः
५६५ ,, कामिनीयोगभोगदायै नमः
५६६ ,, कामिनीकुण्डसम्मग्नायै नमः
५६७ ,, कामिनीकुण्डमध्यगायै नमः
५६८ ,, कामिनीमानसाराध्यायैनमः
५६९ ,, कामिनीमानतोषितायै नमः
५७० , कामिनीमानसञ्चारायै नमः
५७१ ,, कालिकायै नमः
५७२ ,, कालकालिकायै नमः
५६३ ,, कामायै नमः
५७४ ,, कामदेव्यै नमः
५७५ ॐ कामेश्यै नमः
५७६ ,, कामसम्भवायै नमः
५७७ ,, कामभावायै नमः
५७८ ,, कामरतायै नमः
५६९ ,, कामार्त्तायै नमः
५८० ,, काममञ्जर्यै नमः
५८१ ,, काममञ्जीररणितायै नमः
५८२ ,, कामदेवप्रियान्तरायै नमः
५८३ ,, कामकल्यै नमः
५८४ ,, कामकलायै नमः
५८५ ,, कालिकायै नमः
५८६ " कमलार्चितायै नमः
५८७ ,, कादिकायै नमः
५८८ ,, कमलायै नमः
५८९ ,, काल्यै नमः
५९० ,, कालानलसमप्रभायै नमः
५९१ ,, कल्पान्तदहनायै नमः
५९२ ,, कान्तायै नमः
५९३ ,, कान्तारप्रियवासिन्यै नमः
५९४ ,, कालपूज्यायै नमः
५९५ ,, कालरतायै नमः
५९६ ,, कालमात्रे नमः
५९७ ,, कालिन्यै ममः
५९८ ,, कालवीरायै नमः
५९९ ,, कालघोरायै नमः
६०० ,, कालसिद्धायै नमः
६०१ ,, कालदायै नमः
६०२ ,, कालाञ्जनसमाकारायैनमः

६०३ ॐ कालञ्जरनिवासिन्यै नमः
६०४ ,, कालऋद्धयै नमः
६०५ ,, कालवृद्धयै नमः
६०६ ,, कारागृहविमोचिन्यै नमः
६०७ ,, कादिविद्यायै नमः
६०८ ,, कादिमात्रे नमः
६०९ ,, कादिस्थायै नमः
६१० ,, कादिसुन्दर्य्यै नमः
६११ ,, काश्यै नमः
६१२ ,, काञ्च्यै नमः
६१३ ,, काञ्चीशायै नमः
६१४ ,, काशीशवरदायिन्यै नमः
६१५ ,, क्रींबीजायै नमः
६१६ ,, क्रींबीजहृदयायै नमः
स्मृतायै नमः
६१७ ,, काम्यायै नमः
६१८ ,, काम्यगत्यै नमः
६१९ ,, काम्यसिद्धिदात्र्यै नमः
६२० ,, कामभुवे नमः
६२१ ,, कामाख्यायै नमः
६२२ ,, कालरूपायै नमः
६२३ ,, कामचापविमोचिन्यै नमः
६२४ ,, कामदेवकलारामायै नमः
६२५ ,, कामदेवकलालयायै नमः
६२६ ,, कामरात्र्यै नमः
६२७ ,, कामदात्र्यै नमः
६२८ ,, कान्ताराचलवासिन्यै नमः
६२९ ,, कालरूपायै नमः

६३० ॐ कालगत्यै नमः
६३१ ,, कामयोगपरायणायै नमः
६३२ ,, कामसम्मर्दनरतायै नमः
६३३ ,, कामगेहविकाशिन्यै नमः
६३४ ,, कालभैरवभार्यायै नमः
६३५ ,, कालभैरवकामिन्यै नमः
६३६ ,, कालभैरवयोगस्थायै नमः
६३७ ,, कालभैरवभोगदायै नमः
६३८ ,, कामधेन्वै नमः
६३९ ,, कामदोग्ध्र्यै नमः
६४० ,, काममात्रे नमः
६४१ ,, कान्तिदायै नमः
६४२ ,, कामुकायै नमः
६४३ ,, कामुकाराध्यै नमः
६४४ ,, कामुकानन्दवर्द्धिन्यै नमः
६४५ ,, कार्त्तवीर्यायै नमः
६४६ ,, कार्तिकेयायै नमः
६४७ ,, कार्त्तिकेयप्रपूजितायै नमः
६४८ ,, कार्यायै नमः
६४९ ,, कारणदायै नमः
६५० ,, कार्यकारिण्यै नमः
६५१ ,, कारणान्तरायै नमः
६५२ ,, कान्तिगम्यायै नमः
६५३ ,, कान्तिमय्यै नमः
६५४ ,, कात्यायै नमः
६५५ ,, कात्यायन्यै नमः
६५६ ,, कायै नमः
६५७ ,, कामसारायै नमः

६५८ ॐ काश्मीरायै नमः
६५९ ,, काश्मीराचारतत्परायै नमः
६६० ,, कामरूपाचाररतायै नमः
६६१ ,, कामरूपप्रियंवदायै नमः
६६२ ,, कामरूपाचारसिद्धयै नमः
६६३ ,, कामरूपमनोमय्यै नमः
६६४ ,, कार्त्तिक्यै नमः
६६५ ,, कार्त्तिकाराध्यायै नमः
६६६ ,, काञ्चनारप्रसूनभुवे नमः
६६७ ,, काञ्चनारप्रसूनाभायै नमः
६६८ ,, काञ्चनारप्रपूजितायै नमः
६६९ ,, काञ्चरूपायै नमः
६७० ,, काञ्चभूम्यै नमः
६७१ ,, कांस्यपात्रप्रभोजिन्यै नमः
६७२ ,, कांस्यध्वनिमय्यै नमः
६७३ ,, कामसुन्दर्यै नमः
६७४ ,, कामचुम्बनायै नमः
६७५ ,, काशपुष्पप्रतीकाशायै नमः
६७६ ,, कामद्रुमसमागमायै नमः
६७७ ,, कामपुष्पायै नमः
६७८ ,, कामभूम्यै नमः
६७९ ,, कामपूज्यायै नमः
६८० ,, कामज्ञायै नमः
६८१ ,, कामदेहायै नमः
६८२ ,, कामगेहायै नमः
६८३ ,, कामबीजपरायणायै नमः
६८४ ,, कामध्वजसमारूढायै नमः
६८५ ,, कामध्वजसमास्थितायै नमः
६८६ ॐ काश्यप्यै नमः
६८७ ,, काश्यपाराध्यायै नमः
६८८ ,, काश्यपानन्ददायिन्यै नमः
६८९ ,, कालिन्दीजलसंकाशायै नमः
३९० ,, कालिन्दीजलपूजितायै नमः
६९१ ,, कादेवपूजानिरतायै नमः
६९२ ,, कादेवपरमार्थदायै नमः
६९३ ,, कार्मणायै नमः
६९४ ,, कार्मणाकारायै नमः
६९५ ,, कामकार्मणकारिण्यै नमः
६९६ ,, कार्मणत्रोटनकर्य्यै नमः
६९७ ,, काकिन्यै नमः
६९८ ,, कारणाह्वयायै नमः
६९९ ,, काव्यामृतायै नमः
७०० ,, कालिङ्गायै नमः
७०१ ,, कालिङ्गमर्दनोद्यतायै नमः
७०२ ,, कालागुरुविभूषाढ्यायै नमः
७०३ ,, कालागुरुविभूतिदायै नयः
७०४ ,, कालागुरुसुगन्धायै नमः
७०५ ,, कालागुरुप्रतर्पणायै नमः
७०६ ,, कावेरीनीरसम्प्रीतायै नमः
७०७ ,, कावेरीतीरवासिन्यै नमः
७०८ ,, कालचक्रभ्रमाकारायै नमः
७०९ ,, कालचक्रनिवासिन्यै नमः
७१० ,, काननायै नमः
७११ ,, काननाधारायै नमः

७१२ ॐ काव्यै नमः
७१३ ,, कारुणिकामय्यै नमः
७१४ ,, काम्पिल्यवासिन्यै नमः
७१५ ,, काष्ठायै नमः
७१६ ,, कामपत्न्यै नमः
७१७ ,, कामभुवे नमः
७१८ ,, कादम्बरीपानरतायै नमः
७१९ ,, कादम्बर्यै नमः
७२० ,, कलायै नमः
७२१ ,, कामवन्द्यायै नमः
७२२ ,, कामेश्यै नमः
७२३ ,, कामराजप्रपूजितायै नमः
७२४ ,, कामराजेश्वरीविद्यायै नमः
७२५ ,, कामकौतुकसुन्दर्यै नमः
७२६ ,, काम्बोजायै नमः
७२७ ,, काञ्चिनदायै नमः
७२८ ,, कांस्यकाञ्चनकारिण्यै नमः
७२९ ,, काञ्चनाद्रिसमाकारायै नमः
७३० ,, काञ्चनाद्रिप्रदायै नमः
७३१ ,, कामकीर्त्यै नमः
७३२ ,, कामकेश्यै नमः
७३३ ,, कारिकायै नमः
७३४ ,, कान्ताराश्रयायै नमः
७३५ ,, कामभेद्यै नमः
७३६ ,, कामार्तिनाशिन्यै नमः
७३७ ॐ कामभूमिकायै नमः
७३८ ,, कालनिर्णाशिन्यै नमः
७३९ ,, काव्यवनितायै नमः
७४० ,, कामरूपिण्यै नमः
७४१ ,, कायस्थाकामसन्दीप्त्यै नमः
७४२ ,, काव्यदायै नमः
७४३ ,, कालसुन्दर्यै नमः
७४४ ,, कामेश्यै नमः
७४५ ,, कारणवरायै नमः
७४६ ,, कामेशीपूजनोद्यतायै नमः
७४७ ,, काञ्चीनूपुरभूषाढ्यायै नमः
७४८ ,, कुङ्कुमाभरणान्वितायै नमः
७४९ ,, कालचक्रायै नमः
७५० ,, कालगत्यै नमः
७५१ ,, कालचक्रमनोभवायै नमः
७५२ ,, कुन्दमध्यायै नमः
७५३ ,, कुन्दपुष्पायै नमः
७५४ ,, कुन्दपुष्पप्रियायै नमः
७५५ ,, कुजायै नमः
७५६ ,, कुजमात्रे नमः
७५७ ,, कुजाराध्यायै नमः
७५८ ,, कुठारवरधारिण्यै नमः
७५९ ,, कुञ्जरस्थायै नमः
७६० ,, कुशरतायै नमः
७६१ ,, कुशेशयविलोचनायै नमः

७६२ ॐ कुनठ्यै नमः
७६३ ,, कुरय्यैं नमः
७६४ ,, क्रुद्धायै नमः
७६५ ,, कुरङ्ग्यै नमः
७६६ ,, कुटजाश्रयायै नमः
७६७ ,, कुम्भीनसविभूषायै नमः
७६८ ,, कुम्भीनसवधोद्यतायै नमः
७६९ ,, कुम्भकर्णमनोल्लासायै नमः
७७० ,, कुलचूडामण्यै नमः
७७१ ,, कुलायै नमः
७७२ ,, कुलालगृहकन्यायै नमः
७७३ ,, कुलचूडामणिप्रियायै नमः
७७४ ,, कुलपूज्यायै नमः
७७५ ,, कुलाराध्यायै नमः
७७६ ,, कुलपूजापरायणायै नमः
७७७ ,, कुलभूषायै नमः
७७८ ,, कुक्ष्यै नमः
७७९ ,, कुररीगणसेवितायै नमः
७८० ,, कुलपुष्पायै नमः
७८१ ,, कुलरतायै नमः
७८२ ,, कुलपुष्पपरायणायै नमः
७८३ ,, कुलवस्त्रायै नमः
७८४ ,, कुलाराध्यायै नमः
७८५ ,, कुलकुण्डसमप्रभायै नमः
७८६ ,, कुलकुण्डसमोल्लासायै नमः
७८७ ,, कुण्डपुष्पपरायणायै नमः
७८८ ,, कुण्डपुष्पप्रसन्नास्यायै नमः
७८९ ,, कुण्डगोलोद्भवात्मिकायै नमः

७९० ॐ कुण्डगोलोद्भवाधारायै नमः
७९१ ,, कुण्डगोलमय्यै नमः
७९२ ,, कुह्वै नमः
७९३ ,, कुण्डगोलप्रियप्राणायै नमः
७९४ ,, कुण्डगोलप्रपूजितायै नमः
७९५ ,, कुण्डगोलमनोल्लासायै नमः
७९६ ,, कुण्डगोलबलप्रदायै नमः
७९७ ,, कुण्डदेवरतायै नमः
७९८ ,, क्रुद्धायै नमः
७९९ ,, कुलसिद्धिकरीपरायै नमः
८०० ,, कुलकुण्डसमाकारायै नमः
८०१ ,, कुलकुण्डसमानभुवे नमः
८०२ ,, कुण्डसिद्ध्यै नमः
८०३ ,, कुण्डऋद्ध्यै नमः
८०४ ,, कुमारीपूजनोद्यतायै नमः
८०५ ,, कुमारीपूजकप्राणायै नमः
८०६ ,, कुमारीपूजकालयायै नमः
८०७ ,, कुमार्य्यै नमः
८०८ ,, कामसन्तुष्टायै नमः
८०९ ,, कुमारीपूजनोत्सुकायै नमः
८१० ,, कुमारीव्रतसन्तुष्टायै नमः
८११ ,, कुमारीरूपधारिण्यै नमः
८१२ ,, कुमारीभोजनप्रीतायै नमः
८१३ ,, कुमार्यै नमः
८१४ ,, कुमारदायै नमः
८१५ ,, कुमारमात्रे नमः
८१६ ,, कुलदायै नमः
८१७ ,, कुलयोन्यै नमः

८१८ ॐ कुलेश्वर्यै नमः
८१९ ,, कुललिङ्गायै नमः
८२० ,, कुलानन्दायै नमः
८२१ ,, कुलरम्यायै नमः
८२२ ,, कुतर्कधृषे नमः
८२३ ,, कुन्त्यै नमः
८२४ ,, कुलकान्तायै नमः
८२५ ,, कुलमार्गपरायणायै नमः
८२६ ,, कुल्लायै नमः
८२७ ,, कुरुकुल्ल्यायै नमः
८२८ ,, कुल्लाकायै नमः
८२९ ,, कुलकामदायै नमः
८३० ,, कुलिशाङ्ग्यै नमः
८३१ ,, कुब्जिरिकायै नमः
८३२ ,, कुब्जिकानन्दवर्द्धिन्यै नमः
८३३ ,, कुलीनायै नमः
८३४ ,, कुञ्जरगत्यै नमः
८३५ ,, कुञ्जरेश्वरगामिन्यै नमः
८३६ ,, कुलपाल्यै नमः
८३७ ,, कुलवत्यै नमः
८३८ ,, कुलदीपिकायै नमः
८३९ ,, कुलयोगेश्वर्यै नमः
८४० ,, कुण्डायै नमः
८४१ ,, कुङ्कुमारुणविग्रहायै नमः
८४२ ,, कुङ्कुमानंदसन्तोषायै नमः
८४३ ,, कुङ्कुमार्णववासिन्यै नमः
८४४ ,, कुसुमायै नमः
८४५ ,, कुसुमप्रीतायै नमः
८४६ ॐ कुलभुवे नमः
८४७ ,, कुलसुन्दर्यै नमः
८४८ ,, कुमुद्वत्यै नमः
८४९ ,, कुमुदिन्यै नमः
८५० ,, कुशलायै नमः
८५१ ,, कुलटालयायै नमः
८५२ ,, कुलटालयमध्यस्थायै नमः
८५३ ,, कुलटासङ्गतोषितायै नमः
८५४ ,, कुलटाभुवनोद्युक्तायै नमः
८५५ ,, कुशावर्त्तायै नमः
८५६ ,, कुलार्णवायै नमः
८५७ ,, कुलार्णवाचाररतायै नमः
८५८ ,, कुण्डल्यै नमः
८५९ ,, कुण्डलकृत्यै नमः
८६० ,, कुमत्यै नमः
८६१ ,, कुलश्रेष्ठायै नमः
८६२ ,, कुलचक्रपरायणायै नमः
८६३ ,, कूटस्थायै नमः
८६४ ,, कूटदृष्टयै नमः
८६५ ,, कुन्तलायै नमः
८६६ ,, कुन्तलाकृत्यै नमः
८६७ ,, कुशलाकृतिरूपायै नमः
८६८ ,, कूर्चबीजधरायै नमः
८६९ ,, क्वै नमः
८७० ,, कुंकुंकुंकुंशब्दरतायै नमः
८७१ ,, क्रुंक्रुंक्रुंक्रुंपरायणायै नमः
८७२ ,, कुंकुंकुंशब्दनिलयायै नमः
८७३ ,, कुक्कुरालयवासिन्यै नमः

८७४ ॐ कुक्कुरासङ्गसंयुक्तायै नमः
८७५ ,, कुक्कुरानन्तविग्रहायै नमः
८७६ ,, कूर्चारम्भायै नमः
८७७ ,, कूर्चबीजायै नमः
८७८ ,, कूर्चजापपरायणायै नमः
८७९ ,, कुलिन्यै नमः
८८० ,, कुलस्थानायै नमः
८८१ ,, कूर्चकण्ठपरागत्यै नमः
८८२ ,, कूर्चवीणाभालदेशायै नमः
८८३ ,, कूर्चमस्तकभूषितायै नमः
८८४ ,, कुलवृक्षगतायै नमः
८८५ ,, कूर्मायै नमः
८८६ ,, कूर्माचलनिवासिन्यै नमः
८८७ ,, कुलविन्द्वै नमः
८८८ ,, कुलशिवायै नमः
८८९ ,, कुलशक्तिपरायणायै नमः
८९० ,, कुलबिन्दुमणिप्रख्यायै नमः
८९१ ,, कुङ्कुमद्रुमवासिन्यै नमः
८९२ ,, कुचमर्दनसन्तुष्टायै नमः
८९३ ,, कुचजापपरायणायै नमः
८९४ ,, कुचस्पर्शनसन्तुष्टायै नमः
८९५ ,, कुचालिङ्गनहर्षदायै नमः
८९६ ,, कुगतिघ्न्यै नमः
८९७ ,, कुबेरार्चायै नमः
८९८ ,, कुचभुवे नमः
८९९ ,, कुलनायिकायै नमः
९०० ,, कुगायनायै नमः
९०१ ,, कुचधरायै नमः
९०२ ॐ कुमात्रे नमः
९०३ ,, कुन्ददन्त्यै नमः
९०४ ,, कुगेयायै नमः
९०५ ,, कुहराभाषायै नमः
९०६ ,, कुगेयाकुघ्नदारिकायै नमः
९०७ ,, कीर्त्यै नमः
९०८ ,, किरातिन्यै नमः
९०९ ,, क्लिन्नायै नमः
९१० ,, किन्नरायै नमः
९११ ,, किन्नर्यै नमः
९१२ ,, क्रियायै नमः
९१३ ,, क्रौङ्कारायै नमः
९१४ ,, क्रौंजपासक्तायै नमः
९१५ ,, क्रींहूंस्त्रींमन्त्ररूपिण्यै नमः
९१६ ,, किर्मीरितदृशापाङ्ग्यै नमः
९१७ ,, किशोर्यै नमः
९१८ ,, किरीटिन्यै नमः
९१९ ,, कीटभाषायै नमः
९२० ,, कीटयोन्यै नमः
९२१ ,, कीटमात्रे नमः
९२२ ,, कीटदायै नमः
९२३ ,, किंशुकायै नमः
९२४ ,, कीरभाषायै नमः
९२५ ,, क्रियासारायै नमः
९२६ ,, क्रियावत्यै नमः
९२७ ,, कींकींशब्दपरायै नमः
९२८ ,, क्लींक्लींक्लूंक्लैंक्लौंमन्त्र-रूपिण्यै नमः

९२९ ॐ कांकींकूंकैंस्वरूपायै नमः
९३० ॐ कःफट्मन्त्रस्वरूपिन्यै नमः
९३१ ॐ केतकीभूषणानन्दायै नमः
९३२ ॐ केतकीभरणान्वितायै नमः
९३३ ॐ कंकदायै नमः
९३४ ॐ केशिन्यै नमः
९३५ ॐ केशीसूदनतत्परायै नमः
९३६ ॐ केशरूपायै नमः
९३७ ॐ केशमुक्तायै नमः
९३८ ॐ कैकेय्यै नमः
९३९ ॐ कौशिक्यै नमः
९४० ॐ करवायै नमः
९४१ ॐ करवाह्लादायै नमः
९४२ ॐ केशरायै नमः
९४३ ॐ केतुरूपिण्यै नमः
९४४ ॐ केशवाराध्यहृदयायै नमः
९४५ ॐ केशवासक्तमानसायै नमः
९४६ ॐ क्लैव्यविनाशिन्यै नमः
९४७ ॐ क्लैं च क्लैंबीजजप-
तोषितायै नमः
९४८ ॐ कौशल्यायै नमः
९४९ ॐ कोशलाक्ष्यै नमः
९५० ॐ कोशायै नमः
९५१ ॐ कोमलायै नमः
९५२ ॐ कोलापुरनिवासायै नमः
९५३ ॐ कोलासुरविनाशिन्यै नमः
९५४ ॐ कोटिरूपायै नमः
९५५ ॐ कोटिरतायै नमः
९५६ ॐ क्रोधिन्यै नमः
९५७ ॐ क्रोधरूपिण्यै नमः
९५८ ॐ केकायै नमः
९५९ ॐ कोकिलायै नमः
९६० ॐ कोटयै नमः
९६१ ॐ कोटिमंत्रपरायणायै नमः
९६२ ॐ कोटयनन्तमंत्रयुतायै नमः
९६३ ॐ कैरूपायै नमः
९६४ ॐ केरलाश्रयायै नमः
९६५ ॐ केरलाचारनिपुणायै नमः
९६६ ॐ केरलेन्द्रगृहस्थितायै नमः
९६७ ॐ केदाराश्रमसंस्थायै नमः
९६८ ॐ केदारेश्वरपूजितायै नमः
९६९ ॐ क्रोधरूपायै नमः
९७० ॐ क्रोधपदायै नमः
९७१ ॐ क्रोधमात्रे नमः
९७२ ॐ कौशिक्यै नमः
९७३ ॐ कोदण्डधारिण्यै नमः
९७४ ॐ क्रौञ्चायै नमः
९७५ ॐ कौशल्यायै नमः
९७६ ॐ कौलमार्गगायै नमः
९७७ ॐ कौलिन्यै नमः
९७८ ॐ कौलिकाराध्यायै नमः
९७९ ॐ कौलिकागारवासिन्यै नमः
९८० ॐ कौतुक्यै नमः
९८१ ॐ कौमुद्यै नमः
९८२ ॐ कौलायै नमः
९८३ ॐ कौमार्यै नमः

९८४ ॐ कौरवार्चितायै नमः
९८५ ॐ कौण्डिन्यायै नमः
९८६ ॐ कौशिक्यै नमः
९८७ ॐ क्रोधज्वालाभासुररूपिण्यै नमः
९८८ ॐ कोटिकालानलज्वालायै नमः
९८९ ॐ कोटिमार्तण्डविग्रहायैनमः
९९० ॐ कृत्तिकायै नमः
९९१ ॐ कृष्णवर्णायै नमः
९९२ ॐ कृष्णायै नमः
९९३ ॐ कृत्यायै नमः
९९४ ॐ क्रियातुरायै नमः
९९५ ॐ कृशाङ्ग्यै नमः
९९६ ॐ कृतकृत्यायै नमः
९९७ ॐ क्रःफट्स्वाहास्वरूपिण्यै नमः
९९८ ॐ क्रौंक्रौंहूंफट्मन्त्रवर्णायै नमः
९९९ ॐ क्रींह्रींह्रूंफट्नमःस्वधायै नमः
१००० ॐक्रक्रींक्रीं-ह्रींह्रीं तथा ह्रूं ह्रूं फट्स्वाहामन्त्ररूपिण्यै नमः

इति काली-रहस्ये सर्वसाम्राज्यमेधा-चतुर्थन्त-
कालीसहस्रनामावली समाप्ता ।

काली-स्तवः

नमामि कृष्णरूपिणीं कृशाङ्गयष्टिधारिणीम् ।
समग्रतत्त्व-सागरामपारपार-गह्वराम् ॥ १ ॥
शिवां प्रभासमुज्ज्वलां स्फुरच्छशाङ्कशेखराम् ।
ललाटरत्नभास्वरां जगत्प्रदीप्ति-भास्कराम् ॥ २ ॥
महेन्द्रकश्यपार्चितां सनत्कुमार-संस्तुताम् ।
सुराऽसुरेन्द्र-वन्दितां यदार्थनिर्मलाद्भुताम् ॥ ३ ॥
अतर्क्यरोचिरूर्जितां विकारदोषवर्जिताम् ।
मुमुक्षुभिर्विचिन्तितां विकारदोषवर्जिताम् ॥ ४ ॥

जिनका रूप काला और शरीर कृश है, जो समस्त तत्त्वों की सागर हैं एवं जिनका पार पाना असम्भव तथा गहन है ऐसी काली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

भक्तों का कल्याण करने वाली, प्रकाश से उज्ज्वल, जिन महाकाली के ललाट में चन्द्रमा स्फुरित हो रहा है, ललाट में स्थित रत्नों की ज्योति से जो जगमगा रही हैं एवं अपने दिव्य-प्रकाश से सूर्य के समान शोभित हो रही हैं, ऐसी भगवती काली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

महेन्द्र एवं कश्यप से अर्चित, सनत्कुमार से संस्तुत, देवताओं और राक्षसों से वन्दित, सत्य, स्वच्छ तथा अद्भुत रूप वाली काली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

मन, कर्म, वाणी से अतर्क्य तेज वाली, अत्यन्त पराक्रमशील, (कामादि) विकार एवं (रागादि) दोषरहित, मुमुक्षुओं से ध्यान की जाने वाली तथा विशेषतत्त्व से जानने योग्य भगवती श्री काली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ४ ॥

मृतास्थिनिर्मितस्रजां मृगेन्द्रवाहनाग्रजाम् ।
सुशुद्धतत्त्वतोषणां त्रिवेदसारभूषणाम् ॥ ५ ॥
भुजङ्गहारहारिणीं कपालषण्डधारिणीम् ।
सुधार्मिकोपकारिणीं सुरेन्द्रवैरिघातिनीम् ॥ ६ ॥
कुठारपाशचापिनीं कृतान्तकाममेदिनीम् ।
शुभां कपालमालिनीं सुवर्णकल्पशाखिनीम् ॥ ७ ॥
श्मशानभूमिवासिनीं द्विजेन्द्रमौलिभाविनीम् ।
तमोऽन्धकारयामिनीं शिवस्वभावकामिनीम् ॥ ८ ॥

मुर्दे के अस्थि की माला धारण करने वाली, सिंह पर सवारी करने वाली. सर्वप्रथम उत्पन्न होने वाली, परब्रह्म को सन्तुष्ट करने वाली एवं तीनों वेदों के साररूपी भूषण को धारण की हुई भगवती श्री महाकाली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ५ ॥

सर्पों की माला एवं कपाल-समूहों को धारण करने वाली, परम धार्मिकोपकारिणी एवं इन्द्र के शत्रुओं का विनाश करने वाली महाकाली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ६ ॥

कुठार, पाश एवं धनुष धारण करने वाली, काल के मनोरथ को व्यर्थ करने वाली, सबका कल्याण करने वाली, कपालमाला धारण करने वाली तथा सुवर्ण प्रदान करने हेतु कल्पवृक्षस्वरूपा महाकाली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ७ ॥

श्मशान भूमि में निवास करने वाली, चन्द्रमा को मस्तक में धारण करने वाली, तम-मोह रूप पञ्चपर्वा अविद्या की रात्रि स्वरूपा, जो महाकाली स्वभाव से शिव की कामना करने वाली हैं, उन महाकाली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ८ ॥

सहस्रसूर्यराजिकां धनञ्जयोपकारिकाम् ।
सुशुद्धकालकन्दलां सुभृङ्गवृन्दमञ्जुलाम् ॥ ९ ॥
प्रजायिनीं प्रजावतीं नमामि मातरं सतीम् ।
स्वकर्मकारणे गतिं हरप्रियां च पार्वतीम् ॥१०॥
अनन्तशक्ति-कान्तिदां यशोऽर्थभुक्तिमुक्तिदाम् ।
पुनः पुनर्जगद्धितां नमाम्यहं सुरार्चिताम् ॥११॥
जयेश्वरि ! त्रिलोचने ! प्रसीद देवि ! पाहि माम् ।
जयन्ति ते स्तुवन्ति ये शुभं लभन्त्यभीक्ष्णशः ॥१२॥

सहस्रों सूर्य के समान शोभित होने वाली, रण में अर्जुन को विजय प्रदान कर उनका उपकार करने वाली, विशुद्ध कालतत्त्व की अंकुर स्वरूपा, भृङ्गमाला के समान अत्यन्त मनोहर स्वरूपा महाकाली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ९ ॥

संसार को उत्पन्न करने वाली, संसार रूपी सन्तान वाली, मनुष्यों को स्व-कर्मानुसार फल प्रदात्री, शिव-प्रिया सती पार्वती को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ १० ॥

अनन्तशक्ति, अनन्त कान्ति, यश, अर्थ, भोग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली, बारम्बार जगत् का कल्याण करने वाली तथा देवगणों से सदा अर्चित भगवती श्री महाकाली को मैं नमस्कार करता हूँ ॥११॥

हे ईश्वरि ! तुम्हारी जय हो, हे त्रिलोचने ! मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाओ और मेरी रक्षा करो। हे मातः ! जो तुम्हारी स्तुति करते हैं, वे सर्वदा विजय प्राप्त करते हैं एवं निरन्तर कल्याण के भागी होते हैं ॥ १२ ॥

सदैव ते हतद्विषः परं भवन्ति सज्जुषः ।
ज्वरापहे शिवेऽधुना प्रशाधि मां करोमि किम् ॥१३॥
अतीव मोहितात्मनो वृथा विचेष्टितस्य मे ।
तथा भवन्तु तावका यथैव चोषितालकाः ॥१४॥
इमां स्तुतिं मयेरितां पठन्ति कालिसाधकाः ।
न ते पुनः सुदुस्तरे पतन्ति मोहगह्वरे ॥१५॥

इति काली-रहस्ये श्रीब्रह्मकृतः कालीस्तवः समाप्तः ।

उनके शत्रुगण विनष्ट हो जाते हैं तथा श्रेष्ठ जनों से वे सदैव सेवित होते हैं । हे तीनों तापों को हरण करने वाली भगवती ! मुझे आज्ञा प्रदान करो, मैं क्या करूँ ? ॥ १३ ॥

हे मातः ! मेरी आत्मा अत्यधिक मोह में पड़ी हुई है, मेरी सारी चेष्टाएं व्यर्थ हो रही हैं । अब तुम मेरे ऊपर प्रसन्न होओ, जिससे मैं मुक्ति का पात्र बन जाऊँ ॥ १४ ॥

फलश्रुति—श्री ब्रह्मदेव कहते हैं कि, मेरे द्वारा निर्मित इस स्तुति को जो काली-साधक पढ़ते हैं । वे अत्यन्त दुस्तर मोहगर्त्त में नहीं पड़ते ॥ १५ ॥

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्यासहित काली-रहस्य में
श्री ब्रह्मदेवकृत कालीस्तव समाप्त ।

कालिकाष्टकम्

ध्यानम्

गलद् - रक्तमुण्डावली - कण्ठमाला
महाघोररावा सुदंष्ट्रा कराला ।
विवस्त्रा श्मशानालया मुक्तकेशी
महाकाल-कामाकुला-कालिकेयम् ॥ १ ॥
भुजे वामयुग्मे शिरोऽसी दधाना
वरं दक्षयुग्मेऽभयं वै तथैव ।
सुमध्याऽपि तुङ्गस्तनाभारनम्रा
लसद्रक्तसृक्कद्वया सुस्मितास्या ॥ २ ॥

जिनके कण्ठ में रहने वाली मुण्डमाला से निरन्तर रक्तस्राव हो रहा है, जो महाघोर शब्द करने वाली और बड़े-बड़े दाँतों से अत्यन्त भीषण हैं, नङ्गी, श्मशान में निवास करने वाली, बिखरे बालों वाली एवं महाकाल से रति के लिए सर्वदा व्यग्र रहती हैं, वही कालिका के नाम से विख्यात हैं ॥ १ ॥

जो अपनी बायीं ओर की दो भुजाओं में मुण्ड एवं खड्ग और दाहिनी भुजाओं में वर एवं अभय मुद्रा धारण की हैं, जिनका कटितट अत्यन्त मनोहर एवं समुन्नत स्तनों के भार से कुछ आगे की ओर झुका हुआ है, जिनके मुख के दोनों प्रान्त में रक्त सुशोभित हो रहा है, जो मन्द-मन्द हास कर रही हैं यह वही महाकालिका हैं ॥ २ ॥

शवद्वन्द्वकर्णावतंसा सुकेशी
लसत्प्रेतपाणि-प्रयुक्तैक-काञ्ची ।
शवाकार-मञ्चाधिरूढा शिवाभि-
श्चतुर्दिक्षु शब्दायमानाऽभिरेजे ॥ ३ ॥

विरञ्च्यादिदेवास्त्रयस्ते गुणांस्त्रीन्
समाराध्य कालि ! प्रधाना बभूवुः ।
अनादि सुरादि मखादि भवादि
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ४ ॥

जगन्मोहनीयं तु वाग्वादिनीयं
सुहृत्पोषिणीं शत्रुसंहारणीयम् ।
वचः स्तम्भनीयं किमुच्चाटनीयं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ५ ॥

जिनके दोनों कानों में दो मुर्दों के कर्णफूल लटक रहे हैं, केश अत्यन्त मनोहर हैं, जो मुर्दों के हाथों की काञ्ची (करधनी) वाली एवं शवाकार मञ्च पर बैठी हुई हैं और चारों ओर शृगालिनों के फेत्कार से सुशोभित हो रही हैं, यह वही विश्व-विख्यात महाकालिका हैं ॥३॥

हे मातः ! ब्रह्मा, शिव एवं विष्णु ये तीन देव तुम्हारे प्रत्येक तीन गुणों में से एक-एक की उपासना (सत्त्व के विष्णु, रज के ब्रह्मदेव तथा तम के शिव) से महान् हो गये हैं । हे मातः ! तुम्हारे अनादि, सुरादि, मखादि तथा सृष्टि के आदि स्वरूप को देवता भी प्राप्त करने में असमर्थ हैं ॥ ४ ॥

हे मातः ! तुम जगत् को मोहित करने वाली महाकाली हो अथवा सरस्वती हो ? क्या तुम भक्तों का पालन करने वाली हो या शत्रुओं का संहार करने वाली हो ? अथवा वाणी को स्तम्भित करने वाली या पुरुषों का उच्चाटन करने वाली, इनमें तुम कौन हो ? क्योंकि, तुम्हारे स्वरूप को देवता भी प्राप्त करने में असमर्थ हैं ॥५॥

इयं स्वर्गदात्री पुनः कल्पवल्ली
मनोजांस्तु कामान् यथार्थं प्रकुर्यात् ।
कथा ते कृतार्था भवन्तीति नित्यं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ६ ॥

सुरापानमत्ते ! सुभक्तानुरक्ते !
लसत्पूतचित्ते ! सदाविर्भवस्ते ।
जप- ध्यान-पूजा - सुधाधौतपङ्काः
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ७ ॥

चिदानन्दकन्दं हसन्मन्दमन्दं
शरच्चन्द्रकोटि-प्रभापुञ्ज-बिम्बम् ।

हे मातः ! यह तुम्हारी कथा (स्तुति) स्वर्ग देने वाली एवं कल्प-वृक्ष की लता है, अतः यह उपासक-भक्तों के समस्त कामनाओं को पूर्ण करे। वे उपासक तुम्हारी स्तुति से जगत् में सदैव कृतार्थ रहते हैं। क्योंकि तुम्हारे स्वरूप को प्राप्त करने में देवगण भी असमर्थ हैं ॥६॥

हे सुरापान में प्रमत्त रहने वाली, भक्तों पर अनुकम्पा करने वाली मातः ! पवित्र चित्त में तुम्हारा आविर्भाव होता रहता है। क्योंकि जप, ध्यान और पूजारूपी सुधा से चित्त की मलीनता को दूर करने वाले देवगण भी तुम्हारे स्वरूप को प्राप्त करने में असमर्थ हैं ॥ ७ ॥

हे मातः ! चिदानन्द का कन्द, मन्द-मन्द हास्युक्त करोड़ों शरत्कालीन चन्द्रमा के चन्द्रिका-समूह का बिम्ब तथा

मुनीनां कवीनां हृदि द्योतमानं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ८ ॥

महामेघकाली सुरक्ताऽपि शुभ्रा
कदाचिद् विचित्राकृतिर्योगमाया ।
न बाला न वृद्धा न कामातुराऽपि
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ९ ॥

क्षमस्वापराधं महागुप्तभावं
मया लोकमध्ये प्रकाशीकृतं यत् ।
तव ध्यानपूतेन चापल्यभावात्
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥१०॥

मुनियों एवं कवियों के हृदय में प्रकाशित होने वाले तुम्हारे स्वरूप को देवता भी नहीं जानते ॥ ८ ॥

हे मातः ! कभी तुम महामेघ के समान महाकाली, कभी सुन्दर रक्त वर्ण वाली महालक्ष्मी और कभी शुभ्रस्वरूपा सरस्वती एवं कदाचित् विचित्र आकृतियुक्त योगमाया बन जाती हो । वस्तुतः न तो तुम बाला हो, न वृद्धा हो, न कामातुरा (युवती) ही हो, तुम्हारे यथार्थ रूप को देवता भी नहीं प्राप्त कर सकते ॥ ९ ॥

हे मातः ! मैंने तुम्हारे ध्यान में निमग्न होकर चपलतावश इस संसार में तुम्हारे जिस गुप्त स्वरूप को प्रकट किया है, मेरे उस अपराध को क्षमा करो । क्योंकि तुम्हारे स्वरूप को प्राप्त करने में देवता भी असमर्थ हैं ॥ १० ॥

फलश्रुतिः

यदि ध्यानयुक्तः पठेद् यो मनुष्य-
स्तदा सर्वलोके विशालो भवेच्च ।
गृहे चाऽष्टसिद्धिर्मृते चापि मुक्तिः
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥११॥

इति काली-रहस्ये श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं
कालिकाष्टकं सम्पूर्णम् ।

फलश्रुति—**मनुष्य यदि महाकाली का ध्यान कर इस स्तोत्र का पाठ करे, तो वह सारे लोक में महान् हो जाता है। तथा उसके घर में आठों सिद्धियाँ निवास करती हैं एवं मरने पर उसकी मुक्ति हो जाती है, ऐसे तो तुम्हारे स्वरूप को देवगण भी नहीं जानते ॥ ११ ॥**

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्यासहित काली-रहस्य में
श्रीमच्छङ्कराचार्य-विरचित कालिकाष्टक सम्पूर्ण ।

श्रीदक्षिणकाली-सपर्य्यापद्धतिः

प्रथमं पञ्चवर्णरजश्चित्रं शुद्धं स्थानं गत्वा, पूजावेद्या बहिः स्थित्वा, गुरुं प्रणम्य, इष्टदेवतां प्रणम्य, दिक्पालांश्च प्रणम्य, आचम्य, ततः कुशहस्तो मौनो पापशमनार्थं श्लोकद्वयं पठेत् । तद्यथा—

'ॐ देवि ! त्वत्प्रकृतं चित्तं पापाक्रान्तमभून्मम ।
तन्निस्सरन्तु चित्तान्मे पापं हूं फट् च ते नमः ॥ १ ॥
सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च ।
एते शुभाऽशुभस्येह कर्मणो नव - साक्षिणः ॥ २ ॥

श्री दक्षिणकाली की पूजा-पद्धति का विधान—

साधक सर्वप्रथम पाँच वर्ण के रंग से रंगे हुए अत्यन्त शुद्ध स्थान में बैठकर पूजा-वेदी के बाहर अपने गुरु, इष्टदेवता तथा दिक्पालों को प्रणाम कर पवित्री धारण करे। और आचमन एवं प्राणायाम करने के उपरान्त हाथ में कुशा लेकर मौन हो पाप-शान्ति के लिए 'ॐ देवि' से 'नव-साक्षिणः' पर्यन्त दो श्लोकों द्वारा महाकाली की प्रार्थना करे।

श्लोकार्थ—हे मातः ! तुम्हारे द्वारा निर्मित यह मेरा चित्त पापाक्रान्त हो गया है। वह पाप तुम्हारी कृपा से अब हमारे चित्त से दूर हो जावे 'हूँ फट्' तुम्हें नमस्कार है ॥ १ ॥

सूर्य, सोम, यम, काल एवं पञ्च महाभूत हमारे द्वारा किये गये कर्म के साक्षी हैं ॥ २ ॥

इति पठित्वा, सम्प्रार्थ्य, गृहे प्रविशेत् । मौनी मूलेनाऽऽचम्य, 'ॐ वज्रोदके हूं फट् स्वाहा' इति जलं गृहीत्वा, 'हूं स्वाहा' इति करे आदाय, ॐ ह्रीं विशुद्धसर्वपापानि शमया-शेषविकल्पमपनय हूं फट् स्वाहा' इत्यनेन पादौ प्रक्षाल्य, 'ॐ ह्रीं स्वाहा' इति पुनराचम्य, 'ऐं कालिकायै नमः, ऐं कपालिन्यै नमः, ऐं कुल्लायै नमः' इति त्रिराचम्य, ततो मूलेन हस्तौ प्रक्षाल्य, 'ॐ कालिकायै नमः, ॐ कपालिन्यै नमः' इति दशहस्ताङ्गुलीभिरोष्ठौ द्विरुन्मृज्य, 'ॐ कुल्लायै नमः' इति करं प्रक्षाल्य, मूलेन सङ्कुचिताङ्गुलीभिर्मुखम्, तर्जन्यङ्ष्ठाभ्यां नासिके, मूलेन अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां कर्णौ,

प्रार्थना के पश्चात् साधक मण्डप-गृह में प्रवेश करे। मौन होकर मूलमन्त्र से आचमन करे फिर 'ॐ वज्रोदके हूं फट् स्वाहा' यह मन्त्र पढ़ कर पूजा पात्र में जल ले, पुनः 'हूं स्वाहा' पढ़ कर उस जल को हाथ में लेवे। और 'ॐ ह्रीं' से 'फट् स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र को पढ़ अपना पैर प्रक्षालित करे। तदनन्तर 'ॐ ह्रीं स्वाहा' पढ़ कर पुनः आचमन कर, 'ऐं कालिकायै नमः' से लेकर 'ऐं कुल्लायै नमः' पर्यन्त तीन मन्त्र पढ़कर तीन बार आचमन करे। पुनः मूल मन्त्र से हाथ धो कर 'ॐ कालिकायै नमः' 'ॐ कपालिन्यै नमः' पढ़ कर अपने दोनों हाथों की दशों अंगुलियों को संकुचित कर ओष्ठ को दो बार जल से शुद्ध करे फिर 'ॐ कुल्लायै नमः' पढ़ कर हाथ का प्रक्षालन करे। तत्पश्चात् सर्वत्र मूल मन्त्र पढ़ते हुए मुखादि का स्पर्श करे। जिसकी विधि इस प्रकार है—दशों अंगुलियों को संकुचित कर मुख का, तर्जनी-अंगुष्ठा अँगुलियों से नासिका का, अनामिका-अंगुष्ठा अंगुलियों से दोनों कानों का, अंगुष्ठा-कनिष्ठा से नाभि का, दोनों

अङ्गुष्ठ-कनिष्ठाभ्यां नाभिं, तलेन हृदयं, सर्वाङ्गुलीभिर्मस्तकं भुजौ च स्पृशेत्।

ततस्तिलकं कुलचन्दनादिना ललाटोदर-हृत्कण्ठ-दक्ष-पार्श्वांऽस-पृष्ठ-ककुदि भुजद्वन्द्वे मूर्द्धनि द्वादशस्वपि स्थानेषु कुर्यात्। ततः—

'देव्यस्त्रं विलिखेद्भाले कालीबीजं ततो हृदि।
शक्तिं मध्यगतां कृत्वा कूर्चबीजं न्यसेत् सुधीः॥'

ततः सामान्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। तद्यथा—स्ववामे त्रिकोणवृत्त-भूपुरात्मकं मण्डलं विलिख्य, ततः 'ॐ आधार-शक्तिभ्यो नमः' इति पुष्पाऽक्षतादिभिरभ्यर्च्य, 'ॐ हः द्वारार्घ्यं

हाथ के तलवे से हृदय का, एवं सभी अंगुलियों से मस्तक तथा भुजाओं का स्पर्श करे।

फिर कुल (रक्त) चन्दन से ललाट, उदर, हृदय, कण्ठ, दाहिने पार्श्व, दोनों कन्धे, पृष्ठ, ककुद् (शिखा), दोनों भुजाओं एवं शिर आदि बारह स्थानों पर तिलक करे।

तदनन्तर साधक मस्तक पर त्रिशूल का चिह्न, हृदय पर काली बीज (क्रीं) तथा दोनों के बीच (कण्ठप्रदेश) में शक्ति बीज लिख कर कूर्च बीज से न्यास करे।

तथा सामान्य रूप से अर्घ्य पात्र स्थापित करे। उसकी विधि इस प्रकार है—अपने बाएँ त्रिकोण, वृत्त एवं भूपुरात्मक मण्डल बना कर 'ॐ आधारशक्तिभ्यो नमः' इस मन्त्र को पढ़ कर पुष्पाक्षतादि से उस त्रिकोण का अर्चन करे। फिर 'ॐ हः द्वारार्घ्यं साधयामि' ऐसा कह

साधयामि' इत्युक्त्वा, 'फट्' इति प्रक्षालितं शङ्खादिपात्रं त्रिपादिकोपरि निधाय, 'नमः' इति जलेनाऽऽपूर्य,

'गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥'

इति मन्त्रेणाऽङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्तीर्थं तज्जले आवाह्य, गन्धादिकं प्रणवेन निःक्षिप्य, धेनु-मत्स्यमुद्रं दर्शयित्वा, प्रणवेनाऽष्टादशकृत्वो वाऽभिमन्त्र्य, फडिति मन्त्रेण द्वारमभिषेचयेत् । 'ॐ मणिधारिणि वज्रिणि शिखरिणि सर्वलोकवशङ्करि हूँ फट् स्वाहा' इति शिखां बध्नीयात् । ततो द्वारदेवताः पूजयेत् । 'गं गणेशाय नमः, बं बटुकाय नमः, क्षं क्षेत्रेशाय नमः, यं योगिनीभ्यो नमः' इति ऊर्ध्वे, वामे, वक्षे, अध इति चतुर्दिक्षु पूजयेत् 'गं गङ्गायै नमः, यं यमुनायै

कर 'फट्' इस मन्त्र से प्रक्षालित शङ्खादि अर्घ्य पात्र को त्रिपादिका के ऊपर रख कर 'नमः' पढ़ कर शङ्खपात्र को जल से पूर्ण करे। फिर 'गङ्गे च॰' इत्यादि मन्त्र को पढ़ते हुए अंकुश मुद्रा दिखा कर सूर्य-मण्डल से उस जल में तीर्थों का आवाहन करे। और प्रणव के मन्त्र से उसमें गन्धादि छोड़ें। पुनः धेनु एवं मत्स्य मुद्रा प्रदर्शित कर अठारह बार प्रणव को पढ़ कर उस जल को अभिमन्त्रित करे। तथा 'फट्' इस मन्त्र को पढ़ कर अर्घ्य के जल से द्वार को अभिषिक्त करे। फिर 'ॐ मणिधरिणि॰' मन्त्र को पढ़ते हुए शिखाबन्धन करे। तदनन्तर द्वारदेवता का पूजन करे। फिर 'गं गणेशाय नमः' से 'यं योगिनीभ्यो नमः' पर्यन्त चार मन्त्रों को पढ़ कर मण्डप-द्वार के ऊपर, बायें, दाहिने, नीचे तथा चारों दिशाओं में पूजन

नमः' इति शाखापार्श्वयोः, 'लं लक्ष्म्यै नमः, सं सरस्वत्यै नमः' इति ऊर्ध्वे, अधश्च पूजयेत् । 'ॐ ब्रह्माण्याद्यष्टमातृभ्यो नमः' इति देहल्याम् गन्ध-पुष्पादिनाऽभ्यर्च्य, ततो दक्षिणाङ्गं सङ्कोचयन् दक्षचरणमग्रे निधाय, वामशाखामस्पृशन् मण्डलाभ्यन्तरे गत्वा, 'ॐ रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा' इति जलेनाऽभिषिच्य, 'ॐ पवित्रवज्रभूमे हूं फट् स्वाहा' इत्यभिमन्त्र्य, 'ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः' इत्यासनमभ्यर्च्य त्रिकोणं विलिख्य, 'आसुरेखे-वज्ररेखे हूं फट् स्वाहा' इति, मण्डलं विलिख्य, तत्र, 'हसौः' इति प्रेतबीजं विलिख्य, 'ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः' इत्यासनमभ्यर्च्य । 'ॐ अनन्ताय नमः, विमलासनाय नमः, पद्मासनाय

फिर 'गङ्गायै नमः' से 'सरस्वत्यै नमः' पर्यन्त पढ़ कर ऊपर तथा नीचे तत्तद्देवताओं का पूजन करे। पुनः 'ब्रह्माण्याद्यष्टमातृभ्यो नमः' पढ कर मण्डप-प्रवेश द्वार की देहली का गन्ध-पुष्पादि से अर्चन करे। फिर अपने दाहिने अंग को संकुचित करते हुए दाहिना पैर आगे रख कर मण्डप की बायीं ओर रहने वाले किसी शाखा का बिना स्पर्श किये मंडप के भीतर प्रवेश करे। 'ॐ रक्ष रक्ष०' इत्यादि मन्त्र को पढ़ कर आसन पर जल छिड़के। 'ॐ पवित्र-वज्रभूमे' आदि मन्त्र से आसन को अभिमन्त्रित कर 'ह्रीं आधार-शक्ति०' मन्त्र को पढ़ कर आसन की पूजा करे एवं त्रिकोण लिख कर 'आसुरेखे०' आदि मन्त्र पढ़कर त्रिकोण के चारों ओर मंडल बनावे। मंढल पर 'हसौं' इस प्रेत बीज को लिखकर 'ह्रीं आधारशक्ति०' आदि मन्त्र को पढ़ कर आसन स्थान की पूजा कर 'ॐ अनन्ताय नमः' से 'पद्मासनाय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर

नमः' इति कुशानास्तीर्य, व्याघ्राजिनकृष्णसारमृगाजिनं कम्बलासनं वा प्रकल्पयेत । तदभावे तु पञ्चविंशतिकुशनिर्मित-विष्टरं शवरूपं वा प्रकल्पयेत् । 'ह्लः सौं महाप्रेतपद्मासनाय नमः' इत्यभ्यचर्य, तत्रासने आत्ममन्त्रेण उपविश्य, वामोरूपरि दक्षिणपादं कृत्वा, बद्धवीरासनः वामपादोपरि दक्षिणोरुं धृत्वा, विपरीतं वा पूर्वाभिमुख उत्तराभिमुखो वा आसनं धृत्वा मन्त्रं पठेत् ।

आसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः, कूर्मोदेवता आसनपरिग्रहे विनियोगः ।

'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम् ॥' इति ।

उस आसन-स्थान पर कुशा बिछावे, तत्पश्चात् बाघाम्बर, कृष्ण मृगचर्म, सामान्य मृगचर्म अथवा कम्बल का आसन उस मंडल पर स्थापित करें। यदि इस प्रकार के आसन का अभाव हो, तो पचीस कुशे से बने हुए विष्टर को शवरूप में स्थापित करे। पुनः 'ह्लः सौं महाप्रेतपद्मासनाय नमः' इस मन्त्र से पुनः आसन की पूजा करे। आत्ममन्त्र (पृथ्वि त्वया०) से उस पर बांये घुटने पर दाहिना पैर रख कर वीरासन से अथवा बाँयें पैर पर दाहिना घुटना रख कर विपरीत क्रम से आसन पर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख हो, आसन पर बैठे। आसन पर बैठते समय, 'आसनमन्त्रस्य' से लेकर 'विनियोगः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर उसके नीचे जल छोड़े। फिर 'ॐ पृथ्वि०' से 'पवित्रं कुरु चासनम्' मन्त्र पढ़ कर आसन पर बैठे। तदनन्तर 'वास्तुपुरुषाय नमः' 'ब्रह्मणे नमः' मन्त्र पढ़ कर नैऋत्य कोण के देवताओं की पूजा कर 'धर्माय नमः' से

'ॐ वास्तुपुरुषाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः' इति नैर्ऋत्ये सम्पूज्य, 'ॐ धर्माय नमः, ॐ ज्ञानाय नमः, ॐ वैराग्याय नमः, 'ॐ ऐश्वर्याय नमः' इति दिक्षु सम्पूज्य, 'ॐ अधर्माय नमः, ॐ अवैराग्याय नमः, ॐ अनैश्वर्याय नमः' इति विदिक्षु सम्पूजयेत्। 'ॐ हूँ फट् स्वाहा' इति मन्त्रेण 'ॐ ह्रीं स्वाहा' इति मन्त्रेण वा काय-वाक्-चित्तशोधनं कृत्वा, 'रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा' इत्यात्मानमभिरक्षयेत्।

'ॐ शताभिषेके शताभिषेके पदे हूँ फट स्वाहा, ॐ पुष्पकेतुराजार्हत् पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पसम्भवे। पुष्पचयावकीर्णे हूँ फट् स्वाहा' इति पुष्पमभिमन्त्रयेत्। अन्यानि-पूजावस्तूनि सर्वाणि सामान्यार्घ्योदकेनाऽभिषिच्य, धेनुमुद्रा-मत्स्यमुद्रे दर्शयित्वा, पुष्पाणि शुद्धानि विभावयेत्। 'वमि'ति

लेकर 'ऐश्वार्याय नमः पर्यन्त मन्त्र पढ़ते हुए, चारों दिशाओं में तत्तद्देवताओं का पूजन करे। पुनः 'ॐ हूँ फट् स्वाहा' अथवा 'ॐ ह्रीं स्वाहा' मन्त्र पढ़ कर अपने शरीर, वाणी तथा चित्त का शोधन करे। 'रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा' पढ़ कर अपनी रक्षा करे।

तदनन्तर 'ॐ शताभिषेके' से 'हूँ फट् स्वाहा' पर्यन्त प्रथम मन्त्र तथा 'ॐ पुष्पकेतु' से 'हूँ फट् स्वाहा' पर्यन्त दो मन्त्रों को पढ़कर भगवती की पूजा के लिए लाये गये पुष्पों को अभिमन्त्रित करे। पुनः अन्य पूजा की वस्तुओं को पूर्व स्थापित अर्घ्य जल से सिञ्चित कर धेनु तथा मत्स्य मुद्रा प्रदर्शित कर 'पुष्प सर्वथा शुद्ध है' ऐसी कल्पना करे। फिर अपने चारों ओर 'वम्' इस मन्त्र को पढ़कर जलधारा

जलधारां प्रक्षिप्य, वह्निबीजेन वह्निप्राकारं विचिन्त्य, 'हूँ फट्' इति मन्त्रेण चतुर्दिक्षु क्रोधदृष्टया निरीक्ष्य, सर्वान् विघ्नानुत्सारयेत् ।

तद्यथा—'सर्वविघ्नानुत्सारय हूँ फट् स्वाहा' इति मन्त्रेण ऊर्ध्वमवलोक्य, दिव्यांश्चतुर्दिक्षु जलक्षेपेणाऽन्तरिक्षगान् वाम-पार्ष्णिघातत्रयेण भौमान् विघ्नानुत्सार्य, लाज-चन्दन-सिद्धार्थ-तिल-दधि-दूर्वाक्षतानामन्यतममादाय,

'ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये चाऽत्र विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥'

इति पठंश्चतुर्दिक्षु क्षिपेत् । ततो वामे, 'ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परात्परगुरुभ्यो नमः, ॐ परमेष्ठि-

---

प्रक्षिप्त करे, और 'रं' इस वह्निबीज को पढ़कर 'मेरे चारों ओर रक्षा के लिए अग्नि का प्राकार बन गया है' इस प्रकार की कल्पना कर 'हूँ फट् स्वाहा' मन्त्र पढ़ कर चारों ओर क्रोध दृष्टि से देखते हुए सभी विघ्नों को दूर करे । वह इस प्रकार है—

'सर्वविघ्नानुत्सारय हूँ फट् स्वाहा' इस मन्त्र से ऊपर की ओर देखते हुए चारों ओर जल छिड़क कर अन्तरिक्ष में चारों ओर रहने वाले तथा तीन बार बाँयें पैर के आघात से पृथ्वी स्थित समस्त विघ्नों को दूर कर लावा, रक्त चन्दन, सफेद सरसों, तिल, दही, दूर्वा एवं अक्षतादि में-से कोई एक लेकर 'ॐ अपसर्पन्तु' से नश्यन्तु शिवाज्ञया' पर्यन्त मन्त्र को पढ़कर चारों ओर उस श्वेत सर्षप को छोड़े । इस प्रकार समस्त विघ्नों को दूर कर अपनी बाँयीं ओर 'ॐ गुरुभ्यो नमः' से लेकर 'ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः, पर्यन्त चार मन्त्रों को

गुरुभ्यो नमः' दक्षिणे 'ॐ गणेशाय नमः' पुरतः, 'ॐ दक्षिण-कालिकायै नमः' इति प्रणमेत् ।

ततः करशुद्धि कुर्यात् । तद्यथा-'हूँ' इति मन्त्रेण चन्द-नाक्तानि कुसुमान्यङ्गुल्यग्रेणादाय, 'हौं' इति मन्त्रेण कराभ्यां मर्दयित्वा, 'क्लीं' इति बीजेन दक्षहस्तेन सम्मृज्य, 'ॐ तत्सत्' इति मन्त्रेण वामहस्तेनाघ्राय, 'हौं' इति मन्त्रेण ऐशान्यां दिशि पुष्पं परित्यजेत् ।

'ॐ ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः ।
मृत्यु-रोग-भय-क्रोधाः पतन्तु रिपुमस्तके ॥'

इति मन्त्रेण वा परित्यजेत् । परित्यागश्च नाराचमुद्रया ।

पढ़कर तत्तद् गुरुओं को प्रणाम करे। इसी प्रकार दाहिनी ओर 'ॐ गणेशाय नमः' मन्त्र पढ़ गणेश को तथा 'ॐ दक्षिणकालिकायै नमः' मन्त्र पढ़कर अपने आगे काली को प्रणाम करे।

पुनः कर-शुद्धि करे। उसकी विधि इस प्रकार है 'हूँ' इस मंत्र से चन्दन-मिश्रित पुष्प को दाहिने हाथ की अङ्गुलि के अग्रभाग से लेकर 'हौं' इस मन्त्र से दोनों हाथों से उसे मल कर 'क्लीं' इस बीज मन्त्र से अपने दाहिने हाथ से पीस कर 'ॐ तत्सत्' इस मंत्र से बाँयें हाथ में लेकर उस पुष्प को सूंघ, और 'हौं' इस मन्त्र को पढ़कर ईशान कोण में उस पुष्प का परित्याग करे। अथवा 'ॐ ते सर्वे॰' से लेकर 'रिपुमस्तके' पर्यन्त मंत्र पढ़कर नाराच (बाण) मुद्रा से पुष्प का परित्याग करे।

श्लोकार्थ--जो मुझे मारने के लिए हिंसक जन्तु आने वाले हैं, वे सभी एवं मृत्यु, रोग, भय तथा क्रोध शत्रु के शिर पर सवार हों।

दक्षिण काली-पूजा के प्रथम साधक को उपर्युक्त विधान करना आवश्यक है। तत्पश्चात् उसे भूतशुद्धि करनी चाहिए।

भूतशुद्धिः

शिरसि भैरवाय ऋषये नमः। मुखे उष्णिक्छन्दसे नमः। हृदये ॐ दक्षिणकालिकायै नमः। गुह्ये क्रीं बीजाय नमः। पादयोः हूँ शक्तये नमः। सर्वाङ्गे क्रीं कीलकाय नमः।

षडङ्गन्यासः

'क्रां हृदयाय नमः' अङ्गुलीभिस्तर्जनीमध्यमानामभिः प्रसारिताभिर्हृदयं स्पृशेत्। 'क्रीं शिरसे स्वाहा' इति तर्जनी-मध्यमाभ्यां शिरसि स्पृशेत्। 'क्रूं शिखायै वषट्' इति बद्ध-मुष्टिना अङ्गुष्ठेन शिखां स्पृशेत्। 'क्रैं कवचाय हुम्' इति मन्त्रेण व्यस्तहस्ताभ्यां सर्वाङ्गं।

'क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्' इति तर्जन्या अनामया नेत्रे, मध्यमया भ्रूमध्यमेवं नेत्रत्रयं स्पृशेत्। 'क्रः अस्त्राय फट्' इति छोटिकया दिग्बन्धनं कुर्यात्।

भूतशुद्धि भूतशुद्धि के विषय में मन्त्र पूर्वक सिर आदि अङ्गों के स्पर्श करने का निर्देश है। अतः साधक को 'शिरसि भैरवाय ऋषये नमः' से क्रीं कीलकाय नमः' पर्यन्त पढ़कर शिर से लेकर सभी अङ्गों का स्पर्श करना चाहिए।

षडङ्गन्यास—'क्रां हृदयाय नमः' पढ़कर दोनों हाथ की तर्जनी-मध्यमा एवं अनामिका अँगुलियों को खुला पसार कर हृदय का, 'क्री शिरसे स्वाहा' मन्त्र पढ़कर तर्जनी एवं मध्यमा अँगुलियों से शिर का स्पर्श करे। इसी प्रकार 'क्रूं शिखायै वषट्' पढ़कर मुट्ठी बांधकर केवल अँगूठे से शिखा का, क्रौं कवचाय हुम्' मन्त्र पढ़कर दोनों हाथ को उलट कर उसके तलवे से सर्वाङ्ग का स्पर्श करे। 'क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्' पढ़कर तर्जनी, अनामिका से दोनों नेत्रों का तथा मात्र मध्यमा से भ्रूमध्य का स्पर्श करे। 'क्रः अस्त्राय फट्' इस मंत्र को पढ़ चुटकी बजाकर दिग्बन्धन करे।

एवं करन्यासः—'क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हुम्, क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' एवं करन्यासं विधाय, दशधा सप्तधा पञ्चधा वा मूलेन व्यापकन्यासं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तक्रमेण प्राणायामत्रयं विदध्यात्। तद्यथा-दक्षिणहस्ताङ्गुष्ठेन दक्षनासापुटं निरुध्य, वामनासापुटेन मूलं षोडशवारं जपन्, शनैः शनैः प्राणाख्यवायुमाकृष्य, शिरसि सहस्रारे धारयेदिति पूरकः। दक्षहस्ताऽनामिकातर्जन्यङ्गुष्ठैः नासापुटद्वयं निरुध्य, मूलं चतुःषष्टिवारं जपन् कुम्भयेत्। पुनर्दक्षनासापुटमङ्गुष्ठनिरोधनं त्यक्त्वा, मूलं द्वात्रिंशद्वारं जपञ्छनैः शनैस्तद्वायुं रेचयेत्। इति प्राणायामत्रयम्।

इसी प्रकार 'क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' से 'क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़कर करन्यास करे। तत्पश्चात् दश, सात अथवा पाँच वार मूल मन्त्र पढ़ कर व्यापक न्यास करे। पुनः पूर्वोक्त विधि से तीन प्राणायाम करे। उसकी विधि इस प्रकार है – अपने दाहिने हाथ के अँगूठे से दाहिनी नासिका को बन्द कर बाँयीं ओर की नासिका से सोलह बार मूल को जपते हुए प्राण वायु को खींचे, फिर उस वायु को सहस्रार में स्थापित करे, यह तो पूरक हुआ। फिर दाहिने हाथ की अनामिका एवं तर्जनी तथा अँगूठे से दोनों नासिका को रोक कर मूल मन्त्र का चौंसठ बार जप करे, यह कुम्भक की विधि हुई। पुनः दाहिने हाथ के अँगूठे को, जिससे दाहिनी नासिका बन्द की थी, उसे वहाँ से हटा दे और बत्तीस बार मूल मन्त्र का जप करते हुए धीरे-धीरे वायु को निकाले, यह रेचक की विधि हुई। इस प्रकार एक प्राणायाम पूर्ण होता है। इसी प्रकार तीन प्राणायाम करे।

यदि संविच्छोधनमिच्छेत्तदाऽत्रैव कर्तव्यम् । तद्विधिस्तु-
'ॐ सिद्धाढ्यां शिवगेहिनीं करलसत्पाशाङ्कुशां भैरवीं
भक्ताभीष्टवरप्रदां सुकुशलां संसारबन्धच्छिदाम् ।
पीयूषाम्बुधिमन्थनोद्भवरसां संविद्विलासां परां
वीराराधितपादुकां सुविजयां ध्यायेज्जगन्मोहिनीम् ।।'
इति ध्यात्वा ।

'ॐ संविदे ब्रह्मसम्भूते ब्रह्मपुत्रि सदानघे ।
भैरवानन्दतृप्त्यर्थं पवित्रा भव सर्वदा ।।'
ॐ ब्राह्मण्यै नमः स्वाहा ।
'ॐ सिद्धमूलक्रिये देवि हीनबोधप्रबोधिनि ।।
राजप्रजावशङ्करि शत्रुकण्ठनिषूदिनि ।।'
'ॐ ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा ।
'ॐ अज्ञानेन्धनदीप्ताग्निज्वालाग्निज्ञानरूपिणि ।।
आनन्दस्याशमप्रीतिं सम्यग्ज्ञानं प्रयच्छ मे ।।'
ॐ ह्रीं वैश्यायै नमः स्वाहा ।

यदि संवित् (बुद्धि) शोधन करना हो, तो इसी समय उसकी भी शुद्धि कर लेनी चाहिए। वह इस प्रजार है—'ॐ सिद्धाढ्यां' से 'जगन्मोहिनीं' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर ध्यान करे। पुनः 'ॐ संविदे ब्रह्मसम्भूते' तथा 'ॐ ब्राह्मण्यै नमः स्वाहा' पढ़ कर ब्राह्मणी का शोधन करे। इसी प्रकार 'ॐ सिद्धमूलक्रिये' से 'निषूदिनि' तथा 'ॐ ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर क्षत्रिया का, 'ॐ अज्ञानेन्धन' से 'ॐ ह्रीं वैश्यायै नमः स्वाहा' पढ़ कर वैश्या का,

'ॐ नमस्यामि नमस्यामि योगमार्गप्रदर्शिनि ।
त्रैलोक्य-विजये मातः समाधिफलदा भव ॥'

'ॐ क्लीं शूद्रायै नमः स्वाहा ।' इत्येतैर्मन्त्रैः संशोध्य, ततः 'ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतमाकर्षय आकर्षय सिद्धि देहि सर्वं मे वशमानय स्वाहा' इति मन्त्रेणाऽभिमन्त्रयेत् ।

ततः—'ॐ ह्रीं ह्रीं लूं अः अं डं एं महाघोरेशाय नमः' इत्यघोरमन्त्रेण चाऽभिमन्त्र्य, मूलमन्त्रं सप्तवारं जप्त्वा, श्रीष्टदेवीमावाह्य, धेनुमुद्रां योनिमुद्रां च प्रदर्श्य, छोटिकाभिर्दिग्बन्धनं तालत्रयं च कृत्वा, तत्र श्रीष्टदेवीं मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'ऐं गुरुपादुकाभ्यो नमः' इति मन्त्रेण ब्रह्मरन्ध्रे श्रीगुरुं त्रिधा तर्पयेत् । मूलेन हृत्कमले श्रीष्टदेवतां पञ्चधा तर्पयेत् । ततः स्वीकारः । 'ऐं आत्मतत्त्वेन आत्मतत्त्वं

'ॐ नमस्यामि' से 'ॐ क्लीं शूद्रायै नमः स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर शूद्रा संवित् का शोधन करे। तदनन्तर 'ॐ अमृते' से 'वशमानय स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर संवित् (ज्ञान) शक्ति को अभिमन्त्रित करे। पुनः 'ॐ ह्रीं ह्रीं' इस अघोर मन्त्र को पढ़ कर अभिमन्त्रित करे। फिर मूल मन्त्र को सात बार जप कर, इष्ट देवी भगवती कालिका का आवाहन कर, धेनुमुद्रा तथा योनिमुद्रा प्रदर्शित कर चुटकी बजाते हुए दिग्बन्धन कर, दोनों हाथों से तीन बार थपोड़ी बजाकर श्री इष्ट देवी का मानसोपचार से पूजन कर, 'ऐं गुरुपादुकाभ्यो नमः' इस मन्त्र को तीन बार पढ़ कर ब्रह्मरन्ध्र में श्री गुरु का तीन बार एवं पाँच बार मूल मन्त्र को पढ़ कर हृत्कमल में श्री इष्ट देवता का पाँच बार तर्पण करे। फिर आत्म-समर्पण करे । पुनः 'ऐं आत्मतत्त्वेन आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' से

शोधयामि स्वाहा, ऐं विद्यातत्त्वेन विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ऐं शिवतत्त्वेन शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' मूलमुच्चार्य्य, 'सर्वतत्त्वेन सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' 'ऐं वद वद वाग्वादिनि मम जिह्वाग्रे स्थिरा भव सर्वसत्त्ववशङ्करि स्वाहा' इति मुखेन जाठराग्नौ जुहुयात् । मूलमन्त्रेण सर्वं पिबेत् । ततः स्तुवीत–

'संविद्देवि गरीयसी गुणमयी वैगुण्यविध्वंसिनी
मायामोहमदान्धकारशमनी तापत्रयोन्मूलिनी ।
वाग्देवी वदनाम्बुजैकरसिका सम्बोधिनीदीपका
ब्रह्मज्ञानविवेकसिद्धविजयी विज्ञानमूर्त्यै नमः ॥१॥
संविदासवयोर्मध्ये संविदेव गरीयसी ।
भयत्राशाय निर्गन्धा विख्याता मोदकारिणी ॥२॥

इति स्तुत्वा, श्रीगुरुं श्रीष्टदेवतां च प्रणम्य, ऋष्यादिन्यासं षडङ्गन्यासं करन्यासं च कुर्यात् ।

'शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए 'सर्वतत्त्वेन सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' तथा 'ऐं वद वद' से 'सर्वसत्त्ववशं करि स्वाहा' इन दो मन्त्रों की जाठराग्नि में आहुति दे तथा मूल मन्त्र से सब पी जाने की भावना करे। फिर 'संविद्देवि' से लेकर 'मोदकारिणी' पर्यन्त दो श्लोकों से स्तुति कर श्री गुरु तथा श्री इष्ट देवता को प्रणाम कर ऋष्यादिन्यास, षडङ्गन्यास एवं करन्यास करे । उसकी विधि इस प्रकार है—

तद्यथा—शिरसि भैरवाय ऋषये नमः, मुखे उष्णिक्-छन्दसे नमः, हृदये ॐ दक्षिणकालिकायै नमः, गुह्ये क्रीं बीजाय नमः, पादयोः ह्रूं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे क्रीं कीलकाय नमः।

षडङ्गन्यासः—क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा, क्रूं शिखायै वषट्, क्रैं कवचाय हुम्, क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्रः अस्त्राय फट्। एवं करन्यासः—क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हुम्, क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्रः, करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

एवं करन्यासं विधाय, भूतशुद्धि कुर्यात्। अङ्के करावुत्तानीकृत्य निश्चलचित्तः 'सोऽहम्' इति मन्त्रेण प्रबोधितां कुण्डलिनीं मूलाधारात् सुषुम्नावर्त्मना स्वाधिष्ठाने मणिपूरेऽनाहते

'ॐ शिरसि भैरवाय ऋषये नमः' से लेकर 'क्रीं कीलकाय नमः' तक मन्त्रों को पढ़ते हुए शिर, मुख, हृदय, गुह्यस्थान, दोनों पैर तथा सर्वाङ्ग का स्पर्श कर ऋष्यादि न्यास करे।

षडङ्गन्यास—'क्रां हृदयाय नमः' से 'क्रः अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़ कर हृदय, शिर, शिखा, दोनों बाहु, नेत्र तथा भ्रूमध्य का स्पर्श कर चारों ओर चुटकी बजावे। इसी प्रकार 'क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' से लेकर 'क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़ते हुए दोनों हाथ के अँगूठे आदि पाँचों अँगुलियों का स्पर्श करते हुए दोनों हाथ के करतल तथा करपृष्ठ का स्पर्श करे।

साधक इस प्रकार करन्यास कर भूतशुद्धि करे जो इस प्रकार है—हृदय प्रदेश पर हाथों के वृत्त के समान गोला स्थापित करे। पश्चात् स्थिर मन हो 'सोऽहम्' इस मन्त्र से जाग्रत कुण्डलिनी को मूलाधार से उठा कर सुषुम्ना मार्ग से स्वाधिष्ठान, मणिपुर तथा

क्रमेणानीय, तत्र स्थितं जीवं प्रदीपकलिकाकारं विचिन्त्य, तन्मुखे निक्षिप्य, ततो विशुद्धाख्याज्ञाचक्रे आनीय, ततः शिरोऽवस्थिताधोमुखसहस्रारचक्रे हिमनिभसर्ववर्णविभूषिता क-खादित्रिरेखासु आलक्षत्रयविभूषितसहस्रदलयुक्तं पद्मम्। तत्र गुरुं तस्मिन् समानीय तत्कर्णिकास्थपरशिवे 'हंसः' इति मन्त्रेण संयोजयेत्।

अथ पादतो जानुपर्यन्तं चतुष्कोणं सुवर्णाभं 'लम्' इति बीजेन युक्तं सवज्रं कंपृथ्वीमण्डलं तत्र गमनसहितं पादेन्द्रियं गन्धसहितं घ्राणेन्द्रियं निवृत्तिकलायुक्तं ब्रह्माणं, समानवायुं च विभावयेत् ॥१॥ ततो जानुतो नाभिपर्यन्तमर्द्धचन्द्राकारं

अनाहत क्रम से ऊपर ले जाकर अनाहत चक्र पर स्थित हुए जीव को दीपक की लौ के समान ध्यान कर कुण्डलिनी को उस जीव के मुख में डाल कर पुनः उसे विशुद्ध चक्र तथा आज्ञाचक्र में ले जाकर शिरःप्रदेश में रहने वाले अधोमुख सहस्रारचक्र में हिम के समान सर्व वर्ण विभूषित अकार, ककार तथा खकार के समान तीन रेखा वाले आकार, लकार, क्षकार वर्ण से युक्त सहस्रदल पर्यन्त विभूषित पद्म स्थित है वहीं पर गुरु का ध्यान एवं आवाहन कर उन्हें कर्णिका पर स्थित शिव में 'हंसः' इस मन्त्र को पढ़कर दोनों को एक में मिला दे।

इसके बाद पैर से लेकर जानुपर्यन्त इष्ट देवता के शरीर में चतुष्कोण सुवर्ण के समान देदीप्यमान 'लम्' इस बीज मन्त्र से युक्त पादेन्द्रिय तथा गन्धसहित घ्राणेन्द्रिय की मोक्ष कलायुक्त ब्रह्मदेव तथा समान वायु का ध्यान करे॥ १॥ फिर जानु से नाभि

श्वेताभं 'वम्' इति बीजेन युक्तं पद्मद्वयलाञ्छितं जलमण्डलं तत्र च ग्रहणक्रियासहितं पाणीन्द्रियं रसेन सह जिह्वेन्द्रियं प्रतिष्ठाकलासहितं श्रीविष्णुमुदानवायुं च विभावयेत् ॥२॥ ततो नाभितो हृदयपर्यन्तं त्रिकोणं रक्तं 'रम्' इति बीजेन युक्तं स्वस्तिकान्वितं तेजोमण्डलं तत्र च विसर्गक्रियासहितं पाय्विन्द्रियरूपेण चक्षुरिन्द्रियं विद्याकलासहितं शिवं व्यान-वायुं च विभावयेत् ॥३॥

ततो हृदयाद् भ्रूमध्य-पर्यन्तं वर्तुलं धूम्रवर्णं 'यम्' इति बीजेन युक्तं षड्बिन्दुलाञ्छितं वायुमण्डलं तत्रानन्दक्रिया-सहितोपस्थेन्द्रियं स्पर्शसहितं त्वगिन्द्रियं शान्तिकलासहितमी-शानमपानवायुं च विभावयेत् ॥४॥

पर्यन्त शरीर में अर्द्धचन्द्राकार श्वेत वर्ण वाले 'वम्' इस बीज मन्त्र से युक्त दो पद्मों से युक्त जलमण्डल की कल्पना कर वहाँ पर ग्रहण क्रियायुक्त पाणि इन्द्रिय की तथा रसयुक्त जिह्वेन्द्रिय की प्रतिष्ठा कर, अकल महाविष्णु तथा उदान वायु का ध्यान करे। फिर नाभि से हृदय पर्यन्त शिर में त्रिकोण आकृति के रक्त वर्ण वाले, 'रम्' इस बीज मन्त्र से युक्त स्वस्तिकाकार तेजोमण्डल पर विसर्ग क्रिया युक्त पायु इन्द्रिय एवं चक्षुइन्द्रिय की तथा विद्या कलायुक्त शिव की एवं व्यान वायु का ध्यान करे ॥ ३ ॥

पुनः हृदय से लेकर भ्रू पर्यन्त इष्ट देवता के शरीर में गोलाकार धूम्र वर्ण के 'यम्' बीज से युक्त छह विन्दुओं के चिह्न वाले वायु-मण्डल पर आनन्द क्रिया सहित उपस्थेन्द्रिय तथा स्पर्श गुण युक्त त्वगिन्द्रिय, शान्तिकलायुक्त ईशान देवता तथा अपान वायु का ध्यान करे ॥ ४ ॥

ततो भ्रूमध्याद् ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तं वर्त्तुलं स्वच्छं 'हम्' इति बीजेन युक्तं नभोमण्डलं तत्र वचनक्रियासहितं वागिन्द्रियं शब्दसहित श्रोत्रेन्द्रियं, शान्त्यतीताख्यकलासहितं सदाशिवं प्राणवायुं च ध्यायेत् ॥५॥ ततः सहस्रारे शून्ये सर्वचैतन्यमये परब्रह्म ध्यायेत् ।

ततः सपरिकरं पृथ्वीमण्डलं जलमण्डले, तच्च वह्निमण्डले, तच्च वायुमण्डले, तच्चाकाशमण्डले, तच्चाहङ्कारे, तन्महत्तत्वे, तच्च प्रकृतौ, तां च ब्रह्मणि लीनां विभावयेत् । ततः सर्वं शून्यं विचिन्तयेत् ।

पुनः भ्रूमध्य से ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्त शरीर में गोलाकार स्वच्छ वर्ण वाले 'हम्' इस बीज मन्त्र से युक्त नभोमण्डल पर वचन क्रिया सहित वाग् इन्द्रिय की तथा शब्द सहित श्रोत्रेन्द्रिय की शान्ति से परे किसी सूक्ष्म कला के सहित सदाशिव एवं प्राणवायु का ध्यान करे ॥ ५ ॥ तदनन्तर सहस्रार चक्र में शून्य सर्व चैतन्यमय में परब्रह्म का ध्यान करे।

तदनन्तर समस्त परिकर युक्त पृथ्वीमण्डल को जल में पुनः सपरिकर जलमण्डल को वह्निमण्डल में, फिर उसे वायुमण्डल में, पश्चात् उसे आकाशमण्डल में, आकाशमण्डल को अहङ्कार में, अहङ्कार को महत्तत्त्व में, महत्तत्त्व को प्रकृति में तथा उस प्रकृति को पृथ्वी में लीन हुआ ध्यान करे। उस समय कुछ नहीं है सर्वशून्य है ऐसा ध्यान करे।

ततो दक्षिणकुक्षौ कृष्णवर्णमङ्गुष्ठप्रमाणं ब्रह्महत्याशिरस्कं स्वर्णस्तेयभुजं सुरापानहृदयं गुरुतल्पकटीयुतं तत्संसर्गपदद्वन्द्वमुपपातकरोमकं चर्मधरमधोमुखं पापपुरुषं विचिन्त्य, तत्सहितं शरीरं पूरकविधिना दशकृत्वो जप्तेन 'यम्' इति बीजेन नभो ध्यातेन संशोष्य, कुम्भकविधिना चतुःषष्टिकृत्वो जप्तेन 'रम्' इति बीजेन वह्निमण्डले मेढ्रमूले वा ध्यातेन, रक्तवर्णां मायां नाभौ ध्यात्वा, तदुद्भूताऽग्निना सन्दह्य, रेचकविधिना द्वात्रिंशत् कृत्वो जप्तेन 'यम्' इति बीजेन पापपुरुषोद्भूवं भस्म कालीबीजं हृदि पीताभं ध्यात्वा, तदुद्भूतेन वायुना प्रोत्सारयेत् ।

फिर दाहिनी कुक्षि में, काले वर्ण के अङ्गुष्ठ मात्र के लम्बे, पाप पुरुष, जिसका ब्रह्महत्या शिर है, सुवर्णस्तेय जिसकी भुजा है, सुरापान जिसका हृदय है, गुरुतल्पगमन, जिसकी कटि है, उनसे संसर्ग (खान-पान शयन) करने वाला जिसके दो पैर हैं; विविध उपपातक, जिसके रोम एवं चमड़े हैं, ऐसे अधोमुख पाप पुरुष का ध्यान कर उस पाप पुरुष के शरीर को पूर्व में कहे गये विधिपूर्वक क्रम के अनुसार दश बार मूल मन्त्र का जप कर 'यम्' इस वायु के बीज मन्त्र का आकाश में ध्यान कर उस पाप पुरुष का शरीर सुखा कर कुम्भक की रीति से चौंसठ बार मूल मन्त्र से युक्त 'रम्' इस बीज मन्त्र से जप कर वह्निमण्डल का मेढ्र (अण्डकोश) मूल में ध्यान कर तथा रक्त वर्ण की माया का नाभि स्थान में ध्यान कर उससे उद्भूत अग्नि के द्वारा उस शुष्क पाप पुरुष के शरीर को जलाकर भस्म करे। पुनः रेचक क्रम से बत्तीस बार मूल मन्त्र के सहित 'यम्' इस बीज मन्त्र का जप कर पाप पुरुष के उस भस्म को पीत वर्ण के हृदय में काली बीज द्वारा हृदय में ध्यान कर वायु से पाप पुरुष के भस्म को दूर करे।

ततः पूरकविधिना षोडशकृत्वो जप्तेन 'वम्' इति वरुण-बीजेन हृदिस्थेन घण्टिकायां ध्यातेन वा तद्भस्म ललाटे तुषाराभं कूर्चबीजं ध्यात्वा, तदुद्भूतेनाऽमृतेनाऽऽप्लाव्य, कुम्भक-विधिना चतुःषष्टिजप्तेन 'लम्' इति बीजेन पृथ्वीमण्डले ध्यातेन तद्भस्म घनीकृत्य, रेचकविधिना द्वात्रिंशत्कृत्वो जप्तेन 'हम्' इति बीजेन नभोमण्डले स्थितेनाऽङ्गानि रेचयित्वा, पापपुण्यनिर्मुक्तं शरीरं शाम्भवं ध्यात्वा, चिन्मयाद्भूतानि उत्पादयेत् । तद्यथा—

'सोऽहं' 'हंसः' इति वा मन्त्रेण प्रकृतिं चिन्मयादुत्पाद्य, प्रकृतेर्महत्तत्त्वं महदादहङ्कारमहङ्काराग्नभो, नभसो वायु,

---

पुनः पूरक विधि के अनुसार सोलह बार मूल मन्त्र का जप कर हृदय स्थान में रहने वाले 'वम्' इस वरुण के बीज मन्त्र का कण्ठ में ध्यान कर उस भस्म को ललाट में रख कर तुषार वर्ण वाले कूर्च बीज (हुम्) का ध्यान कर उससे उत्पन्न हुए अमृत के द्वारा उसको भिगो कर कुम्भक क्रम के अनुसार मूल मन्त्र का चौंसठ बार ध्यान कर 'लम्' इस पृथ्वी मण्डल के बीज का ध्यान कर उस भस्म को गाढ़ा बनावे । पुनः रेचक क्रम के अनुसार बत्तीस बार मूल मन्त्र का जप कर 'हम्' इस नभोमण्डल में स्थित बीज मन्त्र से अपने शरीर को सर्वथा अलग कर पाप-पुण्य से सर्वथा रहित एक पृथक् शिव स्वरूप का ध्यान करे। और उस शरीर को सर्वथा एक अद्भुत तथा ज्ञानमय उत्पन्न हुआ समझे। वह इस प्रकार है—

'सोहं' 'हंसः' इस मन्त्र से चिन्मय से प्रकृतितत्त्व को अलग करे। फिर प्रकृति से महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से अहङ्कार, अहङ्कार से आकाश,

वायोरग्नि,वह्नेरपस्ततः पृथ्वीमुत्पादयेत्। तेनैव मन्त्रेण कुण्डलिनीं चैतन्यमयीं चन्द्रमण्डलान्तर्गतामृतं पाययित्वा षट्सु चक्रेषु क्रमशः स्वचरणयुगलान्तर्गतामृतवृष्ट्या सिञ्चन्तीं तेष्वानीय, जीवं तया वियोज्य, हृदये संस्थाप्य, तां मूलाधारे स्वयम्भूलिङ्गे स्थापयेत्। इत्यात्मानं देवतामयं ध्यायेत्।

इति भूतशुद्धिः।

ततः प्राणमन्त्रेण जीवस्थापनं कुर्यात्। तत्र क्रमः–ॐ अस्य प्राणस्थापनमन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरा ऋषयः, ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि, चैतन्यरूपा प्राणशक्तिर्देवता प्राणस्थापने विनियोगः।

आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी तत्त्व को उत्पन्न करे। फिर चैतन्यस्वरूपिणी कुण्डलिनी को चन्द्रमण्डल में स्थित अमृत का पान करा कर मूलाधारादि षड्चक्रों को क्रम से अपने दोनों चरण के अन्तर्गत रहने वाले अमृत-वृष्टि से सींचती हुई, उस पञ्चतत्त्व में लाकर स्थापित करे और उस चैतन्यमयी कुण्डलिनी से जीव को अलग कर हृदय में स्थापित कर जीवरहित कुण्डलिनी को मूलाधार के स्वयम्भू लिङ्ग में स्थापित करे। इस प्रकार अपने को देवतामय का ध्यान करे।

इस प्रकार भूतशुद्धि समाप्त।

तदनन्तर प्राण प्रतिष्ठा मन्त्र से हृदय स्थल पर जीव को स्थापित करे। उसकी विधि इस प्रकार है--

सर्व प्रथम 'ॐ अस्य॰' से लेकर 'विनियोगः' तक मन्त्र पढ़ कर पृथ्वी पर जल गिरावे।

शिरसि ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरेभ्यः ऋषिभ्यो नमः, मुखे ऋग्यजुःसामभ्यश्छन्दोभ्यो नमः, हृदये प्राणशक्त्यै देवतायै नमः, गुह्ये आं बीजाय नमः, पादयोः ह्रींशक्तये नमः, सर्वाङ्गे क्रौं कीलकाय नमः, इति विन्यस्य षडङ्गानि विन्यसेत् ।

ङं कं खं गं घं आकाश-वायु-वह्नि-जल-पृथिव्यात्मने हृदयाय नमः । ञं चं छं जं झं शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्धात्मने शिरसे स्वाहा । णं टं ठं डं ढं श्रोत्र-त्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राणात्मने शिखायै वषट् । नं तं थं दं धं वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थात्मने कवचाय हुम् । मं पं फं बं भं वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने नेत्रत्रयाय वौषट् । शं यं रं वं लं हं षं क्षं सं लं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अस्त्राय फट् ।

एवं करन्यासः, सोऽपि यथा-नाभेरारभ्य पादान्तम् आमिति न्यसेत्, ङं कं खं घं गं आकाश-वायु-वह्नि-जल-

---

'ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरेभ्यः ऋषिभ्यो नमः' से शिर का, 'ऋग्यजुः-सामभ्यश्छन्दोभ्यो नमः' पढ़ कर मुख का। इसी प्रकार तत्तन्मन्त्रों को पढ़ते हुए हृदय, गुह्यस्थान, पैर तथा सर्वाङ्ग में 'क्रौं कीलकाय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर न्यास करे। तदनन्तर षडङ्गन्यास करे। 'ङं कं' से ले कर 'अस्त्राय फट्' पर्यन्त छह मन्त्र पढ़ कर क्रमशः हृदय, शिर, शिखा, दोनों हाथ, भ्रूमध्य तथा दोनों नेत्र का स्पर्श कर अन्तिम मन्त्र से शिर के चारों ओर हाथ घुमा कर ताली बजावे।

इसी प्रकार करन्यास भी करे, वह इस प्रकार है—नाभि से लेकर पैर पर्यन्त 'आम्' इस मन्त्र से न्यास करे। फिर 'ङं कं' से

पृथिव्यात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः, ञं चं छं झं जं शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्धात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा, णं टं ठं ढं डं श्रोत्र-त्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राणात्मने मध्यमाभ्यां वौषट्, नं तं थं धं दं वाक्पाणि-पाद-पायूपस्थात्मने अनामिकाभ्यां हूम्, मं पं फं भं बं वक्तव्यादान-गमन-विसर्गानन्दात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, शं यं रं वं लं हं षं क्षं सं ळं मनो-बुद्ध्यहङ्कार-चित्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

ततो नाभितो हृदयपर्यन्तं ह्रीमिति, हृदयान् मस्तकान्तं क्रोमिति विन्यसेत् । यं त्वगात्मने नमः इति हृदि, रं असृगात्मने नम इति दक्षिणांसे, लं मांसात्मने नम इति ककुदि, वं मेद आत्मने नमः इति वामस्कन्धे, शं अस्थ्यात्मने नमः इति हृदयाद् दक्षिणभुजाग्रान्तम्, षं मज्जात्मने नमः इति हृदयाद् वामभुजाग्रान्तं, सं शुक्रात्मने नमः इति हृदयाद् दक्षिणपादाग्रान्तं, हौं ओज आत्मने नमः इति हृदयाद् वामपादाग्रान्तं,

---

'करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' पर्यन्त मन्त्र को पढ़कर अंगूठा, दोनों तर्जनी, दोनों मध्यमा, दोनों अनामिका, दोनों कनिष्ठिका तथा दोनों हाथ के करतल तथा करपृष्ठ का स्पर्श करे ।

इस प्रकार करन्यास करने के पश्चात् नाभि से हृदय पर्यन्त 'ह्रीं' इस मन्त्र से एवं हृदय से मस्तक पर्यन्त 'क्रौम्' इस मन्त्र से न्यास करे । फिर 'यं त्वगात्मने नमः' से 'संजीवात्मने नमः' पर्यन्त प्राणप्रतिष्ठा के दश मन्त्रों को पढ़ते हुए क्रमशः हृदय, दाहिना कन्धा, ककुद्, वामस्कन्ध, हृदय से दाहिनी भुजा पर्यन्त, हृदय से वामभुजा पर्यन्त, हृदय से दक्षिण पादाग्रभाग, हृदय से वामपादाग्र-

हं घ्राणात्मने नमः इति हृदयात् नाभ्यन्तं, संजीवात्मने नमः इति हृदयान्मस्तकान्तं प्राणमन्त्रेण सप्तधा पञ्चधा वा व्यापकन्यासं कुर्यात् ।

ततो ध्यायेत् । यथा—

रक्ताब्धिपोतारुणपद्मसंस्थां
पाशाङ्कुशेष्वासशराऽसिबाणान् ।
शूलं कपालं दधतीं कराब्जै
रक्तां त्रिनेत्रां प्रणमामि देवीम् ॥'

ततो वक्ष्यमाण-लेलिहानमुद्रया हृदयं स्पृशन् एकादशवारं प्राणमन्त्रं जपेत् । मन्त्रश्च-आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ओं क्षं सं हं सः ह्रीं ओं हं सः श्रीदक्षिणकालिकायाः (मम) प्राणा इह प्राणाः, आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ओं क्षं शं सं हं सः ह्रीं ओं हं सः श्रीदक्षिणकालिकाया जीव इह स्थितः, आं ह्रीं क्रीं यं रं लं वं शं षं सं हों ओं क्षं सं हं सः श्रीदक्षिणकालिकायाः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि, आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ओं क्षं सं हं सः ह्रीं ओं हं सः श्रीदक्षिणकालिकाया वाङ्मन-स्त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा, ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ओं

भाग, हृदय से नाभि प्रदेश पर्यन्त और हृदय से मस्तक पर्यन्त प्रदेश का न्यास करे । इस प्राण प्रतिष्ठा मन्त्र को पाँच या सात बार पढ़कर व्यापक न्यास करे ।

पुनः 'रक्ताब्धि' से 'प्रणमामि देवीम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर देवी का ध्यान करे । फिर आगे कहे जाने वाले लेलिहान मुद्रा से हृदय का स्पर्श करते हुए ग्यारह बार प्राणमन्त्रों का जप करे । प्राण-प्रतिष्ठा

ह्रीं क्रों श्रीदक्षिणकालिकायाः प्राणाः इह प्राणाः, आं ह्रीं क्रों श्रीदक्षिणकालिकाया जीव इह स्थितः, आं ह्रीं क्रों श्रीदक्षिणकालिकायाः सर्वेन्द्रियाणि, आं ह्रीं क्रों श्रीदक्षिणकालिकायाः वाङ्-मन-स्त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

ततो देवतारूपमात्मानं ध्यात्वा, प्राणायाम-ऋष्यादिन्यासषडङ्गन्यास-करन्यासान् विधाय, मातृकान्यासमाचरेत् ।

मातृकान्यासः

तत्र, ॐ अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्माऋषिर्गायत्रीछन्दो, मातृकासरस्वतीदेवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयस्तदुभयं कीलकम् अभीष्टसिद्धचर्थे न्यासे विनियोगः ।

प्राणायामो यथा—इडया अ इ उ ऋ लृ ए ऐ ओ औ एभिः स्वरैः पूरयेत् । कु-चु टु-तु पु इति वर्णपञ्चकेन कुम्भयेत् । यरलवशषसह-एभिरष्टभिर्वर्णैः रेचयेत् ।

के मन्त्र हैं–'आं ह्रीं' से लेकर 'इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' पर्यन्त इन्हीं मन्त्रों को ग्यारह बार पढ़ कर प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिए । तब स्वयं अपने को देवता (महाकाली) रूप ध्यान कर प्राणायाम, ऋष्यादिन्यास, षडङ्गन्यास तथा करन्यास कर मातृका न्यास करे ।

मातृकान्यास—सर्व-प्रथम हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य' से 'न्यासे विनियोगः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर पृथ्वी पर छोड़ दे । फिर प्राणायाम करे । प्राणायाम की विधि इस प्रकार है—ईडा नाडी से 'अ' से लेकर 'औ' पर्यन्त स्वर पढ़कर शरीर को वायु से पूर्ण करे । फिर 'कु-चु-टु-तु-पु' इन पाँच वर्णों को पढ़कर उस वायु को रोक कर कुम्भक करे । फिर 'य' से लेकर 'ह' पर्यन्त आठ वर्णों को पढ़ कर वायु को धीरे-धीरे अलग करे । तब ऋष्यादि न्यास करे ।

ऋष्यादिन्यासो यथा—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदि मातृकासरस्वत्यै नमः, लिङ्गे हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः, पादयोः स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः सर्वाङ्गे तदुभयकीलकाय नमः।

षडङ्गन्यासो यथा—अंकंखंगंघंङं आं हृदयाय नमः इंचंछंजंझंञं ईं शिरसे स्वाहा, उंटंठंडंढंणं ऊं शिखायै वषट्, एं तंथंदंधंनं ऐं कवचाय हुम्, ओंपंफंबंभंमं औं नेत्रत्रयाय बौषट्, अंयंरंलंवंशंषंसंहंलंक्षं अः अस्त्राय फट्।

एवं करन्यासो यथा—अंकंखंगंघंङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, इंचंछंजंझंञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा, उंटंठंडंढंणंऊं मध्यमाभ्यां वषट्, एं तंथंदंधंनं ऐं अनामिकाभ्यां हुम्, ओंपंफंबंभंमंऔं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, अंयंरंलंवंशंषंसंहंक्षंअः करतलकर-पृष्ठाभ्यां फट्।

'ब्रह्मणे ऋषये नमः' गायत्रीछन्दसे नमः,' मातृकासरस्वत्यै नमः, हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः, स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः, उभयकीलकाय नमः' आदि छह मन्त्र पढ़ कर एक-एक मन्त्र के क्रम से शिर, मुख, हृदय, लिङ्ग, पाद तथा सर्वाङ्ग का स्पर्श करें। इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करने के पश्चात् षडङ्गन्यास करे। उसकी विधि इस प्रकार है—

षडङ्गन्यास—'अं-कं' से लेकर 'अः अस्त्राय फट्' पर्यन्त छह मन्त्र पढ़ कर क्रम से हृदय, शिर, शिखा, भ्रूमध्य सहित दोनों नेत्र का स्पर्श कर शिर के चारों ओर दाहिना हाथ घुमा कर दोनों हाथों से ताली बजावे।

करन्यास—इसी प्रकार 'अं-कं' से लेकर 'करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' पर्यन्त छह मन्त्रों को पढ़ कर हाथ के अँगूठे, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठिका आदि का स्पर्श कर दोनों हाथ के तलवे तथा पृष्ठभाग का स्पर्श करे।

ध्यानम्—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तसुखदोःपन्मध्यवक्षस्थलां
भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम् ।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं व्याख्यां च हस्ताम्बुजे-
बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये ॥"

अन्तर्मातृकान्यासः-अंइंउंऋंलृंएंऐंओंऔं नम इति धूम्राभे षोडशदले कण्ठे न्यसेत्, कंखंगंघंङंचंछंजंझंञंटंठं नम इति द्वादशदले प्रवालनिभे हृदये, डंढंणंतंथंदंधंनंपंफं नम इति नीलजीमूतसन्निभे दशदले नाभेरुपरि मणिपूरे, बंभंमंयंरंलं नम इति विद्युन्निभे षड्दले नाभेरधः स्वाधिष्ठान्ने, वंशंषंसं नम इति सुवर्णाभे चतुर्दले मूलाधारे, हंक्षं नम इति द्विदले चन्द्राभे भ्रूमध्ये आज्ञाचक्रे न्यसेत् ।

तदनन्तर 'पञ्चाशल्लिपिभिः' से 'वाग्देवतामाश्रये' पर्यन्त श्लोक पढ़ कर सरस्वती का ध्यान करे।

साधक को इसके बाद अन्तर्मातृकान्यास करना चाहिए, जो इस प्रकार है—'अं इं' से 'नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर धूम के समान (सोलह पत्ते वाले) कंठ प्रदेश में, 'कं-खं' से लेकर 'नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर बारह दल वाले मूँगे के वर्ण के समान हृदय-स्थल में, 'डं-ढं' से लेकर 'नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर काले बादल के समान दश पत्ते वाले नाभि से ऊपर मणिपुर चक्र में, फिर 'बं भं' से लेकर 'नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर बिजली के समान आकार वाले छह दल से युक्त नाभि के नीचे स्वाधिष्ठान चक्र में, पुनः 'वं शं-षं-सं' से 'नमः' तक मन्त्र पढ़ कर सुवर्ण के समान चार दल वाले मूलाधार में, '-हंक्षं' से 'नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर चन्द्रमा के समान आकार वाले द्विदल भ्रूमध्य स्थित आज्ञाचक्र में न्यास करना चाहिए।

सहस्रारे हिमनिभे सर्ववर्णविभूषिते ।
अकखादित्रिरेखासु आलक्षत्रयभूषिते ॥'
परविन्दुभ्यो नम इति न्यसेत् ।

मूलादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तं बिन्दुं चिदात्मकं ध्यात्वा, तत्स्रुत-सुधासारैर्मातृकां तर्पयेत् ।

ललाटे अं नमः, मुखवृत्ते आं नमः, दक्षनेत्रे इं नमः वामनेत्रे ईं नमः, दक्षकर्णे उं नमः, वामकर्णे ऊं नमः, दक्षनासायां ऋं नमः, वामनासायाम् ॠं नमः, दक्षगण्डे लृं नमः, वामगण्डे ॡं नमः, ऊर्ध्वौष्ठे एं नमः अधरोष्ठे ऐं नमः, ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ ओंनमः, अधोदन्तपंक्तौ औंनमः, शिरसि अं नमः, मुखे अः नमः ।

वीरचूडामणौ तु—जिह्वाग्रे अं नमः, कण्ठदेशे अः नमः, दक्षिणबाहुमूले कं नमः, कूर्परे खं नमः, मणिबन्धे गं नमः,

---

पुनः 'अ-क-ख' के समान रेखा वाले, 'आ-ल-क्ष' त्रिवर्ण से भूषित, सभी प्रकार के वर्णों से युक्त सहस्रारचक्र में 'परविन्दुभ्यो नमः' इस मन्त्र को पढ़कर न्यास करे ।

तदनन्तर मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्त स्थित विन्दु को चिदात्मक रूप से ध्यान कर उससे टपकते हुए अमृत द्वारा मातृकाओं का तर्पण करना चाहिए। पुनः 'अं नमः' से 'अः नमः' पर्यन्त सोलह मन्त्र पढ़कर ललाट, मुखवृत्त, दाहिने नेत्र, वामनेत्र, दाहिना कान, बाँयें कान, दाहिनी नासिका, बायीं नासिका, दाहिना गण्डस्थल, बाँयें गण्डस्थल, ऊपर का ओठ, नीचे का अधर, ऊपर की दन्तपंक्ति, नीचे की दन्तपंक्ति, शिर तथा मुख का स्पर्श करे ।

अङ्गुलीमूले घं नमः, अङ्गुल्यग्रे ङं नमः, वामबाहुमूले चं नमः, कूर्परे छं नमः, मणिबन्धे जं नमः, अङ्गुलीमूले झं नमः, अङ्गुल्यग्रे ञं नमः, दक्षिणोरुमूले टं नमः, जानुनि ठं नमः, गुल्फे डं नमः, अङ्गुलीमूले ढं नमः, अङ्गुल्यग्रे णं नमः, वामोरुमूले तं नमः, जानुनि थं नमः, गुल्फे दं नमः, अङ्गुलीमूले धं नमः, अङ्गुल्यग्रे नं नमः, दक्षपार्श्वे पं नमः, वामपार्श्वे फं नमः, पृष्ठे बं नमः, नाभौ भं नमः, उदरे मं नमः, हृदये यं त्वगात्मने नमः, दक्षांसे रं असृगात्मने नमः, ककुदि लं मांसात्मने नमः, वामांसे वं मेद आत्मने नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तं शं अस्थ्यात्मने नमः, हृदयाद् वामभुजाग्रान्तं षं मज्जात्मने नमः, हृदयाद् दक्षपादाग्रान्तं सं शुक्रात्मने नमः, हृदादिवामपादाग्रान्तं हं आत्मने नमः, हृदयान् मस्तकान्तं लं परमात्मने नमः।

इति बहिर्मातृकान्यासः।

सृष्टिक्रमः

तत्र तु विसर्गान्वितः प्रणवपुटितो वा मायालक्ष्मीबीजपूर्वो वा वाग्भवाद्यो वा न्यस्तव्यः। तत्र वाग्भवाद्यो यथा-जिह्वाग्रे

वीर चूडामणि नामक ग्रन्थ में बहिर्मातृका क्रम इस प्रकार है।

'जिह्वाग्रे अं नमः' से 'परमात्मने नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर बहिर्मातृका न्यास करे।

इस प्रकार बहिर्मातृका न्यास समाप्त।

तदनन्तर साधक को सृष्टिक्रमरूप न्यास करना चाहिए। उस में विसर्ग युक्त अकार अथवा प्रणव (ॐ) से सम्पुटित माया बीज, लक्ष्मी अथवा वाग्बीज से न्यास करे। उसमें वाग्बीज मन्त्र

ऐं अं नमः, कण्ठदेशतः ऐं अः नमः, दक्षिणबाहुमूले ऐं कं नमः,कूर्परे ऐं खं नमः, मणिबन्धे ऐं गं नमः, अङ्गुली-मूले ऐं घं नमः, अङ्गुल्यग्रे ऐं ङं नमः, वामबाहुमूले ऐं चं नमः, कूर्परे ऐं छं नमः, मणिबन्धे ऐं जं नमः, अङ्गुली-मूले ऐं झं नमः, अङ्ल्यग्रे ऐं ञं नमः, दक्षिणोरुमूले ऐं टं नमः, जानुनि ऐं ठं नमः, गुल्फे ऐं डं नमः, अङ्गुलीमूले ऐं ढं नमः, अङ्गुल्यग्रे ऐं णं नमः, वामोरुमूले ऐं तं नमः, जानुनि ऐं थं नमः,गुल्फे ऐं दं नमः,अङ्गुलीमूले ऐं धं नमः अङ्गुल्यग्रे ऐं नं नमः, दक्षपार्श्वे ऐं पं नमः, वामपार्श्वे ऐं फं नमः, पृष्ठे ऐं बं नमः, नाभौ ऐं भं नमः, उदरे ऐं मं नमः, हृदये ऐं यं त्वगात्मने नमः, दक्षांसे ऐं रं असृगात्मने नमः, ककुदि ऐं लं मांसात्मने नमः, वामांसे वं मेद आत्मने नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तम् ऐं शं अस्थ्यात्मने नमः, हृदयाद् वामभुजाग्रान्तम् ऐं षं मज्जात्मने नमः, हृदयाद् दक्षपादाग्रान्तम् ऐं सं शुक्रात्मने नमः, हृदादिवामपादा-ग्रान्तम् ऐं हं आत्मने नमः, हृदयान्मस्तकान्तम्, ऐं लं पर-मात्मने नमः ।

इति षडङ्गन्यासः ।

से न्यास की विधि—'जिह्वाग्रे ऐं अं नमः' से लेकर 'ऐं लं परमात्मने नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर तत्-तत् स्थानों पर न्यास करना चाहिए ।

इस प्रकार सृष्टिक्रम समाप्त ।

॥

स्थितिक्रमः

तत्र प्रथमं ध्यानं यथा—

'सिन्दूरकान्तिमसिता-भरणां त्रिनेत्रां
विद्याक्षसूत्र-मृगपोतवरां दधानाम् ।
पार्श्वस्थितां भगवतीमपि काञ्चनाङ्गीं
ध्यायेत् कराब्जधृतपुस्तकवर्णमालाम् ॥'

एवं ध्यात्वा न्यसेत् । तद्यथा—

ललाटे टंठंडं नमः, मुखवृत्ते टंठंडं नमः, दक्षनेत्रे टंठंडं नमः, वामनेत्रे टंठंडं नमः, दक्षकर्णे टंठंडं नमः, वामकर्णे टंठंडं नमः, दक्षनासायां टंठंडं नमः, वामनासायां टंठंडं नमः, दक्षगण्डे टंठंडं नमः, वामगण्डे टंठंड नमः, ऊर्ध्वौष्ठे टंठंडं नमः, अधरोष्ठे टंठंडं नमः, ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ टंठंड नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ टंठंडं नमः, शिरसि टंठंडं नमः, मुखे टंठंडं नमः, जिह्वाग्रे टंठंडं नमः, कण्ठदेशे टंठंडं नमः, दक्षिणबाहु-मूले टंठंडं नमः, कूर्परे टंठंडं नमः, मणिबन्धे टंठंडं नमः, अङ्गुलीमूले टंठंडं नमः, अङ्गुल्यग्रे टंठंडं नमः, वाम-बाहुमूले टंठंडं नमः, कूर्परे टंठंडं नमः, मणिबन्धे टंठंडं नमः, अङ्गुलीमूले टंठंडं नमः, दक्षिणोरुमूले टंठंडं नमः जानुनि टंठडं नमः, गुल्फे टंठंडं नमः, अङ्गुलीमूले टंठंडं नमः, अङ्गुल्यग्रे टंठंडं नमः, वामोरुमूले टंठंडं नमः,

---

तदनन्तर साधक को स्थिति क्रम के अनुसार न्यास करना चाहिए। इस न्यास में सर्वप्रथम 'सिन्दूरकान्ति' से 'पुस्तकवर्ण-मालाम्' पर्यन्त श्लोक पढ़कर श्री भगवती का ध्यान कर 'ललाटे

जानुनि टंढंडं नमः, गुल्फे टंठंडं नमः, अङ्गलीमूले टंठंडं नमः, अङ्गुल्यग्रे टंठंडं नमः, दक्षपार्श्वे टंठंडं नमः, वामपार्श्वे टंठंडं नमः, पृष्ठे टंठंडं नमः, उदरे टंठंडं नमः, हृदये टंठंडं नमः, दक्षांसे टंठंडं नमः, ककुदि टंठंडं नमः, वामांसे टंठंडं नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तं टंठंडं नमः, हृदयाद् वामभुजाग्रान्तं टंठंडं नमः, हृदयाद् वामपादाग्रान्तं टंठंडं नमः, ठं हृदयान्मस्तकान्तं टंठंडं नमः ।

इति स्थितिक्रमः ।

संहारक्रमः

तत्र ध्यानं यथा—

'अक्षस्रजं हरिणपोतमुदग्रटङ्कं
विद्याकरैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम् ।
अर्द्धेन्दुमौलिभरणामरविन्दवासां
वर्णेश्वरीं प्रणमतं स्तनभारखिन्नाम् ॥

तत्र क्रमः—ललाटे क्षं नमः, मुखवृत्ते हं नमः, दक्षनेत्रे सं नमः, वामनेत्रे षं नमः, दक्षकर्णे शं नमः, वामकर्णे वं नमः, दक्षनासायां लं नमः, वामनासायां रं नमः, दक्षगण्डे यं नमः, वामगण्डे मं नमः, ऊद्ध्वौष्ठे भं नमः, अधरोष्ठे वं नमः, ऊद्ध्र्वदन्तपङ्क्तौ फं नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ पं नमः, शिरसि नं नमः, मुखे धं नमः, दक्षिणबाहु-

---

टं-ठं-डं नमः से 'टंठंडं नमः' पर्यन्त मन्त्र का उच्चारण कर तत्तत्स्थानों को स्पर्श कर न्यास करना चाहिए।

इस प्रकार स्थितिक्रम समाप्त ।

संहारक्रम--तदनन्तर साधन को संहार क्रम रूप न्यास करना चाहिए। जो इस प्रकार है—इस संहारक्रम के न्यास में सर्वप्रथम 'अक्षस्रजं' से 'स्तनभारखिन्नाम्' पर्यन्त श्लोक पढ़ कर श्री महाकाली का ध्यान करे। तत्पश्चात् 'ललाटे क्षं नमः' से लेकर अं

मूले दं नमः, कूर्परे थं नमः, मणिबन्धे तं नमः, अङ्गुलीमूले णं नमः, अङ्गुल्यग्रे ढं नमः, वामबाहुमूले डं नमः कूर्परे ठं नमः, मणिबन्धे टं नमः, अङ्गुलीमूले ञं नमः, अङ्गुल्यग्रे झं नमः, दक्षिणोरुमूले जं नमः, जानुनि छं नमः, गुल्फे चं नमः, अङ्गुलीमूले ङं नमः, अङ्गुल्यग्रे घं नमः, वामोरुमूले गं नमः, जानुनि खं नमः, गुल्फे कं नमः, अङ्गुलीमूले अः नमः, अङ्गुल्यग्रे अं नमः, दक्षपार्श्वे औं नमः, वामपार्श्वे ओं नमः, पृष्ठे ऐं नमः, नाभौ एं नमः, उदरे लॄं नमः, हृदये लृं नमः, दक्षांसे ॠं नमः, ककुदि ऋं नमः, वामांसे ऊं नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तम् उं अस्थ्यात्मने नमः, हृदयाद् वामभुजाग्रान्तम् ईं मज्जात्मने नमः, हृदयाद् दक्षपादाग्रान्तम् इं शुक्रात्मने नमः, हृदयादिवामपादाग्रान्ताम् आं आत्मने नमः, हृदयान्मस्तकान्तम् अं परमात्मने नमः। इति संहारक्रमः।

श्रीकण्ठादिन्यासः

तत्र ध्यानं यथा—

अतिश्यामां त्रिनयनां शवासनसमुन्नताम्।
बिभ्रतीं विविधाकल्पां चतुर्दिक्षु शिवायुताम् ॥१॥
पाशा-ऽङ्कुशवराः-स्रक्पाणि शीतांशुशेखराम्।
त्र्यक्षं रक्तसुवर्णाभमर्द्धनारीश्वरं भजे' ॥२॥

शक्तिध्यानं यथा—

'एता रुद्राङ्कपीठस्थाः सिन्दूरारुणविग्रहाः।
रक्तोत्पलाः कपालाभ्यामलङ्कृतकराम्बुजाः॥''

परमात्मने नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर मूल में निर्दिष्ट अङ्गों का स्पर्श कर न्यास करना चाहिए।

इस प्रकार संहार क्रम समाप्त।

तदनन्तर श्रीकण्ठादि न्यास करे। उस न्यास में आरम्भ से पूर्व 'अतिश्यामां' से 'कराम्बुजाः' पर्यन्त श्लोक पढ़कर अर्धनारीश्वर एवं महाशक्ति का ध्यान करे।

इति रुद्रन्यासे ध्यानं कर्तव्यम् ।

अस्य श्रीकण्ठादिन्यासस्य दक्षिणामूर्तिऋषिर्गायत्रीछन्दोऽर्द्धनारीश्वरो देवता, श्रीकण्ठादिन्यासे विनियोगः ।

ललाटे अं श्रीकण्ठाय पूर्णोदर्य्यै नमः, मुखवृत्ते आं अनन्ताय वीर्यायै नमः, दक्षनेत्रे इं सूक्ष्मेशाय शाल्मल्यै नमः, वामनेत्रे ईं त्रिमूर्तये लोलाक्ष्यै नमः, दक्षकर्णे उं अमरेशाय वर्तुलाक्ष्यै नमः, वामकर्णे ऊं अर्घीशाय दीर्घघोणायै नमः, दक्षनासायाम् ऋं भारभूतये दीर्घमुख्यै नमः वामनासायाम् ॠं तिथीशाय गोमुख्यै नमः, दक्षगण्डे ऌं स्थाराधीशाय दीर्घजिह्वायै नमः, वामगण्डे ॡं हराय कुण्डोदर्यै नमः, उद्ध्वौंष्ठे एं झिणीशाय ऊद्ध्वंकेश्यै नमः, अधरोष्ठे ऐं भौक्तिकाय विकृतमुख्यै नमः, ऊद्ध्वंदन्तपङ्क्तौ ओं सद्योजाताय ज्वालामुख्यै नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ औं अनुग्रहेशाय उल्कामुख्यै नमः, शिरसि अं अक्रूराय श्रीमुख्यैं नमः, मुखे अः महासेनाय विद्यामुख्यै नमः ।

दक्षिणबाहुमूले कं क्रोधीशाय महाकाल्यै नमः, कूर्परे खं चण्डीशाय सरस्वत्यैं नमः, मणिबन्धे गं पञ्चान्तकाय गौर्य्यै नमः, अङ्गुलीमूले घं शिवोत्तमाय त्रैलोक्यविद्यायै नमः, अंगुल्यग्रे ङं एकरुद्राय मन्त्रशक्तये नमः, वामबाहुमूले चं कूर्मेशाय आत्मशक्त्यैं नमः, कूर्परे छं एकनेत्राय भूतिमात्रे नमः, मणिबन्धे जं चतुराननाय लम्बोदर्य्यै नमः, अङ्गुलीमूले झं अजेशाय द्राविण्यै नमः, अङ्गुल्यग्रे ञं सर्वेशाय नागर्य्यै नमः, दक्षिणोरुमूले टं सोमेशाय खेचर्य्यै नमः, जानुनि ठं लाङ्गलीशाय मञ्जर्यै नमः, गुल्फे डं डारकेशाय रूपिण्यै नमः, अङ्गुलीमूले ढं अर्द्धनारीशाय वीरिण्यै नमः, अङ्गुल्यग्रे णं उमाकान्ताय काकोदर्यै नमः, वामोरुमूले तं अषाढिने पूतनायै नमः, जानुनि थं दण्डिने भद्रकाल्यै नमः, गुल्फे दं अत्रीशाय योगिन्यै नमः,

---

पुनः हाथ में जल लेकर 'अस्य' से 'विनियोगः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर उस जल को छोड़ दे ।

अङ्गुलीमूले धं मीनेशाय शंखिन्यै नमः अङ्गुल्यग्रे नं मेषेशाय गर्जिन्यै नमः दक्षपार्श्वे पं लोहिताय कालरात्र्यै नमः वामपार्श्वे फं शिखीशाय वकूर्दिन्यै नमः, पृष्ठे बं छगलण्डाय कपर्दिन्यै नमः, नाभौ भं द्विरण्डेशाय वज्रायै नमः, उदरे मं महाकालाय जयायै नमः, हृदये यं वाणीशाय सुमुखेश्वर्यै नमः, दक्षांसे रं भुजङ्गाय रेवत्यै नमः, ककुदि लं पिनाकिने माधव्यै नमः, वामांसे वं षड्गीशाय वारुण्यै नमः, हृदयाद्दक्षभुजाग्रान्तं शं बकेशाय वायव्यै नमः, हृदयादिवामभुजाग्रान्तं षं श्वेताय रक्षोविदारिण्यै नमः, हृदयाद्दक्षपादाग्रान्तं सं भृगवे सहजायै नमः, हृदादिवामपादाग्रान्तं हं नकुलीशाय लक्ष्म्यै नमः, हृदयान् मस्तकान्तं क्षं संवर्त्तकाय महामायायै नमः ।

इति श्रीकण्ठादि (रुद्र) न्यासः समाप्तः ।

षोढान्यासः

मातृकान्यासः प्रथमः-यथा-अंआंइंईंउंऊंऋं ॠं ऌं ॡं नमो हृदि, एंऐंओंऔंअंअःकंखंगंघं दक्षभुजे, ङंचंछंजंझंञंटंठंडंढं वामभुजे, णंतंथंदंधंनंपंफंबंभं दक्षपादे, मंयंरंलंवंशंषंसंहंळंक्षं इति वामपादे विन्यसेत् । इति मातृकान्यासः प्रथमः ।

पुनः 'ललाटे अं' से लेकर 'महामायायै नमः' पर्यन्त पढ़कर तत्तदङ्गों का स्पर्श करते हुए रुद्रन्यास करे ।

इस प्रकार श्रीकण्ठादि (रुद्र) न्यास समाप्त ।

पुनः कालीतन्त्रोक्त विधि से छह प्रकार का न्यास करे। जो इस प्रकार है—सर्वप्रथम मातृका न्यास 'अं आं' से 'लं क्षं' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर हृदय, दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, दाहिना पैर एवं बायें पैर का स्पर्श कर मातृका न्यास करे ।

द्वितीयन्यासः

ललाटे श्रींअंश्रींअंश्रींअं नमः, मुखवृत्ते श्रींआंश्रींआंश्रींआं नमः, दक्षनेत्रे श्रींइंश्रींइंश्रींइं नमः, वामनेत्रे श्रींईंश्रींईंश्रींईं नमः, दक्षकर्णे-श्रींउंश्रींउंश्रींउं नमः, वामकर्णे श्रींऊंश्रींऊंश्रींऊं नमः, दक्षनासायां श्रींऋंश्रींऋंश्रींऋं नमः, वामनासायां श्रींॠंश्रींॠंश्रींॠं नमः, दक्ष-गण्डे श्रींऌंश्रींऌंश्रींऌं नमः, वामगण्डे श्रींॡंश्रींॡंश्रींॡं नमः, ऊद्-र्ध्वोष्ठे श्रींएंश्रींएंश्रींएं नमः, अधरोष्ठे श्रींऐंश्रींऐंश्रींऐं नमः, ऊर्ध्वदन्त-पङ्क्तौ श्रींओंश्रींओंश्रींओं नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ श्रींऔंश्रींऔंश्रींऔं नमः, शिरसि श्रींअंश्रींअंश्रींअं नमः, मुखे श्रींअःश्रींअःश्रींअः नमः दक्षिणबाहुमूले श्रींकंश्रींकंश्रींकं नमः, कूर्परे श्रींखंश्रींखंश्रींखं नमः, मणिबन्धे श्रींगंश्रींगंश्रींगं नमः, अङ्गुलीमूले श्रींघंश्रींघंश्रींघं नमः; अङ्गुल्यग्रे श्रींङंश्रींङंश्रींङं नमः, वामबाहुमूले श्रींचंश्रींचंश्रींचं नमः, कूर्परे श्रींछंश्रींछंश्रींछं नमः, मणिबन्धे श्रींजंश्रींजंश्रींजं नमः, अङ्गुलीमूले श्रींझंश्रींझंश्रींझं नमः, अङ्गुल्ग्रे श्रींञंश्रींञंश्रींञं नमः, दक्षिणोरुमूले श्रींटंश्रींटंश्रींटं नमः, जानुनि श्रींठंश्रींठंश्रींठं नमः, गुल्फे श्रींडंश्रींडंश्रींडं नमः, अङ्गुलीमूले श्रींढंश्रींढंश्रींढं नमः, अङ्गुल्यग्रे श्रींणंश्रींणंश्रींणं नमः, वामोरुमूले श्रींतंश्रींतंश्रींतं नमः; जानुनि श्रींथंश्रींथंश्रींथंनमः,गुल्फे श्रींदंश्रींदंश्रींदं नमः,अङ्गुलीमूलेश्रींधं-श्रींधंश्रींधं नमः,अङगुल्यग्रे श्रींनंश्रींनंश्रींनं नमः, दक्षपार्श्वेश्रींपंश्रींपंश्रींपं

द्वितीय न्यास में 'श्रीं अं' से लेकर 'श्रीं क्षं परमात्मने नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर तत्तदङ्गों का स्पर्श करते हुए द्वितीय मातृका न्यास करना चहिए।

नमः, श्रींफंश्रींफंश्रींफं नमः, पृष्ठे श्रींबंश्रींबंश्रींबं नमः, नाभौ श्रींभंश्रींभंश्रींभं नमः, उदरे श्रींमंश्रींमंश्रींमं नमः, हृदये श्रींयंश्रींयंश्रींयं त्वगात्मने नमः, दक्षांसे श्रींरंश्रींरंश्रींरं असृगात्मने नमः, ककुदि श्रींलंश्रींलंश्रींलं मांसात्मने नमः, वामांसे श्रींवंश्रींवंश्रींवं मेद आत्मने नमः,हृदयाद्दक्षभुजाग्रान्तं श्रींशंश्रींशंश्रींशं अस्थात्मने नमः, हृदयाद्वामभुजाग्रान्तं श्रींषंश्रींषंश्रींषं मज्जात्मने नमः, हृदयाद्दक्षापादाग्रान्तं श्रींसंश्रींसंश्रींसं शुक्रात्मने नमः; हृदादिवामपादाग्रान्तं श्रींहंश्रींहंश्रींह आत्मने नमः,हृदयान्मस्तकान्तं श्रींक्षंश्रींक्षंश्रींक्षं परमात्मने नमः। इति द्वितीयन्यासः।

तृतीयन्यासः

ललाटे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, मुखवृत्ते श्रींक्लींश्रींक्लींश्रींक्लीं नम, दक्षनेत्रे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, वामनेत्रे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, दक्षकर्णे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, वामकर्णे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, दक्षनासायां क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, वामनासायां क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, दक्षगण्डे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, वामगण्डे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः ऊद्ध्वोंष्ठे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः अधरोष्ठे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, शिरसि क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, मुखे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, दक्षिणबाहुमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं

तदनन्तर तृतीय मातृका न्यास करे। इस न्यास में 'ललाले क्लींश्रीं क्लींश्रींक्लींश्रीं से लेकर क्लींश्रीं नमः' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़कर मूल में निर्दिष्ट तत्तदङ्गों का स्पर्श करते हुए न्यास करना चाहिए।

नमः, कूर्परे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, मणिबन्धे क्लींश्रींक्लींश्रीं-क्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, वामबाहुमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, कूर्परे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः,मणिबन्धे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे क्लींश्रींक्लींश्रीं-क्लींश्रीं नमः,दक्षिणोरुमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः,जानुनि क्लींश्रीं-क्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, गुल्फे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले क्लींश्रीक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः,अङ्गुल्यग्रे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः,वामोरुमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, जानुनि क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, गुल्फे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः,दक्षपार्श्वे क्लींश्रींक्लींश्रीं-क्लींश्रीं नमः, वामपार्श्वे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, पृष्ठे क्लींश्रीं-क्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, नाभौ क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, उदरे क्लींश्रीं-क्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, हृदये क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, दक्षांसे क्लींश्रीं-क्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, ककुदि क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, वामांसे क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, हृदयाद्दक्षभुजाग्रान्तं क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, हृदयाद्वामभुजाग्रान्तं क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, हृदयाद्दक्ष-पादाग्रान्तं क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, हृदादिवामपादाग्रान्तं क्लींश्रीं-क्लींश्रींक्लींश्रीं नमः, हृदयान्मस्तकान्तं क्लींश्रींक्लींश्रींक्लींश्रीं नमः।

इति तृतीयन्यासः।

चतुर्थन्यासः

ललाटे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, मुखवृत्ते ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षनेत्रे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामनेत्रे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षकर्णे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामकर्णे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षनासायां ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामनासायां ह्लींश्रींह्लीं-श्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षगण्डे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामगण्डे ह्लींश्रीं-

ह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, उद्र्ध्वोष्ठे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अधरोष्ठे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, ऊद्र्ध्वदन्तपङ्क्तौ ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, शिरसि ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, मुखे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षिणबाहुमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, कूर्परे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, मणिबन्धे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामबाहुमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, कूर्परे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः,मणिबन्धे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः,अङ्गुलीमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षिणोरुमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, जानुनि ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, गुल्फे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामोरुमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुलीमूले ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, अङ्गुल्यग्रे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, दक्षिणपार्श्वे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामपार्श्वे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, पृष्ठे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, नाभौ ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, उदरे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, हृदये ह्लींश्रींह्लींश्रीं-ह्लींश्रीं नमः, दक्षांसे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, ककुदि ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, वामांसे ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तं ह्लींश्रींह्लींश्रीं-ह्लींश्रीं नमः, हृदयाद्वामभुजाग्रान्तं ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः,हृदयादि-वामपादाग्रान्तं ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः, हृदयान्मस्तकान्तं ह्लींश्रींह्लींश्रींह्लींश्रीं नमः ।

इति चतुर्थन्यासः ।

पुनः चतुर्थ न्यास करना चाहिए । इस चतुर्थ न्यास में 'ह्लीं श्रीं ह्लीं से 'ह्लीं श्रीं नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर मूल में निर्दिष्ट सभी अङ्गों का स्पर्श करते हुये न्यास करे ।

पञ्चमन्यासः

ललाटे मूले ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, मुखवृत्ते मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, दक्षनेत्रे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, वामनेत्रे मूलं ह्रां ह्रां ॠं-ॠं क्लूं नमः, दक्षकर्णे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, वामकर्णे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, दक्षनासायां मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, वामनासायां मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, दक्षगण्डे मूलं ह्रां ह्रां ॠं-ॠं क्लूं नमः, वामगण्डे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, उद्र्ध्वौष्ठे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अधरोष्ठे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, ऊर्ध्व-दन्तपङ्क्तौ मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ मूलं ह्रां ह्रां-ॠं ॠं क्लूं नमः, दक्षिणबाहुमूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, कूर्परे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, मणिबन्धे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं ह्रां ह्रां ॠं-ॠं क्लूं नमः, वामबाहुमूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, कूर्परे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, मणिबन्धे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अङ्गुली-मूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, दक्षिणोरुमूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, जानुनि मूलं ह्रां ह्रां-ॠं ॠं क्लूं नमः, गुल्फे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, वामोरु-मूले मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः, जानुनि मूलं ह्रां ह्रां ॠं ॠं क्लूं नमः,

---

तत्पश्चात् पञ्चम न्यास में 'ह्रां ह्रां ॠं ॠं' से 'ॠं ॠं क्लूं नमः' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़कर मन्त्रोक्त अङ्गों का स्पर्श कर न्यास करे।

गुल्फे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, दक्षपार्श्वे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, वामपार्श्वे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, पृष्ठे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, नाभौ मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, उदरे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, हृदये मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, दक्षांसे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, ककुदि मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, वामांसे मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, हृदयाद्दक्षपादाग्रान्तं मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, हृदयाद्-वामभुजाग्रान्तं मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, हृदयाद्दक्षपादाग्रान्तं मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, हृदयादि-वामपादाग्रान्तं मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः, हृदयान्मस्तकान्तं मूलं ह्रांह्रांऋंऋंक्लूं नमः।

इति पञ्चमन्यासः।

षष्ठन्यासः

ललाटे मूलं नमः, मुखवृत्ते मूलं नमः, दक्षनेत्रे मूलं नमः, वामनेत्रे मूलं नमः, दक्षकर्णे मूलं नमः, वामकर्णे मूलं नमः, दक्षनासायां मूलं नमः, वामनासायां मूलं नमः, दक्षगण्डे मूलं नमः, वामगण्डे मूलं नमः, ऊद्ध्वोष्ठे मूलं नमः, अधरोष्ठे मूलं नमः, ऊद्ध्वदन्तपङ्क्तौ मूलं नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ मूलं नमः, शिरसि मूलं नमः, मुखे मूलं नमः, दक्षिणबाहुमूले मूलं नमः, कूर्परे मूलं नमः, मणिबन्धे मूलं नमः,

अङ्गुलीमूले मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, वामबाहुमूले मूलं नमः, कूर्परे मूलं नमः, मणिबन्धे मूलं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, दक्षिणोरुमूले मूलं नमः, जानुनि मूलं नमः, गुल्फे मूलं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, वामोरुमूले मूलं नमः, जानुनि मूलं नमः, गुल्फे मूलं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, दक्षपार्श्वे मूलं नमः, वामपार्श्वे मूलं नमः, पृष्ठे मूलं नमः, नाभौ मूलं नमः, उदरे मूलं नमः, हृदये मूलं नमः, दक्षांसे मूलं नमः, ककुदि मूलं नमः, वामांसे मूलं नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तं मूलं नमः, हृदयाद्_वामभुजाग्रान्तं मूलं नमः, हृदयाद् दक्षपादाग्रान्तं मूलं नमः, हृदादि-वामपादाग्रान्तं मूलं नमः, हृदयान्मस्तकान्तं मूलं नमः ।

इति षष्ठन्यासः समाप्तः ।

(इत्यनुलोमन्यासप्रकारः ।)

तदनन्तर षष्ठ न्यास में 'ललाटे मूलं नमः' से 'मूलं नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर ललाट से मस्तक पर्यन्त सभी अङ्गों का स्पर्श करते हुए न्यास करना चाहिए ।

इस प्रकार षष्ठमातृका न्यास के अन्तर्गत

अनुलोम न्यास प्रकार समाप्त ।

विलोमन्यासः

हृदयान्मस्तकान्तम् मूलं नमः, हृदयादि-वामपादाग्रान्तम् मूलं नमः, हृदयाद् दक्षपादाग्रान्तम् मूलं नमः, हृदयाद् वाम-भुजाग्रान्तम् मूलं नमः, हृदयाद् दक्षभुजाग्रान्तम् मूलं नमः, बामांसे मूलं नमः, ककुदि मूलं नमः, दक्षांसे मूलं नमः, हृदये मूलं नमः, उदरे मूलं नमः, नाभौ मूलं नमः, पृष्ठे मूलं नमः, वामपार्श्वे मूलं नमः, दक्षपार्श्वे मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं नमः, गुल्फे मूलं नमः, जानुनि मूलं नमः, वामोरुमूले मूलं नमः, अङ्ल्यग्रे मूलं नमः, अङ्गुली-मूले मूलं नमः, गुल्फे मूलं नमः, जानुनि मूलं नमः, दक्षि-णोरुमूले मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, अङ्गलीमूले मूलं नमः, मणिबन्धे मलं नमः, कूर्परे मूलं नमः, वामबाहुमले मूलं नमः, अङ्गुल्यग्रे मूलं नमः, अङ्गुलीमूले मूलं नमः, मणिबन्धे मूलं नमः, कूर्परे मूलं नमः, दक्षिणबाहुमूले मूलं नमः, मुखे मूलं नमः, शिरसि मूलं नमः, अधोदन्तपङ्क्तौ मूलं नमः, ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ मूलं नमः, अधरोष्ठे मूलं नमः, ऊर्ध्वोष्ठे मूलं नमः, वामगण्डे मूलं नमः, दक्षगण्डे मूलं नमः, वामनासायां मूलं नमः, दक्षनासायां मूलं नमः,

---

तदनन्तर साधक को विलोम न्यास करना चाहिए, जिसमें हृदय से लेकर मस्तक पर्यन्त अङ्ग का प्रथम स्पर्श करे, अन्त में 'ललाटे मूलं नमः' पर्यन्त अङ्ग का स्पर्श कर एक सौ आठ बार मूल मन्त्र को पढ़ कर व्यापक न्यास करे। यहाँ यह ध्यान रहे कि षष्ठ अनुलोम

वामकर्णे मूलं नमः, दक्षकर्णे मूलं नमः, वामनेत्रे मूलं नमः, दक्षनेत्रे मूलं नमः, मुखवृत्ते मूलं नमः, ललाटे मूलं नमः। अष्टोत्तरशतसङ्ख्यकमूलेन व्यापकन्यासं कुर्यादिति षष्ठः।

इति विलोमन्यासः।

तत्त्वन्यासः

तद्यथा—पादादि-नाभिपर्यन्तं क्रींक्रींक्रींह्रींह्रींहूंहूं ॐ आत्मतत्त्वाय नमः, नाभ्यादि-हृदयपर्यन्तं दक्षिणे कालिके ॐ विद्यातत्त्वाय नमः, हृदादि-शिरःपर्यन्तं क्रींक्रींक्रींह्रींह्रींहूंहूं स्वाहा ॐ शिवतत्त्वाय नमः।

इति तत्त्वन्यासः।

नामक न्यास में ललाट से लेकर हृदय से मस्तक-पर्यन्त समन्त्र स्थान का निर्देश किया गया है, किन्तु विलोम न्यास में हृदय से मस्तक पर्यन्त स्थान का स्पर्श प्रथम कह कर ललाट के स्पर्श का मन्त्र अन्त में कहा है। इसीलिए इसे विलोम न्यास कहते हैं।

पुनः तत्त्व न्यास करना चाहिए। 'क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं ॐ आत्मतत्त्वाय नमः' मन्त्रोच्चारण कर पैर से नाभिपर्यन्त तथा 'दक्षिणे कालिके ॐ विद्यातत्त्वाय नमः' मन्त्र पढ़ कर नाभि से हृदय पर्यन्त, एवं 'क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा ॐ शिवतत्त्वाय नमः' मन्त्र पढ़ कर हृदय से शिर-पर्यन्त अङ्गों का स्पर्श कर तत्त्वन्यास करे।

बीजन्यासः

तथा हि—ब्रह्मरन्ध्रे क्रीं नमः, भ्रूमध्ये क्रीं नमः, ललाटे क्रीं नमः, नाभौ ह्रीं नमः, गुह्ये ह्रीं नमः, वक्त्रे हूं नमः, गुर्वङ्गे हूं नमः । इमौ न्यासौ ।

'क्रींक्रींक्रींह्रींह्रींहूंहूं दक्षिणे कालिके क्रींक्रींक्रींह्रींह्रींहूंहूं स्वाहा' इति विद्याबीजेन, ततो मूलेन नवधा सप्तधा पञ्चधा व्यापकन्यासं कुर्यात् । ततो ध्यानं कुर्यात्, तद्यथा—

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला-विभूषिताम् ॥१॥
सद्यश्छिन्नशिरः-खड्ग-वामोर्ध्वाऽधः-कराम्बुजाम् ।
अभयं वरदं चैव दक्षिणाधोर्ध्वपाणिकाम् ॥ २ ॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ।
कण्ठावसक्त - मुण्डाली - गलद्रुधिर - चर्चिताम् ॥ ३ ॥

साधक को इसके अनन्तर बीजन्यास करना चाहिए। ब्रह्मरन्ध्र में 'क्री नमः' से 'गुर्वङ्गे हूं नमः' पर्यन्त मन्त्रोच्चारण कर तत्तदङ्गों का स्पर्श करते हुए बीजन्यास करे। इस प्रकार तत्त्वन्यास तथा बीज न्यास की प्रक्रिया सम्पन्न करे।

'क्रीं क्रीं क्रीं' से हूं हूं स्वाहा' पर्यन्त विद्या-बीज का उच्चारण करते हुए मूल मन्त्र से सात बार, पाँच बार एवं नव बार व्यापक न्यास करे।

व्यापक न्यास के आरम्भ में 'करालवदनां' से 'सर्वकामार्थसिद्धये' पर्यन्त आठ श्लोकों को पढ़ कर दक्षिण महाकाली का ध्यान करे।

कर्णावतंसतानीत - शवयुग्मभयानकाम् ।
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ॥ ४ ॥
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ।
सृक्कद्वय-गलद्रक्त-धारा-विस्फुरिताननाम् ॥ ५ ॥
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ।
दन्तुरां दक्षिणव्यापि-लम्बमान-कचोच्चयाम् ॥ ६ ॥
शवरूपमहादेव-हृदयोपरि - संस्थिताम् ।
शिवाभिर्घोररूपाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ॥ ७ ॥
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम् ।
एवं सञ्चिन्तयेद् देवीं सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ८ ॥

ततः समस्तकिल्विषरहितं निर्मलदेहं विचिन्त्य, आत्मानं देवीरूपं विभावयेत् । ततः पीठदेवतायाः स्वदेहं पीठमयं विभावयेत् । तद्यथा-'आधारे मण्डूकाय नमः, स्वाधिष्ठाने कालाग्निरुद्राय नमः, नाभौ कच्छपाय नमः, हृदये ॐ आधार-शक्तये नमः, कूर्माय नमः, धरायै नमः, सुधासमुद्राय नमः, कपवृक्षाय नमः, मणिहर्याय नमः, हेमपीठाय नमः, इति हृदये न्यसेत् । दक्षबाहौ धर्माय नमः, वामे ज्ञानाय नमः,

---

पश्चात् समस्त अपने शरीर को पाप-रहित एवं विशुद्ध समझ कर अपने में देवी-रूप की कल्पना करे। पुनः अपने शरीर में पीठ देवता के पीठ की कल्पना करे। वह इस प्रकार है—'आधारे मण्डूकाय नमः' से 'हेमपीठाय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर तत्तत्स्थानों का स्पर्श कर न्यास करे। फिर 'दक्षबाहौ धर्माय नमः' से 'हृदि सं सत्त्वाय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर तत्तदङ्गों का स्पर्श

वामोरौ वैराग्याय नमः, दक्षोरौ ऐश्वर्याय नमः, वदने अधर्माय नमः, वामपार्श्वे अज्ञानाय नमः, नाभौ अवैराग्याय नमः, दक्षिणपार्श्वे अनैश्वर्याय नमः, हृदि सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, तपिन्यादिकलाभ्यो नमः, अमृतादिकलाभ्यो नमः, धूम्रार्चिकलाभ्यो नमः, आं आत्मने नमः, अः अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः, मां मायातत्त्वाय नमः, कं कलातत्त्वाय नमः, विं विद्यातत्त्वाय नमः, पं परतत्त्वाय नमः, श्मशानाय नमः, मुनिभ्यो देवेभ्यो नमः, बहुमांसास्थिमोदमानाभ्यः शिवाभ्यो नमः, शवमुण्डचिताङ्गारेभ्यो नमः, ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः ॐ नित्यायै नमः,ॐ विलासिन्यै नमः,ॐ दोग्ध्र्यै नमः,ॐ अघोरायै नमः, ॐ मङ्गलायै नमः, ततः ह्सौं महाप्रेतपद्मासनाय नमः ।

एवं देहमयं पीठं विभाव्य, प्रातःकृत्योक्तप्रकारेण कुण्डल्युत्थानादि कृत्वा, देवीं ध्यात्वा, तत्तन्मुद्रां प्रदर्श्य मानसैरुपचारैर्देवीं पूजयेत् ।

इति बीजन्यासः समाप्तः ।

करे। 'रं रजसे नमः' से लेकर 'महाप्रेतपद्मासनाय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर तत्तद्देवताओं को नमस्कार करे। इस प्रकार अपने शरीर को देवता का पीठ स्वरूप समझते हुए प्रातःकृत्य में कहे गये विधि के अनुसार कुण्डलिनी का उत्थान कर देवी का ध्यान करते हुए तत्तन्मुद्राओं को प्रदर्शित कर मानसोपचार से उनका पूजन करे।

इस प्रकार बीजन्यास समाप्त।

मानसपूजाविधिः

तद्यथा—मूलाधारे ध्वजाधोगुदोर्ध्वे चतुःशोणपत्रे वंशंषं समितिसहिते प्रसुप्तभुजगाकारां स्वयम्भूलिङ्गवेष्टिनीं ध्यायेत् । तद्यथा–

ध्यायेत् कुण्डलिनीं सूक्ष्मां मूलाधारनिवासिनीम् ।
प्रसुप्तभुजगाकारां विद्युत्पटलसन्निभाम् ॥ १ ॥
तामिष्टदेवतारूपां सार्द्धत्रिवलयान्विताम् ।
कोटिसौदामिनीभासां स्वयम्भूलिङ्गवेष्टिनीम् ॥ २ ॥
तामुत्थाप्य महादेवीं हंसंमन्त्रेण साधकः ।
उद्यद्दिनकरद्योतां यावच्छ्वास दृढासनः ॥ ३ ॥
अशेषाशुभशान्त्यर्थं समाहितमनाश्चिरम् ।
तत्प्रभापटलव्याप्तं शरीरमपि चिन्तयेत् ।
सुषुम्नावर्त्मनैवैनां परब्रह्मणि योजयेत् ॥ ४ ॥

तत्र परब्रह्मणि सङ्गमय्य, ततश्चन्द्रमण्डलान्तर्गताऽमृत-धारां निपीय, तया लोलीभूतां चैतन्यमयीं चरणयुगलान्तर्विग-

---

तदनन्तर मानस-पूजन करे, जो इस प्रकार है-मूलाधार में ध्वज के नीचे एवं गुदा के ऊपर भाग में स्थित 'वं शं षं सं' इस मातृका के सहित चार लाल पत्ते वाले स्थान में सोयी हुई सर्पिणी के समान स्वयंभू लिङ्ग को वेष्टित करती हुई मूलाधार में निवास करने वाली कुण्डलिनी का 'ध्यायेत् कुण्डलिनीं' से 'परब्रह्मणि योजयेत्' पर्यन्त चार श्लोक पढ़ कर ध्यान करे। और उसकी प्रभा से अपने शरीर को आलोकित करते हुए उसे परब्रह्म के साथ संगम कर, चन्द्रमण्डल से चूती हुई अमृतधारा को पिला कर, उससे चञ्चल

लितैरमृतनिवहैः प्रपञ्चं सिञ्चतीं मूलाधारमानयेत् । आत्मानं शुद्धचैतन्यानन्दमयं देवतारूपं विभावयेत् ।

ततो मूलाधारात् कुण्डलिनीं हंसमन्त्रेणोत्थाप्य, द्वादशदले हृदयसरसिजे, षड्बिन्दुलाञ्छित-कादि-चान्तसहिते गत्वा, प्रदीपकलिकाकारजीवरूपां द्वितीयं प्रदीपकलिकामाकृष्य, स्वमुखे निःक्षिप्तवतीं परब्रह्मणि सङ्गमय्य, पुनर्हृदयदेशमानीय, तन्मुखात् प्रदीपकलिकां विनिष्कृष्य, मूलाधारे संस्थापयेत् । तां प्रदीपकलिकां देवतारूपां ध्यायेत् । तद्यथा—

'मेघाङ्गीं विगताम्बरां शवशिवारावां त्रिनेत्रां परां
कर्णालम्बितबालयुग्मभयदां मुण्डस्रजामालिनीम् ।

हुई चैतन्य स्वरूपा तथा स्वचरण प्रान्त से टपकते हुए दोनों पैरों के अमृत से सारे संसार रूप प्रपञ्च को सिञ्चित करती हुई उस कुण्डलिनी को मूलाधार में स्थापित करे । इस प्रकार अपने नाभि में कुण्डलिनी को स्थापित कर स्वयं को शुद्ध चैतन्यानन्द देवता रूप की कल्पना करे ।

पुनः मूलाधार से उस कुण्डलिनी को हंसं' इस मन्त्र से ऊपर उठा कर द्वादश दल वाले, 'क' से लेकर 'च' पर्यन्त षड्विन्दुलाञ्छित हृदय-प्रदेश में जाकर दीप की लौ के समान जलती हुई द्वितीय दीपकलिका को खींच कर अपने मुख में डालती हुई उस कुण्डलिनी को (सहस्रार में स्थित) परब्रह्म से युक्त कर, पुनः उसे हृदयदेश में लाकर उसके मुख में पड़ी हुई दीपकलिका को खींच कर मूलाधार में स्थापित करे । और उस दीपकलिका को देवता रूप से 'मेघाङ्गीं' से लेकर 'सदा कालिकाम्' पर्यन्त श्लोक पढ़ते हुए

वामाधोर्द्ध्वकराम्बुजे नरशिरः खड्गं च सव्येतरे
दानाभीति-विमुक्तकेश-निचयां वन्दे सदा कालिकाम् ।'

इति ध्यात्वा, तत्तन्मुद्रां प्रदर्श्य,मानसैरुपचारैः पूजयेत् । तत्र प्रार्थयेदनेन मन्त्रेण ।

'ॐ स्वागतं देवदेवेशि सन्निधौ भव कालिके ।
गृहाण मानसीं पूजां यथार्थपरिभाषिताम् ॥'

ततोऽष्टोत्तरशतं वर्णमय्या मालया जपेत् ।

इति मानस-पूजाविधिः ।

बहिःपूजा-विधिः

तत्र प्राणायाम-षडङ्गन्यासादि कुर्यात् । तद्यथा—क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा, क्रूं शिखायै वषट्, क्रैं कवचाय हुम्, क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्रः अस्त्राय फट् । इति छोटिकया दिग्बन्धनं कुर्यात् । एवं करन्यासः ।

क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्रूं मध्यमाभ्यां वौषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हुम्, क्रौं कनिष्ठिकाभ्यां

ध्यान करे। फिर तत्तन्मुद्रायें प्रदर्शित कर उस दीपकलिका का मानसोपचार से पूजन करे और 'ॐ स्वागत' से 'परिभाषिताम्' पर्यन्त श्लोक का पाठ कर प्रार्थना करे। तथा वर्णमयी माला से एक सौ आठ बार (देवी के मूलमन्त्र का) जप करे।

इस प्रकार मानसोपचार की विधि समाप्त।

बहिःपूजा-विधान—सर्वप्रथम प्राणायाम एवं षडङ्गन्यास करे। उसकी विधि इस प्रकार है—'क्रां हृदयाय नमः' से प्रारम्भ कर 'क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्', पढ़ कर करन्यास तथा इसी प्रकार

वौषट्, कः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । एवं न्यासादिकं कृत्वा, 'आः सुरेखे वज्ररेखे हूँ फट् स्वाहा' अनेन मन्त्रेण कुङ्कुम-सिन्दूरादिभिः सौवर्ण-राजत-ताम्र-स्फाटिक-वैद्रूमाद्यन्यतम-पात्रे षट्कोणत्रिकोणाऽष्टदल-भूपुरात्मकं यन्त्रं लिखेत् । तदुक्तं रुद्रयामले—

'ततः कुङ्कुम-सिन्दूरैः कार्यं यन्त्रं तु योगिनाम् ।
सौवर्णे राजते ताम्रे स्फाटिके वैद्रुमे तथा ।
चक्रे यथोक्तविधिना पूज्या देवी नरोत्तमैः ॥'

सारसङ्ग्रहेऽपि—

'ताम्रे द्वादशकं वर्षं स्फाटिकादौ तु सर्वदा ।
तेषां मध्ये स्फाटिकं तु सर्वसिद्धिप्रदं भवेत् ॥' इत्यादि ।

हृदयादिन्यास करे । पुनः 'आः सुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से कुङ्कुम, सिन्दूरादि द्वारा सुवर्ण, चाँदी, ताम्र, स्फटिक एवं मूँगा आदि में किसी से बने हुए पात्र में षट्कोण त्रिकोण युक्त अष्टदल तथा भूपुरयुक्त यन्त्र लिखे । जैसा कि रुद्रयामल में कहा गया है—

सुवर्ण, चाँदी, ताम्र, स्फटिक एवं मूँगे से बने हुए चक्र में कुंकुम, सिन्दूर के द्वारा देवी का यन्त्र लिखे और उस यन्त्र का शास्त्रीय रीति से पूजन करना चाहिए ।

सारसंग्रह में भी इसी प्रकार का वचन है--ताम्र में लिखा हुआ यन्त्र बारह वर्ष पर्यन्त फल देता है, किन्तु स्फटिक पात्र में बना हुआ यन्त्र सदैव फलप्रद होता है । अतः स्फटिक निर्मित पात्र में बनाया गया यन्त्र सभी सिद्धियों को देने वाला होता है ।

तन्त्रान्तरेऽपि—

'यावज्जीवं सुवर्णे स्याद्रौप्ये द्वाविंशति प्रिये ! ।
ताम्रे द्वादशवर्षान्तं तदर्द्धं भूर्जपत्रके ॥ १ ॥
एकतोलं द्वितोलं वा त्रितोलं वेदतोलकम् ।
स्वेच्छातोलं नरः कृत्वा प्रत्यवायं समश्नुते ॥ २ ॥'

इति बहिःपूजा-विधिः समाप्तः ।

अर्घ्यस्थापनविधिः

तद्यथा—आत्मयन्त्रयोर्मध्ये त्रिकोणवृत्तषट्कोणचतुरस्रमण्डलं विरचय, ईमिति विलिख्य, मूलखण्डत्रयेण त्रिकोणं सम्पूज्य, षट्कोणेषु षडङ्गं सम्पूज्य, चतुरस्रे 'पूर्णगिरिपीठाय नमः' इति पूर्वे, उड्डीयानपीठाय नमः इति दक्षिणे, 'कामरूपपीठाय नमः' इति पश्चिमे, 'जालन्धरपीठाय नमः'

तन्त्रान्तर में भी-हे प्रिये ! सुवर्ण पात्र में बना हुआ यन्त्र जीवन पर्यन्त, चाँदी में बाईस वर्ष तथा ताम्र से बना हुआ यन्त्र बारह वर्ष पर्यन्त एवं भोजपत्र पर निर्मित यन्त्र छह वर्ष तक फलप्रद होता है। वह पात्र एक तोला, दो तोला, तीन तोला और चार तोले का होना चाहिए, किन्तु प्रमाणहीन पात्र में यन्त्र लिखने से मनुष्य को प्रत्यवाय का भागी बनना पड़ता है।

इस प्रकार बहिः पूजा-विधि समाप्त ।

अर्घ्यस्थापन—अर्घ्यपात्र स्थापन की विधि इस प्रकार है—साधक अपने तथा यन्त्र के मध्य में त्रिकोण वृत्त, षट्कोण चतुरस्र मण्डल का निर्माण कर, उसमें 'ईम्' ऐसा लिखकर मूलखण्डत्रय क्रम से त्रिकोण की पूजा कर षट्कोण में षडङ्ग का पूजन करे। फिर षट्कोण के चारों ओर बने हुए चतुरस्र मण्डल में 'पूर्णगिरिपीठाय नमः' से पूर्व दिशा में; 'उड्डीयानपीठाय नमः' से

इत्युत्तरे इति सम्पूज्य, मध्ये 'ॐ आधारशक्तये नमः' इति सम्पूज्य, त्रिकोणगर्भत्रिकोणषट्कोणभूषितां यन्त्रिकां मूलेन संस्थाप्य, 'नमः' इति सामान्यार्घस्थ-जलेनाऽभ्युक्ष्य, वांवींवुंह-सक्षमलवरयूं धर्मदवह्निमण्डलात्मने कालिकार्घ्यपात्राधाराय नमः' इति सम्पूज्य, यं धूम्रार्चिषे नमः, रं ऊष्मायै नमः, लं ज्वलिन्यै नमः, वं ज्वालिन्यै नमः, शविस्फुलिङ्गन्यै नमः षं सुश्रियै नमः, सं सुरूपायै नमः, हं कशिलायै नमः, ळं हव्यवाहायै नमः, क्षं कव्यवाहायै नमः इति वह्निदशकलाः सम्पूज्य, षट्कोणेषु षडङ्गं च सम्पूज्य, मध्यमूलेन देवीं प्रपूज्य, 'श्रीकालिकाश्रीपात्रं स्थापयामि नमः' इति पठित्वा, तदुपरि सौवर्णराजतं ताम्रं नारिकेलं वा पात्रं फडि'ति प्रक्षालितं संस्थाप्य ।

दक्षिण की ओर, 'कामरूपपीठाय नमः' से पश्चिम की ओर, 'जालन्धरपीठाय नमः' से उत्तर दिशा में पीठ-पूजा करे। फिर मध्य में 'ॐ आधारशक्तये नमः' पढ़ कर यन्त्र-स्थान की पूजा करे। उस पर पूर्वोक्त त्रिकोण गर्भ एवं त्रिकोणयुक्त षट्कोण से बना हुआ यन्त्र मूलमन्त्र से स्थापित कर 'नमः' इस मन्त्र को पढ़कर पूर्व में रखे गये सामान्य अर्घ्य पात्र के जल से अभिषिक्त कर 'वां वीं-वुं' से 'अर्घ्यपात्राधाराय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर पूजा करे। और 'यं-धूम्रार्चिषे नमः' से 'क्षं कव्यवाहायै नमः' पर्यन्त दश मन्त्र पढ़कर अग्नि के दश कलाओं का पूजन करे। इसी प्रकार षट्कोण में षडङ्ग की पूजा, मध्यमूल से देवी की पूजा कर 'श्रीकालिकाश्रीपात्रं स्थापयामि नमः' इस मन्त्र को पढ़ कर सोने का, चांदी का, तांबे का अथवा नारिकेल का बना हुआ पात्र जिसका 'फट्' इस मन्त्र से प्रक्षालन किया गया हो, उसे स्थापित करे।

'ह्रीं-ह्रीं-ह्रूं ह्सक्षमलवरयूं वसुप्रदतपिन्यादिद्वादशकलात्मने अर्कमण्डलाय श्रीदक्षणाकालिकार्घ्यपात्राय नमः' इति सम्पूज्य, पूर्वादिप्रादक्षिण्येन कलां पूजयेत्। तद्यथा—'कंभंतपिन्यै नमः, खंबं तापिन्यै नमः, गंफंधूम्रायै नमः, घंपंमरीच्यै नमः, ङंनंज्वालिन्यै नमः, चंधंरुच्यै नमः, छंदंसुषुम्नायै नमः, जंथंभोगदायै नमः, झंतंविश्वायै नमः, ञंणंबाधिन्यै नमः, टंढंधारिण्यै नमः, ठंडंक्षमायै नमः, इति सम्पूज्य,तत्पात्रमध्ये त्रिकोणं षट्कोणवृत्त मूलेन विलिख्य, षडङ्गं सम्पूज्य, मूलेन त्रिकोणं सम्पूज्य, विलोममातृकया दशधाजप्तेन वा क्षीरं जलं वा मधुसंविदादि वा निक्षिप्य, तेन त्रिकोणं परिपूर्य, यंरंवमिति दोषशोषणहनप्लावनानि कृत्वा, 'सांसींसूंसहक्षमलवरयूंकामप्रदामृताविषोडकलात्मने सोममण्डलाय 'श्रीदक्षिणकालिकार्घ्यामृताय नमः' इति सम्पूज्य, कलाः पूजयेत्।

तदनन्तर 'ह्रीं-ह्रीं' से 'अर्घ्यपात्राय नमः' मन्त्र पढ़ कर अर्घ्यपात्र का पूजन करे। उस अर्घ्यपात्र के पूर्वादि दक्षिण दिशा के क्रम से 'कंभंतपिन्यै नमः' से 'ठंडंक्षमायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर सूर्य के द्वादश कलाओं का पूजन करे। उस अर्घ्यपात्र के मध्य में त्रिकोण युक्त षट्कोण वृत्त मूल मन्त्र से लिख कर उस पर षडङ्ग की पूजा कर मूल मन्त्र से त्रिकोण का पूजन कर, विलोममातृका का दश बार जप करे। उसमें दूध, जल, मधु, संविदादि में कोई भी पदार्थ रख कर त्रिकोण अर्घ्यपात्र को जल से परिपूर्ण करे। पुनः 'यं रं वं' इस मन्त्र को पढ़ कर दोष का शोषण, दाहन एवं संप्लावन कर 'सां-सीं' से लेकर 'श्रीदक्षिणकालिकार्घ्यामृताय नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर अर्घ्यपात्र का पूजन कर कला का पूजन करे।

'अंअमृतायै नमः, आंमानदायै नमः, इंपूषायै नमः, इं-तुष्ट्यै नमः, उंपुष्टयै नमः, ऊंवृत्यै नमः, ऋंधृत्यै नमः, ॠं-शशिन्यै नमः, लृंचन्द्रिकायै नमः, लॄंकान्त्यै नमः, एंज्योत्स्नायै नमः, ऐंश्रियै नमः, ओंप्रीत्यै नमः, औअङ्गदायै नमः अंपूर्णायै नमः, अःपूर्णामृतायै नमः' इति कलाः सम्पूज्य, एला-लवङ्ग-कर्पूरादिसुगन्धादिनिःक्षिप्य, पूर्ववद् यन्त्रं द्रव्ये विलिख्य, त्रिकोणरेखायाम् 'अं १६ कं १६ खां १६' इति विलिख्य, मध्ये 'हं लं क्षं' इति संलिख्य, मूलखण्डत्रयेण सम्पूज्य ।

'गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥ १ ॥
ॐ ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे ।
तेन सत्येन मे देव ! तीर्थं देहि दिवाकर' ॥ २ ॥

इत्यादिभिस्तीर्थान्यावाह्याऽङ्कुशमुद्रया 'वौषट्'इति पुष्पं, 'वषट्' इत्यनेन गालिनीं मुद्रां प्रदर्श्य । गलिनीमुद्रा यथा—

'अंअमृतायै नमः' से लेकर, 'अंपूर्णामृताय नमः,' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर कला का पूजन कर अर्घ्यपात्र में इलायची, लौंग, कपूर आदि सुगन्धित द्रव्य छोड़ कर पुनः पूर्ववत् यन्त्र को किसी द्रव्य पर लिख कर, उसके त्रिकोण रेखा में प्रथम रेखा पर अं १६, दूसरी पर कं १६ तथा तीसरी पर खं १६ लिखे, मध्य रेखा पर 'हं लं क्षं' लिख कर मूल मन्त्र के तीन खण्डों से उसका पूजन करे।

उस अर्घ्यपात्र में । गङ्गे च यमुने' से लेकर 'दिवाकर' पर्यन्त दो श्लोक पढ़ कर अर्घ्यपात्र में तीर्थों का आवाहन कर. अङ्कुश मुद्रा से 'वौषट्' शब्द पढ़ते हुए अर्घ्यपात्र में अङ्कुश मुद्रा से 'वषट् शब्द

'कनिष्ठाङ्गुष्ठकौ युक्तौ करयोरितरेतरम् ।
तर्जनीमध्यमानामा-संहता भुग्नवर्जिताः' ॥

'वमिति' धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, इष्टदेवतां ध्यात्वा, सम्पूज्य, सङ्कुलीकृत्य, शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य, षट्कोणे च षडङ्गं सम्पूज्य, पूर्वे ग्लूंगगनरत्नेभ्यो नमः, दक्षिणे स्लूंस्वर्गरत्नेभ्यो नमः, इति पश्चिमे, प्लूंपातालरत्नेभ्यो नमः, उत्तरे म्लूंमनुष्य-रत्नेभ्यो नमः, नूंनागरत्नेभ्यो नमः, इति मध्ये सम्पूज्य, ऐंमूल 'अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय सांजूंजूं-अमृतेश्वर्यै स्वाहा' इत्यमृतेश्वरीं त्रिधा जप्त्वा त्रैयम्बकेन गायत्र्या वा 'शांशींशूंशैंशौंशः शुक्रशापविमोचितायै स्वाहा' इत्यमृतेशीं स्मृत्वा,

---

का उच्चारण कर पुष्प छोड़े । फिर दोनों हाथ के अँगूठे तथा कनिष्ठा एवं दोनों हाथ के तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिका को परस्पर संयुक्त कर गालिनी मुद्रा प्रदर्शित करे । पुनः 'वम्' इस मन्त्र को पढ़ कर धेनुमुद्रा प्रदर्शित करे, उस जल को अमृत बना कर इष्टदेवता का ध्यान कर तथा उनका पूजन कर, उसे कला युक्त शङ्ख मुद्रा प्रदर्शित करे । षट्कोण में षडङ्ग का पूजन कर अर्घ्यपात्र के पूर्व में 'ग्लूंगगनरत्नेभ्यो नमः', दक्षिण में स्लूंस्वर्गरत्नेभ्यो नमः', पश्चिम में 'प्लूंपातालरत्नेभ्यो नमः' तथा उत्तर में 'म्लूंमनुष्यरत्नेभ्यो नमः ।' इसी प्रकार मध्य में 'नूंनागरत्नेभ्यो नमः' मन्त्र पढ़ पूजन कर 'ऐं मूलं नमः, से लेकर 'अमृतेश्वर्यै स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र का तीन बार जप करे तथा 'त्रियम्बकम्' इस मन्त्र से अथवा गायत्री मन्त्र से युक्त 'शां-शी' से लेकर 'स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर उस अमृतेषी का

'अखण्डैकबरानन्द करे परसुधात्मनि ।
स्वच्छन्दस्फुरणामत्र निधेह्यमृतरूपिणी ॥ १ ॥
सूर्यकोटिप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसुशीतलम् ।
अष्टादशभुजं देवं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥ २ ॥
अमृतार्णवमध्यस्थं ब्रह्मपद्मोपरिस्थितम् ।
वृषारूढं नीलकण्ठं सर्वाभरणभूषितम् ॥ ३ ॥
कपाल-खट्वाङ्गधर-घण्टा-डमरु-वादिनम् ।
पाशाङ्कुशधरं देवं गदा-मुशलधारिणम् ॥ ४ ॥
खड्ग-खेटक-पट्टीश-मुद्गरोच्छूल-कुन्तिनम् ।
विचित्रखेटकं मुण्डं वरदाभयमालिनम् ॥ ५ ॥
लोहितं देवदेवेशं भावये साधकोत्तमः ।
भावयेच्च सुरादेवीं चन्द्रकोटयुतप्रभाम् ॥ ६ ॥
हिमकुन्देन्दुधवलां पञ्चवक्त्रां त्रिलोचनाम् ।
अष्टादशभुजैर्युक्तां सर्वानन्दकरोद्यताम् ॥ ७ ॥

इति ध्यायेत् । ततः 'हसक्षमलवरयूं-आनन्दभैरवाय फट्, हसक्षमलवरयूं-आनन्दभैरव्यै वौषट्, आनन्दभैरवानन्दभैरवी-

---

स्मरण कर फिर उसमें 'अखण्डैकवरानन्द' से 'सम्मुखीम्' पर्यन्त सात श्लोक पढ़ कर आनन्दभैरव तथा आनन्दभैरवी का ध्यान करे ॥१-७॥

पुनः हसक्षमलवरयूं-आनन्दभैरवाय फट्' से 'श्रीपादुकां पूजयामि

श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' इति मन्त्रेण वामाङ्गुष्ठ-मध्यमाभ्यां द्रव्यमुद्धृत्यानन्दभैरवमिथुनं तत्रैव सम्पूज्य, सन्तर्प्य च अमृतेशीं स्मृत्वा ।

क्लीं कुलस्थामृताकारे सिद्धिज्ञानकरे परे ।
अमृतत्त्वं निधेह्यत्र वस्तुनि क्लिन्नरूपिणि ।।

'हंसः तर्पयामि नमः' इति पूर्ववत् सन्तर्प्य, अमतेशीं स्मृत्वा,

सौं तद्रूपैकरसाख्यं च दत्वा ह्येतत्स्वरूपिणी ।
भूत्वा कुलामृताकारं मयि विस्फुरणं कुरु ।।

हंसः' इति प्राग्वत सन्तर्प्य मूलं सप्तधा जप्त्वा, कवचेनावगुण्ठ्याऽस्त्रेण संरक्ष्य, मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य, योनिधेनुमुद्रे प्रदर्शयेत् ।

इति श्रीपात्रस्थापनविधिः समाप्तः ।

तर्पयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर अर्घ्यपात्र में स्थित द्रव्य को बाँयें हाथ के अँगूठे तथा मध्यमा अंगुलि से निकाल कर उस द्रव्य पर आनन्दभैरव तथा आनन्दभैरवी का पूजन, सन्तर्पण करे। तथा अमृतेशी का स्मरण कर 'क्लींकुलस्था' से 'हंसः तर्पयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर अमृतेशी का तर्पण करे तथा अमृतेशी का स्मरण कर 'सौं तद्रूपैक' से 'हंसः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर पुनः तर्पण करे। एवं मूल मन्त्र का सात बार जप करते हुए कवच से उसे ढँक अस्त्र मुद्रा से संरक्षित कर मत्स्यमुद्रा से उसके ऊपर ढँक कर योनि एवं धेनुमुद्रा प्रदर्शित करे।

इस प्रकार श्रीपात्रस्थापन विधि समाप्त ।

अर्घ्यस्थापनविधिः

दक्षिणे अर्घ्यस्थापनं कुर्यात् । तद्यथा-त्रिकोणवृत्तषट्कोणभूपुराणि कृत्वा । 'आधारशक्तये नमः' इत्यभ्यर्च्याऽग्निमूर्ध्वं कोणाग्रं कृत्वा शङ्खमुद्रां दर्शयेत् ।

शङ्खमुद्रा यथा—

'वाममुष्ट्यन्तरेऽङ्गुष्ठां निवेश्य सरलाङ्गुलीः ।
दक्षिणस्य करस्यैव वामाङ्गुष्ठेन संस्पृशेत् ।
शङ्खमुद्रेयमाख्याता मन्त्रविद्भिरनुत्तमा ॥'

इति पुष्पाऽक्षतैःषडङ्गानि अग्नीशासुरवायव्येषु मध्यदिक्षु च सम्पूज्य, 'फट्' इति प्रक्षालितमाधारं संस्थाप्य, तत्र वह्निमण्डलमभ्यर्च्य, तत्र पूर्वबीजेन शङ्ख प्रक्षाल्य, तत्र संस्थाप्य, पूर्वोक्तमन्त्रेण कर्ममण्डलं तत्र सम्पूज्य, मूलेन जलं दत्वा,

---

तत्पश्चात् दाहिनी ओर अर्घ्यस्थापन करे। उसकी विधि इस प्रकार है - त्रिकोणवृत्त, षट्कोण, भूपुर बना कर 'आधारशक्तये नमः' से पूजा कर, ऊर्ध्वकोण के अग्रभाग में अग्निदेव का आवाहन कर शङ्खमुद्रा प्रदर्शित करे। शङ्खमुद्रा-'बाँयीं मुट्ठी में अँगूठे को रख कर, दाहिने हाथ की सीधी अँगुलियों को बाँयें अँगूठे से स्पर्श करे। इसी को मन्त्रशास्त्र के जानने वालों ने शङ्खमुद्रा बताया है।' फिर षडङ्गों की, आग्नेय, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य तथा मध्य भाग में पूजन कर 'फट्' इस मन्त्र से प्रक्षालित आधार रख कर, उसमें वह्निमण्डल का पूजन कर, पूर्व में कहे गये बीज मन्त्र से शङ्ख का प्रक्षालन एवं उसे आधार पर स्थापित उस शङ्ख में पूर्व में कहे गये अर्घ्य-

पूर्वोक्तमन्त्रेण चन्द्रमण्डलमभ्यर्च्य, 'गङ्गे च' इत्यादिना तीर्थमावाह्य, 'वौषट्' इति संयोज्य, सम्पूज्य तीर्थशक्ति च सम्पूजयेत् ।

पुनः 'वषट्' इति पुष्पं न्यस्य गालिनीमुद्रां प्रदर्श्य, 'रम्' इति स्वधाबीजेन धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, इष्टदेवतां ध्यात्वा, सकलीकृत्य, षडङ्गानि संसन्न्यस्य, अस्त्रेण संरक्ष्य, सम्पूज्य, अष्टकृत्वो मूलेनाऽभिमन्त्र्य, मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छाद्य, कुशाग्राऽक्षत-तिल-व्रीहि-यवा-ऽऽज्य-सिद्धार्थं पुष्पाणि संक्षिप्य, योनि-मुद्रां दर्शयित्वा श्रीपात्रस्थजलं किञ्चित् संक्षिपेत् ।

इत्यर्घ्यस्थापनविधिः ।

मण्डल की पूजा कर मूल मन्त्र से जल देकर पुनः पूर्वोक्त मन्त्र से उस पर चन्द्रमण्डल का पूजन कर 'गङ्गे च' इत्यादि मन्त्रों से उसमें तीर्थों का आवाहन कर 'वौषट' मन्त्र से तीर्थों को पात्र में संयुक्त कर उन तीर्थ-शक्तियों का पूजन करे ।

पुनः 'वषट्' मन्त्र पढ़ कर उसमें पुष्प छोड़कर गालिनी मुद्रा प्रदर्शित कर 'रम्' इस स्वधा बीज से तथा धेनुमुद्रा से अर्घ्यपात्र के जल को अमृत के समान बना कर इष्टदेवता का स्मरण एवं उसे कला के सहित समझ कर षडङ्गों का न्यास तथा अस्त्र के मन्त्र से संरक्षित कर पूजा करे। और मूल मन्त्र को आठ बार पढ़ कर उसे अभि-मन्त्रित करे। मत्स्य मुद्रा से आच्छादित कर अर्घ्यपात्र में कुशा का अग्रभाग, अक्षत, तिल, व्रीहि, यव, आज्य, सिद्धार्थ (श्वेत सर्षप) तथा पुष्प रखकर योनिमुद्रा दिखा कर पूर्व स्थापित श्रीपात्र का स्वल्प जल उसमें छोड़ दे ।

इस प्रकार अर्घ्यपात्र-स्थापन विधि समाप्त ।

पात्रस्थापनविधिः

तद्वामे पाद्यपात्रं त्रिकोणवृत्तचतुरस्रे, आधारशक्तिं सम्पूज्य, पात्रं साधारं संस्थाप्य, 'नमः' इति मूलेन वा जलेन प्रपूर्य, 'वषट्' इति पुष्पं, 'नमः' इति गन्धं च निःक्षिप्य, उशीरं रोचनं च श्यामाक-विष्णुक्रान्ताक्ष-दूर्वा इतिवा सङ्क्षिप्याऽस्त्रेणाऽष्ट-कृत्वोऽभिमन्त्र्य, मूलेनाऽभिमन्त्र्य, धेनुयोनिमुद्रे दर्शयेत् ।

एवं तत्पार्श्वे आचमनीयपात्रं त्रिरावृत्तचतुरस्रे आधार-शक्तिं सम्पूज्य, पात्रं साधारं संस्थाप्य, 'नमः' इति मूलेन वा जलेन प्रपूर्य 'वषट्' इति पुष्पं, 'नमः' इति गन्धं च निःक्षिप्य, जाती-कर्पूर-कङ्कोल-लवङ्ग-तमालकादिचूर्णं निक्षिप्याऽस्त्रेणा-ऽष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य, मूलेनाऽभिमन्त्र्य, धेनु-योनिमुद्रे दर्शयेत् ।

पात्रस्थापन की विधि—अर्घ्यपात्र के बाँयीं ओर त्रिकोणवृत्त चतुरस्र पर आधारशक्ति की पूजा का आधार पर पाद्यपात्र स्थापित कर 'नमः' इससे अथवा मूल मन्त्र से उसको जल से पूर्ण कर उसमें 'वषट्' इस मन्त्र से पुष्प छोड़े। 'नमः'-पढ़ कर गन्ध छोड़े। और उसमें उशीर, रोचना (हरिद्रा), श्यामाक, विष्णुक्रान्ता कमल, दूर्वा डाल कर अस्त्र के मन्त्र से उसे आठ बार अभिमन्त्रित कर पुनः मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित कर धेनु तथा योनि मुद्रा प्रदर्शित करना चाहिए।

'पद्यपात्र स्थापन के पश्चात् भगवती का उस पाद्यपात्र के सन्निकट आचमनीय-पात्र स्थापित करे। त्रिरावृत्त चतुरस्र पर आधारशक्ति की पूजा कर उस आधार पर आचमनीय-पात्र रख कर 'नमः' इस मन्त्र से अथवा मूलमन्त्र से आचमनीय-पात्र को

तद्दक्षिणे मधुपर्कपात्रं त्रिकोणवृत्तचतुरस्त्रे आधारशक्ति सम्पूज्य, पात्रं साधारं मधुघृतशर्करादधिदुग्धयुतं संस्थाप्याऽस्त्रेणाऽष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य, मूलेनाऽभिमन्त्र्य, धेनुयोनिमुद्रे दर्शयेत् ।

तद्दक्षे स्नानीयपात्रं त्रिकोणवृत्तचतुरस्त्रे आधारशक्ति सम्पूज्य, पात्रं साधारं संस्थाप्य, 'नमः' इति मूलेन वा जलेन प्रपूर्य, 'वषट्' इति पुष्पं, 'नमः' इति गन्धं च निक्षिप्य, उशीरं रोचनं च संक्षिप्याऽस्त्रेणाऽष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य, मूलेनाऽभिमन्त्र्य,

---

जल से पूर्ण कर 'वषट्' इस मन्त्र से उसमें पुष्प एवं 'नमः' मन्त्र से गन्ध छोड़े । जाती (जायफल), कपूर, कङ्कोल, लवंग, तमालक आदि का चूर्ण उसमें डालकर अस्त्र के मन्त्र से आठ बार अभिमन्त्रित कर पुनः मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करे और धेनु मुद्रा एवं योनि मुद्रा प्रदर्शित करे ।

साधक को उस आचमन-पात्र के दक्षिण मधुपर्क पात्र स्थापित करना चाहिए। वह इस प्रकार है—त्रिकोण वृत्त चतुरस्र मण्डल पर आधार शक्ति की पूजा कर मधु, घृत, शर्करा, दधि, दुग्ध युक्त पात्र को आधार के सहित स्थापित करे। तदनन्तर अस्त्र मन्त्र से उसे आठ बार अभिमन्त्रित कर मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करे और धेनु-योनिमुद्रा प्रदर्शित करे। फिर मधुपर्क-पात्र के दाहिनी ओर भगवती के स्नानीय पात्र को स्थापित करे। त्रिकोण वृत चतुरस्र मण्डल में आधार शक्ति का पूजन एवं उस पर आधार सहित पात्र स्थापित कर 'नमः' इस मन्त्र से अथवा मूल मन्त्र से उस पात्र में जल भरे। फिर उसमें 'वषट्' इस मन्त्र से पुष्प, 'नमः'

धेनुयोनिमुद्रे दर्शयेत् । तत्रैव श्रीचन्दनादिपुष्पं वक्षो वसन-भूषणादि तत्रैव स्थापयेत् । सामान्यार्घ्यस्थजलेन विशेषजलेन वाऽभिषिच्य, मूलेनाऽष्टवारमभिमन्त्र्य, धेनुयोनिमुद्रे दर्शयेत् ।

एवं सर्ववस्तुशोधनं विशेषजलेनाऽऽत्ममूर्ध्नि भैरवौ तर्पयेत् । श्रीपात्रामृतेन विशेषार्घ्यं पात्रेण वा देवीं हृदि त्रिवारं तर्पयेत् । तर्पणं च तत्त्वमुद्रया । सा चाऽनामिकाऽङ्गुष्ठयोगेन बोध्या ।

इति पात्रस्थापन-विधिः समाप्तः ।

इस मन्त्र से गन्ध, उशीर, रोचन प्रक्षिप्त कर अस्त्र को आठ बार पढ़ कर अभिमन्त्रित करे। पुनः मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित कर धेनु-योनि मुद्रा प्रदर्शित करे। तदनन्तर उस स्नानीय पात्र के समीप बायीं ओर श्री चन्दनादि, पुष्प, दायीं ओर भगवती के वस्त्र एवं आभूषणादि स्थापित कर, सामान्य अर्घ्य पात्र के जल से अथवा विशेष अर्घ्य पात्र के जल से उसे अभिसिञ्चित कर मूल मन्त्र से आठ बार अभिमन्त्रित कर धेनु एवं योनि मुद्रा प्रदर्शित करे।

इस प्रकार सभी वस्तुओं को शुद्ध कर विशेष जल से अपने शिर पर भैरव एवं भैरवी का तर्पण करे। पुनः श्रीपात्र के जल से अथवा विशेषार्घ्य पात्र से हृदय स्थल पर तत्त्वमुद्रा से अनामिका एवं अंगुष्ठ को मिला कर तीन बार देवी तर्पण करना चाहिए।

इस प्रकार पात्र-स्थापन-विधि समाप्त।

तत्त्वशुद्धिः

अत्र तत्त्वशुद्ध्याद्यपि कौलिकैराचरणीयम् । तद्यथा—तत्र श्रुतिः । प्राणा-ऽपान-व्यानोदान-समाना मे शुध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा । ॐ पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशानि मे शुद्धयन्तामित्यादि, ॐ प्रकृत्यहङ्कार-बुद्धि-मनः-श्रोत्राणि मे शुद्धयन्तां ज्योतिरह विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा । ॐ स्पर्श-रूप-रस-गन्धाकाशानि मे शुद्धयन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा । ॐ वायु-तेजः-सलिल-भूम्यात्मनो मे शुद्धयन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा । इति परामृशन् सप्तधा सर्वाङ्गे ॐ त्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राण-वचांसि मे शुद्धयन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा । ॐ पाणि-पाद-पायूपस्थशब्दा मे शुद्धयन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ।

इति तत्त्वशुद्धिः ।

तत्त्वशुद्धि—इस विषय में कौलिकों को तत्त्वशुद्धि आदि कार्य करना चाहिये । इस सम्बन्ध में जो सुना जाता है वह मूल में स्पष्ट है । अतः साधक 'प्राणापान' से लेकर अन्तिम 'विपाप्मा भूयासं स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर सात बार सर्वाङ्ग का स्पर्श करे । पुनः 'ॐ त्वक्चक्षु' से लेकर 'विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर त्वक्, चक्षु, जिह्वा, घ्राण, वचन, पाणि, पाद, पायु-उपस्थ तथा शब्द की शुद्धि करे ।

इस प्रकार तत्त्वशुद्धि समाप्त ।

बटुकादिभ्यो बलिदानम्

ईशान-वह्नि निर्ऋति-वायुकोणेषु-मण्डलानि विधाय, बटुक-योगिनी गणेश-क्षेत्रपाल-भूतेभ्यः सम्पूज्य, बटकादिबलिं दद्यात्। मण्डलमभ्यर्च्य, बटकादिद्रव्यं संस्थापयेत्। ॐ एह्येहि देवी पुत्र-कपिल-जटाभार-भास्वरज्वालामुख-सर्वविघ्नान् नाशय नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। अनेनाऽङ्गुष्ठानामिकायोगेन ईशाने बटुकाय बलिं दद्यात्।

'ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिविगतसुतले भूतले निष्कले वा
पाताले वाऽनले वा सलिलपवनयोर्यत्र तत्र स्थिता वा।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु कृतसुपदाः पुष्पधूपादिकेन
प्रीता देव्यः सदा ता शुभबलिविधिनाऽऽयान्तु देवेन्द्रतुल्याः॥'

'यांयींयूंयैंयौंयः योगिनीभ्यः हूंफट् स्वाहा' अनेन कनिष्ठाऽङ्गुष्ठ-योगेन वह्निकोणे बलिं दद्यात्। 'आंक्षींक्षंक्षैंक्षौंक्षः क्षेत्रपालधूप-

---

तत्पश्चात् पूजा-स्थल के चारों ओर ईशान, आग्नेय, नैर्ऋत्य तथा वायव्य कोण में मण्डल निर्माण कर क्रमशः प्रत्येक में बटुक, योगिनी, गणेश, क्षेत्रपाल एवं भूतों की पूजा कर तत्तत्कोणों में बटक आदि की बलि प्रदान करे। सर्व-प्रथम मण्डल का पूजन कर उस पर बलिदान के लिए 'बटक' (बड़ा) आदि पदार्थ रखे। तथा 'ॐ एह्येहि' से गृह्ण-गृह्ण स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर अनामिका एवं अङ्गुष्ठ उँगलियों को मिला कर ईशान कोण में बटुक को बटक की बलि दे।

पुनः 'ऊर्ध्व ब्रह्माण्डतो' से लेकर 'योगिनीभ्यः हूंफट् स्वाहा' पर्यन्त श्लोक तथा मन्त्र पढ़ कर कनिष्ठा-अंगुष्ठ अँगुलियों को मिला

दीपादि-सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां वायुकोणे बलिं दद्यात् । 'गांगींगूंवरवरदसर्वजनं मे वशमानय बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' मुष्टिमध्यस्थामङ्गुलीं दण्डवत् कृत्वा, नैर्ऋते बलिं दद्यात् । वामभागे मण्डलं कृत्वा, साधारपात्रं संस्थाप्य, तत्र बलिद्रव्यं दत्त्वा, सेकादि कृत्वा, 'ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हूं फट् स्वाहा' इत्यनेन तत्त्वमुद्रया भूतेभ्यो बलिं दद्यात् । इदं बलिदानं वस्तुतः पुरश्चरणे एव कर्त्तव्यम् ।

सुवर्णस्फटिकादौ काश्मीरमृगनाभिमलयोद्भवरक्तचन्दनादिद्रव्येण 'आसुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहा' इति मन्त्रेण च षट्कोणगर्भं त्रिकोणत्रयाष्टदलभूपुरात्मकं यन्त्रं लिखेत् । तत्र पञ्चगव्येन पञ्चामृतेन च प्रक्षाल्य, प्राणप्रतिष्ठामन्त्रेण

कर आग्नेय कोण में योगिनियों को 'क्षां क्षीं' से 'गृह्ण गृह्ण स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर वायुकोण में अङ्गुष्ठ एवं तर्जनी अङ्गुलियों को मिला कर क्षेत्रपाल को धप-ीपादि सहित बलि प्रदान करे । इसी प्रकार 'गां गीं' से लेकर गृह्ण गृह्ण स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर बांयें हाथ की मुट्ठी में दाहिने हाथ की अङ्गुलियों को डण्डे के समान खड़ी कर नैर्ऋत्य कोण में नैर्ऋत्य को बलि देवे । तथा बाँयीं ओर मण्डल बना कर आधार सहित पात्र रख उस पर बलि द्रव्य रख कर उसे जल से सिञ्चित कर 'ॐ ह्रीं सर्व' से लेकर फट् स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर तत्त्वमुद्रां से भूतगणों को बलि प्रदान करे । इस प्रकार का बलिदान वस्तुतः पुरश्चरण में ही करना चाहिए ।

तत्पश्चात् सुवर्ण अथवा स्फटिक पात्र पर केशर, कस्तूरी, मलयाचल तथा रक्तचन्दनादि मिश्रित द्रव्य से 'आसुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से षट्कोण के बीच तीन त्रिकोणात्मक अष्ट-

अष्टोत्तरशतकृत्वः प्राणान् प्रतिष्ठाप्य । मन्त्रो यथा—आंह्रीं-क्रोंयंरंलंवंशंषंसंहों ॐ क्षंसंहंसः ह्रीं ॐ हंसः श्रीमद्दक्षिण-कालिकायाः षट्कोणगर्भत्रिकोणत्रयाष्टदलभूपुरात्मकयन्त्रस्य सजीववाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' ।

ततः—'ॐ यन्त्रराजाय विद्महे महायन्त्राय धीमहि । तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्' इति दशधा जप्त्वा, दशधा पुष्पाञ्जलिं संक्षिप्य, होमे कृत्वा, प्रतिहोमे हुतशेषं तस्मिन् क्षिपेत् ।

इति बटकादिभ्यो बलिदानम् ।

आधारशक्त्यादिपूजनम्

तत्राधारशक्त्यादिपूजनं कुर्यात् । तद्यथा—'ह्रीं आधार-शक्तिभ्यो नमः' इति सम्पूज्य । ततो रक्तचन्दनपुष्पाक्षत-

---

दलयुक्त भूपुर यन्त्र को लिखे। उसे पञ्चगव्य अथवा पञ्चामृत से प्रक्षालित कर प्राण प्रतिष्ठा मन्त्र को एक सौ आठ बार पढ़ कर उस यन्त्र में प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए । प्राणप्रतिष्ठा का 'आं ह्रीं' से लेकर 'चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र है।

पुनः 'ॐ यन्त्रराजाय विद्महे' से लेकर 'तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्' पर्यन्त मन्त्र का दश बार जप तथा दश बार पुष्पाञ्जलि देकर होम करे। होम करने के समय प्रत्येक आहुति से शेष घृत को यन्त्र पर डालता रहे।

इस प्रकार बटुकादि के लिए बलिदान समाप्त ।

तदनन्तर 'ह्रीं आधारशक्तिभ्यो नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर आधारशक्तियों का पूजन करे। पुनः रक्तचन्दन एवं पुष्पमिश्रित

पुञ्जं निधाय, 'ॐ जयायै नमः' 'ॐ विजयायै नमः' 'ॐ अजितायैं नमः' 'ॐ अपराजितायै नमः' 'ॐ नित्यायै नमः' 'ॐ विलासिन्यै नमः' 'ॐ दोग्ध्र्यै नमः' 'ॐ अघोरायै नमः' 'ॐ मङ्गलायै नमः' इति पीठशक्तीरभ्यर्च्य, 'ह्रींकालिका-योगपीठात्मने नमः' 'ह्ः सौं सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः' इत्यभ्यर्च्य, ततो देवीं यजेत् ।

इति आधारशक्त्यादिपूजनम् ।

ध्यानादिपूजाविधिः

हस्ते पुष्पाक्षतपुञ्जं निधाय, कूर्ममुद्रां विधाय, कुलकुण्डलिनीं हृदयदेशे आनीय, तन्मुखे प्रक्षिप्य, तां परब्रह्मणि सङ्गमय्य चन्द्रमण्डलान्तर्गताऽमृतलोलीभूतां द्विदले सन्निवेश्य, वाम-नासापुटेन 'यम्' इति निष्कृत्य, पूर्वं कामकलां ध्यायेत् ।

अक्षतपुञ्जों को आधारशक्ति पर रख कर, उन अक्षतपुञ्जों पर 'ॐ जयायै नमः' से लेकर 'ॐ मङ्गलायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर पीठशक्तियों की अर्चना करे। तथा 'ह्रींकालिका' से लेकर 'पद्मा-सनाय नमः' पर्यन्त दो मन्त्रों को पढ़ कर अर्चना करे एवं महादेवी का यजन करे।

हाथ में पुष्प तथा अक्षत-पुञ्ज लेकर कूर्ममुद्रा धारण कर कुल-कुण्डलिनी को हृदय स्थान में लाकर अक्षतादि उसके मुख में रख उसे परब्रह्म के साथ युक्त कर चन्द्रमण्डलान्तर्गत अमृत के लिए लालायित कुण्डलिनी को द्विदल पर बैठा कर बाँयें नासिका के छिद्र से 'यम्' इस मन्त्र को पढ़ कर खींचते हुए काम कला का

'मुखं विन्दुवदाकारं तदधःकुचयुग्मकम् ।
तदधःसपराङ्गं च सपरिष्कृतमण्डलम् ॥'

ततः पुष्पादिचक्रे क्षिपेत् । देवीं ध्यात्वा, आवाहयेत् ध्यानं च—

"करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम् ॥ १ ॥
सद्यश्छिन्नशिरःखड्गवामोर्ध्वाधःकराम्बुजाम् ।
अभयं वरदं चैव दक्षिणाधोर्ध्वपाणिकाम् ॥ २ ॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ।
कण्ठावशक्त-मुण्डाली-गलद्रुधिर-चर्चिताम् ॥ ३ ॥
कर्णावतंसतानीत-शवयुग्म-भयानकाम् ।
घोरदंष्ट्राकरालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ॥ ४॥
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ।
सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननाम् ॥ ५ ॥
घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ।
दन्तुरां दक्षिणव्यापि-मुक्तलम्बकचोच्चयाम् ॥ ६ ॥
शवरूपमहादेव - हृदयोपरिसंस्थिताम् ।
शिवाभिर्घोररूपाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ॥ ७ ॥
महाकालेन सार्द्धोर्द्ध्वमुपविष्टरतातुराम् ।
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम् ।
एवं सञ्चिन्तयेद् देवीं श्मशानालयवासिनीम् ॥ ८ ॥

'मुखं विन्दु' से प्रारम्भ कर 'सपरिष्कृतमण्डलं' पर्यन्त श्लोक द्वारा ध्यान कर पुष्पादिकों को यन्त्र चक्र में छोड़ दे । पुनः 'करालवदनां' से 'श्मशानालयवासिनीम्' पर्यन्त आठ श्लोकों द्वारा महादेवी महाकाली का ध्यान करे ।

अथवा हंसतन्त्रोक्तं ध्यानं कुर्यात् । तद्यथा—

'नमामि दक्षिणामूर्ति कालिकां परभैरवीम् ।
भिन्नाञ्जनचयप्रख्यां प्रवीरशवसंस्थिताम् ॥ १ ॥
गलच्छोणितधाराभिः स्मेराननसरोरुहाम् ।
पीनोन्नतकुचद्वन्द्वां पीनवक्षो नितम्बिनीम् ॥ २ ॥
दक्षिणां मुक्तकेशालीं दिगम्बरविनोदिनीम् ।
महाकालशवाविष्टां स्मेरानन्दोपरिस्थिताम् ॥ ३ ॥
मुखं सान्द्रस्मितामोद-मोदिनीं मदविह्वलाम् ।
आरक्तमुखसान्द्राभिर्नेत्रालीभिर्विराजिताम् ॥ ४ ॥
शवद्वयकृतोत्तंसां सिन्दूरतिलकोज्ज्वलाम् ।
पञ्चाशन्मुण्डघटित-मालाशोणित-लोहिताम् ॥ ५ ॥
नानामणिविशोभाढ्य-नानालङ्कार-शोभिताम् ।
शवास्थिकृत-केयूर-शङ्ख-कङ्कणमण्डिताम् ॥ ६ ॥
शववक्षःसमारूढां लेलिहानां शवं क्वचित् ।
शवमांसकृतग्रासां साट्टहासं मुहुर्मुहुः ॥ ७ ॥
खड्गमुण्डधरां वामे सव्येऽभयवरप्रदाम् ।
दन्तुरां च महारौद्रीं चण्डनादातिभीषणाम् ॥ ८ ॥
शिवाभिर्घोररूपाभिर्वेष्टितां भयनाशिनीम् ।
मा भैर्मा भैः स्वभक्तेषु जल्पन्तीं घोरनिःस्वनैः ।
यूयं किमिच्छथ ब्रूत ददामीति प्रभाषिणीम्' ॥ ९ ॥

इति ध्यायेत् ।

अथवा हंस तन्त्र में कहे गये विधि के अनुसार 'नमामि दक्षिणामूर्ति' से 'प्रभाषिणीम्' पर्यन्त नव श्लोकों से ध्यान करे ।

आवाहनं च–'आत्मसंस्थामजां शुद्धां त्वामहं परमेश्वरीम् ।
आरण्यमिव हव्यांशं मूर्त्तावावाहयाम्यहम् ॥'

इति मूलं च पठन् 'भगवति दक्षिणकालिकेऽइहागच्छ' इति प्रसारित-संहताङ्गुलीमूलपर्वणोरङ्गुष्ठौ निःक्षिप्य आवाहयेत्।

ततः—'ॐ देवेशि भक्तिसुलभे ! परिवारसमन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥
तवेयं महिमामूर्तिस्तस्यां त्वां सर्वगां प्रभो ! ।
भक्तिस्नेह-समाकृष्टा दीपवत् स्थापयाम्यहम् ॥'

इति मूलं पठित्वा, पूर्वोक्तया अधोमुख्या मुद्रया स्थापयेत् ।

'ॐ सर्वान्तर्यामिन्यै देवि सर्वबीजमये शुभे ।
स्वात्मस्थायै परं शुद्धमासनं कल्पयाम्यहम् ॥'

इति मूलं च पठन् पद्ममुद्रया पुष्पाद्यासनं दद्यात् ।

तदनन्तर 'आत्मसंस्थां' से मूर्त्तावावाहयाम्यहम्' इस श्लोक तथा मूल मन्त्र सहित 'भगवति दक्षिणकालिके इहागच्छ' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर दोनों हाथ के अङ्गुलियों के मूल एवं पर्व को आगे की ओर झुका कर तथा दोनों अँगूठों को ऊपर कर देवी का आवाहन करे तथा 'ॐ देवेशि' से 'स्थापयाम्यहम्' पर्यन्त श्लोक एवं मूल मन्त्र पढ़ कर पूर्वोक्त मुद्रा से नीचे की ओर दिखाते हुए उन्हें स्थापित करे । पुनः 'ॐसर्वान्तर्यामिन्यै' से 'कल्पयाम्यहम्' पर्यन्त श्लोक तथा मूल मन्त्र को पढ़ते हुए भगवती को पुष्पादि आसन प्रदान करे ।

ततः—'ॐ अस्मिन् वरासने देवि ! सुखासीनेऽक्षरात्मिके ।
प्रतिष्ठिता भवे सा त्वं प्रसीद परमेश्वरि ! ।।'

मूलं च पठन् 'इह प्रतिष्ठिता भव' इति पूर्वोक्तया मुद्रया प्रतिष्ठापयेत् ।

अनन्या तत्र देवेशि ! मूर्तिशक्तिरियं प्रभो ! ।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्वं भक्तानुग्रहतत्परे ।।'

मूलं च पठन् 'इह सन्निधेहि' उच्छ्रिताऽङ्गुष्ठमुष्टयोः संयोगात् सन्निधापनमुद्रया सन्निधानं कुर्यात् ।

'ॐ आज्ञया तव देवेशि ! कृपाम्भोधे गुणाम्बुध ! ।
आत्मना चैकदृप्तां त्वां संरुणद्धि महेश्वरि ! ।।'

इति मूलं च पठन्, अन्तःप्रवेशिताङ्गुष्ठ-मुष्टयात्मिकया 'इह सन्निरुध्यस्व' इति सन्निरोधनं कुर्यात् ।

पुनः 'अस्मिन् वरासने' से 'परमेश्वरि' पर्यन्त श्लोक तथा मूल मन्त्र के साथ 'इह प्रतिष्ठिता भव' पढ़कर पूर्वोक्त मुद्रा द्वारा भगवती की प्रतिष्ठा करे। पुनः 'अनन्या तत्र देवेशि' से 'भक्तानुग्रहतत्परे' पर्यन्त श्लोक एवं मूल मन्त्र के सहित 'इह सन्निधेहि' पढ़कर ऊपर की ओर दोनों हाथ की मुट्ठी तथा अँगूठे को ऊपर की ओर उठाकर सन्निधापन मुद्रा द्वारा भगवती का सन्निधान स्थापित करे।

पुनः 'आज्ञया तव' से 'महेश्वरि' पर्यन्त श्लोक एवं मूल मन्त्र के सहित 'इह सन्निरुध्यस्व' उच्चारण कर दोनों हाथ के अँगूठों को

'अज्ञानाद् दुर्मनस्त्वाद् वा वैकल्या साधकस्य च।
मम ऊनं भवेत् कृत्यं तदाप्याभिमुखी भव ॥'

इति मूलं च पठन् 'इह सम्मुखी भव' इति उत्तान-मुष्टियुगलात्मिकया सम्मुखीकरणं कुर्यात्।

ततो 'हूम्' इत्यनेन सव्यहस्तमुष्टिदीर्घाधोमुखतर्जन्यात्मिकयाऽभितो भ्रामितयाऽवगुण्ठयेत्।

ॐ दशपीयूषवर्षिण्या पूरयेद्यज्ञविष्टरम्।
मूर्त्तौ वा यज्ञसम्पूर्त्तौ स्थिरा भव महेश्वरि ! ॥

देवताङ्गे षडङ्गन्यासात्मकं सकलीकरणं कुर्यात्। तद्यथा—

'क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा, क्रूं शिखायै वषट्, क्रैं कवचाय हूम्, क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्रः अस्त्राय फट्'।

दोनों हाथ की मुट्ठी में रखकर देवी का सन्निरोधन करे। पुनः 'अज्ञानाद् दुर्मनस्त्वाद् वा' से 'अभिमुखी भव' पर्यन्त तथा मूल मन्त्र के सहित 'इह सम्मुखी भव' मन्त्र पढ़कर दोनों मुट्ठियों को उत्तान कर देवी को अपने सम्मुख स्थापित करे।

तत्पश्चात् 'हूम्' इस मन्त्र से बांये हाथ की मुट्ठी तथा तर्जनी अँगुलि को फैला कर उसे नीचे की ओर करके चारों ओर घुमा कर घेर देवे। पुनः 'ॐ दशपीयूष' से 'महेश्वरि' पर्यन्त श्लोक पढ़कर देवता के अङ्ग में षडङ्गन्यास कर मूर्ति को कला से युक्त करे।

षडङ्गन्यास की विधि—'क्रां हृदयाय नमः' से लेकर 'क्रः अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़कर हृदयादि का स्पर्श करते हुए न्यास करे।

ततः—'स्वभक्तवाङ्-मनश्चक्षुः-श्रोत्रदूरार्पितस्थिते ।
स्वतेजःपुञ्जरेणाशु वेष्टिता भव सर्वतः ॥'

स्वधाबीजेन धेनुमुद्रया अमृतीकरणम् । ततो महामुद्रया परमीकरणम् । महामुद्रा यथा—

'अन्योन्यग्रथिताङ्गुष्ठा-प्रसारित-पराङ्गुलिः ।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणे प्रिये ! ॥'

तथा—'ॐ यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवाः स्वाभीष्टसिद्धये ।
तस्यै ते परमेशान्यै आगतं स्वागतं च मे ॥'

मूलं च पठन् 'साङ्गे सायुधे सवाहने सावरणे श्रीमद्दक्षिणकालिके तव स्वागतम' इति प्रसारिताङ्गुल्यधोमुखकरद्वयेन स्वागतं कुर्यात् ।

'ॐ कृतार्थोऽनुगृहीतोऽस्मि सफलं जीवितं च मे ।
आगता देवदेवेशि सुस्वागतमिदं पुनः ॥'

मूलं च पठन्नूर्ध्वमुख्या पूर्वोक्तमुद्रया सुस्वागतं कुर्यात् ।

तदनन्तर 'स्वभक्तवाङ्' से सर्वतः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर 'स्वधा' इस बीज मन्त्र से धेनुमुद्रा दिखाकर कला को अमृतमय बना कर महामुद्रा दिखा कर 'परमीकरण' करे । महामुद्रा का स्वरूप है—दोनों हाथ के अँगूठों को एक दूसरे से ग्रथित कर अन्य अङ्गुलियों को खुला रखे । तदनन्तर 'ॐ यस्य दर्शनं' से लेकर 'स्वागतं च मे' पर्यन्त श्लोक एवं मूल मन्त्र सहित 'साङ्गे' से लेकर 'तव स्वागतम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ते हुए दोनों हाथ की अँगुलियों को फैलाकर उसे नीचे की ओर झुकाकर भगवती का स्वागत करे । पश्चात् 'ॐ कृतार्थो' से लेकर 'सुस्वागतमिदं पुनः' पर्यन्त श्लोक एवं मूलमन्त्र को पढ़ते हुए पूर्वोक्त

लेलिहानमुद्रया प्राणस्थापनं पूर्वोक्तरीत्या कुर्यात्। लेलिहान-मुद्रा यथा—

'तर्जनीमध्यमानामां समां कुर्यादधोमुखीम्।
अनामायां क्षिपेद् बद्धामृजुं कृत्वा कनिष्ठिकाम्।
लेलिहानात्ममुद्रेयं जीवन्यासे प्रकीर्तिता॥'

पूर्वोक्तप्राणस्थापनरीतिर्यथा-आंह्रींक्रोंयंरंलंवंशंषंसंहों ॐ क्षंसंहंसःह्रीं ॐ हंसः श्रीमद्दक्षिणकालिकायाः प्राणा इह प्राणाः। आंह्रींक्रोंयंरंलंवंशंहों ॐ क्षंसंहंसःह्रीं ॐ हंसः श्रीमद्दक्षिणकालिकाया जीव इह स्थितः। आंह्रींक्रोंयंरंलं-वंशंषंसंहों ॐ क्षंसंहंसःह्रीं ॐ हंसः श्रीमद्दक्षिणकालिकायाः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। आंह्रींक्रोंयंरंलंवंशंषंसंहोंसः ॐ

रूप से दोनों हाथ की अँगुलियों को ऊपर उठाकर सुस्वागत करे। और इसी मुद्रा से भगवती के यन्त्र में लेलिहान मुद्रा के द्वारा प्राणप्रतिष्ठित करे। लेलिहान मुद्रा—दोनों हाथ की तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिका को समान रूप से एक में मिलाकर नीचे झुकावे अथवा कनिष्ठा को सीधी कर अनामिका में बाँध ऊपर खड़ी करने से लेलिहान मुद्रा हो जाती है। जब यन्त्र में प्राणप्रतिष्ठा करनी हो, तो इस मुद्रा का प्रयोग करना चाहिए। पूर्वोक्त क्रम से प्राण स्थापना की विधि यह है–'आं·ह्रीं' से 'प्राणा इह प्राणाः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर प्राण का, पुनः 'आं-ह्रीं' से - जीव इह स्थितः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर जीव का, 'आं-ह्रीं' से 'सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि' पढ़कर इन्द्रियों का तथा 'आं-ह्रीं' से 'स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर,

क्षंसंहंसः श्रीमद्दक्षिणकालिकाया वाङ्-मन-स्त्वक्चक्षुश्रोत्र-जिह्वा-घ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

ततो मूलमन्त्रेणाऽर्घ्योदकेन त्रिः प्रोक्षणम् ।

'शालग्रामे मणौ यन्त्रे नावाहन-विसर्जने ।
प्राणः तिष्ठां च न कुर्यात् ।'

योनिं महायोनिं च बध्वा खड्गमुण्डाऽभयवरमुद्रां दर्शयेत् । महायोनिमुद्रा यथा–

'तर्जन्यनामिके मध्ये कनिष्ठे च क्रमादपि ।
करयोर्योजयेच्चैव कनिष्ठामूलभेदतः ॥
अङ्गुष्ठाग्रं तु निःक्षिप्य महायोनिः प्रकीर्त्तिता ।
अधोमुखीमिमां कृत्वा दर्शयेद् बीजपूर्विकाम् ॥'

बीजम् 'ऐमि'ति । योनिमुद्रायां तु–'अङ्गुष्ठाग्रं तु न निःक्षिपेदिति ।' खड्गादिमुद्रा तु स्पष्टैव ।

वाणी, मन, त्वक्, चक्षु, श्रोत्र, जिह्वा, घ्राण एवं प्राणों को यन्त्र में स्थापित करे, पुनः मूल मन्त्र पढ़ते हुए अर्घ्य पात्र के जल से तीन बार प्रोक्षण करे। शालग्राम में, मणि में एवं यत्र में आवाहन, विसर्जन तथा प्राणप्रतिष्ठा नहीं करनी चाहिए। अतः यन्त्र में ऊपर कही गयी सारी प्राणप्रतिष्ठा की विधि न करे।' योनि मुद्रा अथवा महायोनि मुद्रा प्रदर्शित कर खड्ग, मुण्ड तथा अभय मुद्रा प्रदर्शित करे। दोनों हाथ की तर्जनी, अनामिका, मध्यमा तथा कनिष्ठा अँगुलियों को क्रमशः एक में मिला दे, और दोनों अँगूठों को उसके भीतर सन्निविष्ट कर दे, तो महायोनि मुद्रा होती है। इस मुद्रा को 'ऐं' बीज पढ़कर नीचे की ओर दिखावे। योनि मुद्रा में अँगूठों को भीतर न करे। खड्गादि मुद्रा तो स्पष्ट ही है।

ततः पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । तत्र एकं पादे, द्वितीयं जानुनि, तृतीयं नाभौ, चतुर्थं हृदये, मस्तके पञ्चममिति । ततः पाद्यादि दद्यात् । तद्यथा–

'यद्भक्तिलेशसम्पर्कात् परमानन्दसम्भवः ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥'

इति मूलं च पठन्, 'इदं पाद्यं दक्षिणकालिकायै निवेदयामि नमः' इति पूर्वोक्तपुष्प-गन्धोशीर-रोचन-श्यामाक-विष्णुकान्ताब्जदूर्वायुतं जलमनामाङ्गुष्ठयोर्योगेन पादयोर्दद्यात् ।

'ॐ वेदानामपि वेदाय देवानां देवतात्मने ।
आचमं कल्पयामीशि ! शुद्धानां शुद्धि हेतवे ॥'

मूलं च पठन् 'इदमाचमनीयं दक्षिणकालिकायै निवेद-

प्राण स्थापन के बाद मन्त्र पढ़कर यन्त्र पर पुष्पाञ्जलि समर्पित करे। पैर पर एकाञ्जलि, जानु पर दूसरी, नाभि पर तीसरी, हृदय पर चौथी तथा मस्तक पर पाँचवीं पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। तत्पश्चात् पाद्य प्रदान करे। जो इस प्रकार है—साधक 'यद्भक्ति' से लेकर 'कल्पये' पर्यन्त्र मन्त्र को पढ़ते हुए मूल मन्त्र सहित 'इदं पाद्यं दक्षिणकालिकायै निवेदयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर प्रथम रखे गये पुष्प, गन्ध, उशीर, रोचन, श्यामाक, विष्णुकान्ता तथा कमल एवं दूर्वायुक्त जल को अनामिका-अंगुष्ठ को मिलाकर यन्त्र स्थित भगवती के दोनों चरण-कमलों में निवेदित करे। पुनः 'ॐ वेदानां से 'शुद्धिहेतवे' पर्यन्त श्लोक एवं मूल मन्त्र के सहित 'इदमाचमनीयं दक्षिणकालिकायै निवेदयामि' मन्त्र को पढ़कर कनिष्ठा रहित दोनों

यामि' इत्याचमनीयं कनिष्ठाहीनोन्नतसयुक्तचतुरङ्गुलीरूपा-चमनमुद्रया चन्दन-पुष्पजाती-कर्पूर-कङ्कोल-लवङ्ग-तमाल-कादिचूर्णसंयुक्तजलं मुखे दद्यात् ।

'ॐ सर्वकालुष्यहीनायै परिपूर्णसुखात्मने ।
मधुपर्कमिदं देवि ! कल्पयामि प्रसीद मे ।।'

मूल च पठन् संयुक्ताधोमुखानामिकास्पृष्टाङ्गुष्ठात्मिकया मधु-घृत-शर्करा-दधि-दुग्ध-सङ्घातात्मकं मधुपर्कं मुखे दद्यात् ।

'ॐ उच्छिष्टोऽप्यशुचिर्वाऽपि यस्याः स्मरणमात्रतः ।
शुद्धिमाप्नोति तस्यै ते पुनराचमनीयकम् ।।'

इति मूलं च पठन्, पूर्ववदाचमनीयं मुखे दद्यात् ।

'ॐ तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तं तवाऽर्घ्यं कल्पयाम्यहम् ।।'

हाथ की चारों अँगुलियों को ऊपर कर आचमन मुद्रा से चन्दन, पुष्प, जाति, कपूर, कङ्कोल, लवङ्ग, तमाल आदि के चूर्ण से युक्त जल आचमन के लिए भगवती के मुख में समर्पित करे ।

पुनः 'ॐ सर्वकालुष्यहीनायै' से 'प्रसीद मे' पर्यन्त तथा मूल मन्त्र को पढ़ते हुए अनामिका से युक्त अंगुष्ठ को एक में मिला कर उसे अधोमुख कर मधु, घृत, शक्कर, दही, दूध मिश्रित मधुपर्क प्रदान करे । फिर 'ॐ उच्छिष्ट' से 'पुनराचमनीयकम्' पर्यन्त श्लोक एवं मूल मन्त्र को पढ़ते हुए यन्त्र स्थित भगवती के मुख में पुनः आचमन प्रदान करे । 'ॐ तापत्रयहरं' से 'कल्पयाम्यहम्' पर्यन्त श्लोक तथा

इति मूलं च पठन् 'इदमर्घ्यं दक्षिणकालिकायै निवेदयामि, एषोऽर्घः श्रीमद्दक्षिणकालिकायै स्वाहा' इत्यनेन पठितेन कुशाग्रा-ऽक्षत-तिल-व्रीहि - यवाज्य - सिद्धार्थ - पुष्प - मिश्रित-जलात्मकार्घ्यं शिरसि सर्वाङ्गुलीसंयोगेन दद्यात् ।

ततो हरिद्राद्युद्वर्त्तनद्रव्यं तैलं च दद्यात् ।

'ॐ स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकमातर्महाशये ।
सर्वलोकेषु शुद्धात्मन् ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥'

मूलं च पठन्, इदं हरिद्रादिद्रव्यं तैलं च दक्षिणकालिकायै निवेदयामि नमः' इत्युक्त्वा उद्वर्त्तयेत् ।

'ॐ परमानन्दबोधाब्धि - निमग्ननिजमूर्त्तये ।
साङ्गोपाङ्गमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीश्वरि ! ॥'

मूलं च पठन् 'इद स्नानीयं दक्षिकालिकायै निवेदयामि, इदं स्नानीयं दक्षिणकालिकायै नमः' इति पठित्वा, कनिष्ठा-

---

मूल मन्त्र सहित 'इदमर्घ्यं' से 'स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र का पाठ कर कुशाग्र, अक्षत, तिल, व्रीहि, यव, आज्य, श्वेतसर्षप एवं पुष्प मिश्रित जल को सभी अँगुलियों को एक में मिलाकर शिर पर प्रदान करे।

पुनः हरिद्रादि उद्वर्त्तन द्रव्य एवं तेल समर्पित करे। उसकी विधि इस प्रकार है—ॐ स्नेहं गृहाण' से लेकर 'उत्तमम्' पर्यन्त श्लोक पढ़ कर मूल मन्त्र के सहित 'इदं हरिद्रादिद्रव्यं' से लेकर 'निवेदयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर देवी के अङ्गों में उद्वर्त्तन करे। फिर 'ॐ परमानन्द' से 'ईश्वरि' पर्यन्त श्लोक पढ़ते हुए मूल मन्त्र सहित 'दक्षिणकालिकायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर कनिष्ठा रहित

हीनदक्षहस्तमुष्टयात्मिकया मुद्रया स्नानीयं दद्यात्। शतकृत्वः सहस्रकृत्वो यथाशक्ति वा मूलं पठन् स्नपयेत्।

'ॐ मायाचित्र - पटच्छन्न - निजगुह्योरुतेजसे।
निवारणाय विज्ञानवासस्ते कल्पयाम्यहम्॥'

मूलं च पठन् 'इदं वासो दक्षिणकालिकायै' इत्याद्युक्तवाक्येन उत्तानदक्षिणहस्ताङ्गुष्ठ-स्पृष्टतन्मध्यमात्मिकया रक्तं वासो दद्यात्।

'ॐ यामाश्रित्य महादेवो जगत्संहारकः सदा।
तस्यै ते परमेशान्यै कल्पयाम्युत्तरीयकम्॥'

इदमुत्तरीयं दक्षिकालिकायै इत्यादिवाक्येन पूर्वोक्तमुद्रयोत्तरीयं दद्यात्। ततो मूलेनाऽष्टोत्तरसहस्रशतदशान्यतमवारं गन्धोदकैर्देवीमभिषिञ्चेत्।

दाहिने हाथ के मुट्ठी की मुद्रा से स्नानीय जल प्रदान करे। एक सौ बार, एक हजार बार, या शक्ति के अनुसार मूल मन्त्र का जप करते हुए भगवती को स्नान करावे। और 'ॐ मायाचित्र' से 'कल्पयाम्यहम्' पर्यन्त श्लोक तथा मूल मन्त्र के सहित 'इदं वासो' से 'दक्षिणकालिकायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर दाहिने हाथ को उत्तान कर दाहिने हाथ के अँगूठे से स्पृष्ट मध्यमाङ्गुलि की मुद्रा से देवी को लाल वस्त्र पहनावे। 'ॐ यामाश्रित्य महादेवो' से 'उत्तरीयकम्' पर्यन्त श्लोक तथा मूल मन्त्र के सहित 'दक्षिणकालिकायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर पूर्वोक्त मुद्रा से उत्तरीय वस्त्र समर्पित करे। पश्चात् मूल मन्त्र का १०८, १००८, एक सौ अथवा दश बार जप कर सुगन्ध युक्त जल से देवी का अभिषेक करना चाहिए।

'ॐ स्वभावसुन्दराङ्गायै नानाशक्त्याश्रिते शिवे !।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चिते ॥'

'एतानि भूषणानि दक्षिणकालिकायै निवेदयामि नमः' इति वाक्येन दक्षहस्ताङ्गुष्ठस्पृष्टाऽनामिकात्मिकया मुद्रया भूषणानि दद्यात्। मूलमन्त्रेण सम्पुटितं प्रत्येकमातृकाक्षरं पठन् देवताङ्गेषु विन्यसेत्।

'ॐ परमानन्दसौभाग्य - परिपूर्णदिगन्तरे।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वरि ! ॥'

मूलं च पठन् 'इदं चन्दनं श्रीदक्षिणकालिकायै नमः' इति वाक्येन कर्पूरमिश्रित-श्रीखण्डचन्दनं बहुचन्दनं च कनिष्ठाङ्गुष्ठसंयोगेन देव्यङ्गे निवेदयेत्।

'ॐ अक्षतान् धवलान् देवि सुवर्णरौप्यमयीकृतान्।
गृहाण जगदीशाने प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

तदनन्तर 'ॐ स्वभाव' से 'निवेदयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर दाहिने हाथ के अँगूठे से अनामिका अँगुलि को स्पर्श की गई मुद्रा से भगवती को आभूषण प्रदान करे। तथा मूल मन्त्र से सम्पुटित मातृकाक्षरों को पढ़ते हुए तत्तद्देवताओं को अनेक अङ्ग में स्थापित करे। पश्चात् 'ॐ परमानन्द' से 'परमेश्वरि' पर्यन्त श्लोक तथा मूल मन्त्र के सहित 'इदं चन्दनं' से 'नमः' पर्यन्त वाक्य पढ़ते हुए कर्पूर से मिले हुए श्रीखण्ड चन्दन, एवं अन्य प्रकार के बहुत से चंदनों को देवी के अङ्ग में लगावे। फिर 'ॐ अक्षतान्' से 'परमेश्वरि'

मूलं च पठन् 'साङ्गायै सायुधायै सवाहनायै सपरिवारायै श्रीदक्षिणकालिकायै निवेदयामि नमः' इति वाक्येन सर्वाङ्गुलीभिर्दद्यात् । ततः--

'ॐ तुरीयवनसम्भूतं नानागुणमनोहरम् ।
अमन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥'

'एतानि पुष्पाणि दक्षिणकालिकायै वौषट्' इति मूलं च पठन् तर्जन्यङ्गुष्ठायोगेन दद्यात् । यथोत्पन्नमपर्युषितमच्छिद्रं नवं शुभं पुष्पं दद्यात् । अञ्जलिदाने त्वधोमुखता न दोषाय, 'श्वेतरक्त-जपापुष्प-करवीर-तगर-जाती-सेवन्ती-यूथिका-धत्तूराशोक-बकुल-श्वेतकृष्णापराजिताबकपुष्प-बिल्वपत्र-चम्पकनागकेशर- मल्लिका-झिणिका-काञ्चीबर्बराक-रक्तपद्मपुष्पामलककोकनद-बन्धूक-केतक्याद्यन्यतमपुष्पं निवेदयेत् । अर्कमन्दारौ

पर्यन्त श्लोक तथा मूल मन्त्र के सहित 'साङ्गायै' से लेकर 'नमः' पर्यन्त वाक्य को पढ़ते हुए सभी अँगुलियों से अक्षत चढ़ावे। 'ॐ तुरीयवन' से 'उत्तमम्' पर्यन्त श्लोक तथा 'एतानि' से 'वौषट्' पर्यन्त वाक्य तथा मूल-मन्त्र को पढ़ते हुए तर्जनी-अँगूठे को मिला कर पुष्प समर्पित करे। पुष्पाञ्जलि निवेदित करते समय अञ्जुली को अधोमुख करने में कोई दोष नहीं है, अतः धवल, रक्त, जपापुष्प, करवीर (कनैल), तगर, जाती, सेवन्ती, यूथिका, धतूर, अशोक, बकुल, श्वेत एवं कृष्ण वर्ण की अपराजिता, बकपुष्प, विल्वपत्र, चम्पक, नागकेशर, मल्लिका, झिणिका, काञ्ची, बर्बराक, रक्त कमलपुष्प, आमलक, कोकनद, बन्धूक, केतकी आदि पुष्पों में से कोई भी पुष्प भगवती को निवेदन करे। अर्क एवं मन्दार

अतिप्रशस्तौ । तुलसीं मालतीं वर्जयेत् । दूर्वया नाऽर्चयेत् धूपभाजनं 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य, 'नमः' इत्यभ्यर्च्य, वायुबीजेन द्वादशवारजप्तेन संशोष्य, वामहस्ततले दक्षहस्तपृष्ठं निवेश्य, 'रम्' इति बीजेन षोडशवारजप्तेन सन्दह्य, वामहस्तपृष्ठ दक्षहस्ततलं निवेश्य, 'वम्' इति षोडशवारजप्तेन धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, मूलेनाऽष्टशोऽभिमन्त्र्य, 'जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा' इति घण्टां सम्पूज्य, वामतर्जन्या संस्पृश्य, मूलं पठन् ।

'ॐ वनस्पतिरसोपेतो गन्धाढ्यः सुमनोहरः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥'

'एष धूपः श्रीदक्षिणकालिकायै नमः' इति शङ्खाम्बु प्रक्षिपेद् भूमौ, ततो वामहस्तेन घण्टां वादयन् दक्षतर्जन्यङ्गुष्ठायोगेन धूपमुद्रां दर्शयन् देवतागुणान् कीर्त्तयन् नाभिदेशतो धूपयेत् पुष्पाञ्जलित्रयं दद्यात् ।

अत्यन्त प्रशस्त हैं। तुलसी, मालती तथा दूर्वा के द्वारा काली का पूजन न करे। फिर 'फट्' मन्त्र पढ़ कर धूप के पात्र को स्वच्छ कर, 'नमः' पढ़ कर उसमें पुष्पाक्षत छोड़ पूजा करे। वायु बीज का बारह बार जप कर उसे सुखावे। बाँये हाथ के तलवे पर दाहिने हाथ के पृष्ठ भाग को रख कर 'रम्' इस वह्नि बीज को सोलह बार जप कर धेनु मुद्रा से उसे अमृत बनाकर मूल मन्त्र से आठ बार अभिमन्त्रित कर जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा' इस मन्त्र से घण्टा का पूजन कर बाँयें हाथ की तर्जनी से घण्टा का स्पर्श कर मूल मन्त्र के सहित 'ॐ वनस्पति' से 'नमः' पर्यन्त दाहिने हाथ की तर्जनी तथा अूगूठे को मिलाकर धूप मुद्रा से देवता के गुणों को वर्णन करते हुए नाभिदेश से ऊपर धूप देवे। पुनः तीन बार पुष्पाञ्जलि देवे।

एवं दीपदानप्रकारः—

'ॐ सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः।

सबाह्याभ्यन्तरज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥'

इति, मूलं च पठन् मध्यमाऽङ्गुष्ठायोगेन दीपमुद्रां प्रदर्श्य, नेत्रप्रदेशे दीपं दर्शयेत् ।

घृतदीपो दक्षिणे देहस्तैलदीपो वामतः। स्वर्णादिभाजने साज्यशर्करा-पायसादिकं-परिविष्य, चतुरस्रे निधाय, 'फट्' इति मन्त्रेण चक्रमुद्रयाऽभिरक्ष्य, द्वादशवारजप्तेन 'यम्' इति वायुबीजेन संशोष्य, वामहस्ततले दक्षहस्तपृष्ठे निवेश्य, 'रम्' इति वह्निबीजेन द्वादशवारजप्तेन सन्दह्य, दक्षकराग्रेण संस्पृश्य, 'वम्' इति सुधाबीजेन धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, मूलमन्त्रेण

तदनन्तर इसी प्रकार से भगवती को दीप देवे। सर्व प्रथम 'ॐ सुप्रकाशो' से 'प्रतिगृह्यतां' पर्यन्त श्लोक पढ़ कर मूल मन्त्र पढ़े, फिर मध्यमा एवं अँगूठे को मिला कर दीपमुद्रा प्रदर्शित करते हुए नेत्र के सामने दीप दिखावे। घृत का दीपक हो तो दाहिने, तेल का दीपक हो तो बाँयें स्थापित करे। पुनः सुवर्णादि पात्रों में घृत सहित शर्करा युक्त पायस रख कर समतल भूमि में रख कर 'फट्' इस मन्त्र को पढ़ चक्र मुद्रा से रक्षा कर 'यम्' इस वायु बीज का बारह बार जप तथा शोषण क्रिया करे। फिर बाँयें हाथ के तलवे पर दाहिने हाथ का पृष्ठ भाग रख कर 'रम्' इस वह्नि बीज को बारह बार जप कर उसके दोषों को जला कर दाहिने हाथ के अग्रभाग से स्पर्श कर 'वम्' इस सुधा बीज को पढ़ धेनु मुद्रा दिखाते हुए अमृतीकरण एवं मूल मन्त्र पढ़ते हुये दोनों हाथों से

कराभ्यां संस्पृश्य, अष्टधा चाऽभिमन्त्र्य, धेनुमुद्रां प्रदर्श्य, गन्ध-पुष्पैः समभ्यर्च्य, तत्त्वाख्यमुद्रया देव्यै नैवेद्यं निवेदयेत् ।'

'ॐ सत्पात्रसिद्धं स-हविर्विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेशि ! कृपया त्वं गृहाण तत् ॥'

इति पठन् ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य, शङ्खोदकेन निवेदयेत् । ततः—

'ॐ समस्तदेवदेवेशि ! सर्वावाप्तिकरं परम् ।
अखण्डानन्दसम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम् ॥'

इति पानीयमाचमनीयं च दत्त्वा, चुलुकं विधिवद् दद्यात् ।

पञ्चमुद्राः प्राणापानसमानोदानव्यानाख्याः प्रदर्शयेत् । तद्यथा-कनिष्ठानामिकाभ्यां प्राणमुद्रा । मध्यमातर्जनीभ्यामपानाख्या । अनामामध्यमाभ्यां समानाख्या । अनामातर्जनीभ्यामुदानाख्या । सर्वाङ्गुलीभिर्व्यानाख्या । ततो मूलेन ताम्बूलं

स्पर्श कर अथवा आठ बार अभिमन्त्रित कर धेनु मुद्रा दिखाते हुए गन्ध, पुष्प से अर्चित कर तत्त्व मुद्रा से देवी को नैवेद्य अर्पित करे। 'ॐ सत्पात्रसिद्धं' से गृहाण तत्' मन्त्र पढ़ते हुए ग्रास मुद्रा दिखा कर शङ्खस्थ जल से नैवेद्य लगावे । तदनन्तर 'ॐ समस्तदेव-देवेशि' से 'जलमुत्तमम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर नैवेद्य के मध्य में जल तथा आचमन देकर विधिपूर्वक एक चिल्लू जल देना ।

पुनः प्राणापान, समान, व्यान एवं उदान मुद्रा दिखावे । जो इस प्रकार है—कनिष्ठा-अनामिका को मिलावे, तो प्राणमुद्रा, मध्यमा, तर्जनी को मिलाने से अपान मुद्रा, अनामिका-मध्यमा को मिलावे तो समान मुद्रा, अनामिका-तर्जनी को मिलाने से उदान मुद्रा एवं सभी अँगुलियों को मिला देने से व्यान मुद्रा होती है ।

साधकस्तत्त्वमुद्रया एला - लवङ्ग - कर्पूर - जातीफलादिसंयुतं तमालदलकर्पूरपूगैरितं मुदान्वितो ध्यायन् 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य 'नमः' इत्यभ्यर्च्य, वायुबीजेन द्वादशवारजप्तेन संशोष्य। वामहस्ततलं दक्षहस्तपृष्ठे निवेश्य, 'रम्' इति बीजेन द्वादशवारजप्तेन सन्दह्य, वामहस्तपृष्ठे दक्षहस्ततलं निवेश्य, 'वम्' इति सुधाबीजेन धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, मूलेनाऽष्टवारमभिमन्त्र्य,

'ॐ एला-लवङ्ग-कर्पूर-नागवल्लीदलैर्युतम्।
पूगभागैरितं देवि ! ताम्बूलं गृह्यतां नमः॥'

मूलं पठन् 'इदं ताम्बूलं श्रीदक्षिणकालिकायै निवेदयामि नमः' इति मुखप्रदेशे तत्त्वमुद्रया दद्यात्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा,

---

साधक तत्त्वमुद्रा प्रदर्शित कर एला, लवङ्ग, कपूर तथा जातीफल से संयुक्त, सुरती, कपूर, सोपारी से संयुक्त ताम्बूल का ध्यान करे। 'फट्' इस मन्त्र को पढ़कर प्रोक्षण करे, 'नमः' मन्त्र पढ़ कर अर्चना करे, वायु बीज 'यम्' इस मन्त्र को बारह बार पढ़कर शोषण करे। बांयें हाथ के तलवे को दाहिने हाथ के पृष्ठ भाग पर रख कर 'रम्' इस वह्निबीज को बारह बार जप कर उसके दोषों को जलाकर बांयें हाथ के पृष्ठ पर दाहिने हाथ का तलवा रखकर 'वम्' इस सुधा बीज से धेनु मुद्रा प्रदर्शित कर उसका अमृतीकरण एवं मूल मन्त्र को आठ बार पढ़कर उसका अभिमन्त्रण कर 'ॐ एला' से 'नमः' पर्यन्त श्लोक पढ़कर मूलमन्त्र से युक्त 'इदं ताम्बूलं श्रीदक्षिण-कालिकायै निवेदयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर भगवती के मुख में तत्त्व मुद्रा से ताम्बूल अर्पित करे। पुनः हाथ में पुष्पाञ्जलि

'ॐ संविन्मये परेशानि परामृते चरुप्रिये ! ।
अनुज्ञां दक्षिणे देहि परिवारार्चनाय मे ॥'

तत्र प्रथमं षडङ्गपूजा । अग्नीशासुरवायव्येषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गशक्तीः पूजयेत् । तासां ध्यानं तु—

'तुषार-स्फटिक-श्याम-नीलकृष्णारुणास्तथा ।
वरदाभयधारिण्यः प्रधानतनवः स्त्रियः ॥'

इति ध्यात्वा, 'हृदयदेवते इहागच्छ इह तिष्ठ क्रां हृदयाय नमः श्रीपादुकां पूजयामि' इति सम्पूज्य, ततः 'शिरोदेवते इहागच्छ इह तिष्ठ क्रीं शिरसे स्वाहा श्रीपादुकां पूजयामि' 'शिखादेवते इहागच्छ इह तिष्ठ क्रूं शिखायै वषट् श्रीपादुकां पूजयामि' 'कवचदेवते इहागच्छ इह तिष्ठ क्रैं कवचाय हुम् श्रीपादुकां पूजयामि' 'नेत्रत्रयदेवते इहागच्छ इह तिष्ठ क्रौं

लेकर 'ॐ संविन्मये' से 'परिवारार्चनाय मे' पर्यन्त श्लोक पढ़कर पुष्पाञ्जलि समर्पित करे ।

आवरण-पूजा के पहले षडङ्ग पूजा करे । यन्त्र के अग्नि, ईशान, नैऋर्त्य, वायव्य कोण के मध्य में तथा दिशाओं में षडङ्ग शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

;तुषारस्फटिक' से 'प्रधानतनवः स्त्रियः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर उन षडङ्ग शक्तियों का ध्यान करे । एवं 'हृदयदेवते' से 'श्रीपादुकां पूजयामि' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर हृदय स्थान में पूजन करे, फिर 'शिरोदेवते' से 'श्रीपादुकां पूजयामि' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर सिर में तथा 'शिखा-देवते' 'श्रीपादुकां पूजयामि' पर्यन्त पढ़कर शिखा में तथा 'कवच-देवते' से 'श्रीपादुकां पूजयामि' पढ़कर दोनों हाथों पर । तदनन्तर 'नेत्रत्रयदेवते' से 'श्रीपादुकां पूजयामि' पढ़कर दोनों नेत्र तथा भ्रू

नेत्रत्रयाय वौषट् श्रीपादुकां पूजयामि' 'अस्त्रदेवते इहागच्छ इह तिष्ठ क्रः अस्त्राय फट् श्रीपादुकां पूजयामि।

ततो वायव्यादीशानपर्यन्त-गुरुपङ्क्तिं पूजयेत्।
तत्र गुरुक्रमो यथा—

'महादेवी महादेवस्त्रिपुरश्चैव भैरवः।
दिव्यौघा गुरवः प्रोक्ता सिद्धौघान् कथयामि ते ॥ १ ॥
ब्रह्मानन्दः पूर्णदेवश्चलचित्तश्चलाचलः।
कुमारः क्रोधनश्चैव वरदः स्मरदीपनः ॥ २ ॥
माया मायावती चैव मानवौघाच्छृणुष्व मे।
विमलः कुशलश्चैव श्रीमत्सेनः सुधाकरः ॥ ३ ॥
प्रह्लादः सनकश्चैव वसिष्ठो बोध एव च।
मीनो गोरक्षकश्चैव भोजदेवः प्रजापतिः ॥ ४ ॥
मूलदेवो रन्तिदेवो विघ्नेश्वरहुताशनौ।
समयानन्दसन्तोषौ कालिकागुरवस्तथा ॥ ५ ॥

स्थल पर फिर 'अस्त्रदेवते' से 'श्रीपादुकां पूजयामि' पढ़कर चारों ओर ताली बजाते हुए देवताओं का पूजन करे।

पुनः वायव्य से ईशानकोण पर्यन्त गुरुपंक्ति का पूजन करे। गुरुक्रम इस प्रकार है—महादेवी, महादेव, त्रिपुर और भैरव इन दिव्यदेवताओं के समूह को दिव्यौघ गुरु कहते हैं। अब सिद्धौघ गुरुओं को कहता हूँ--ब्रह्मानन्द, पूर्णदेव, चलचित्त, चलाचल, कुमार, क्रोधन, वरद, स्मरदीपन, माया और मायावती। मानवौघ गुरुओं के नाम--विमल, कुशल, श्रीमत्सेन, सुधाकर, प्रह्लाद, सनक, वसिष्ठ, बोध, मीन, गोरक्ष, भोजदेव, प्रजापति, मूलदेव, रन्तिदेव, विघ्नेश्वर, हुताशन, समयानन्द, सन्तोष—ये सभी आनन्द-

आनन्दनाथशब्दान्ते गुरवः सर्वसिद्धिदाः ।
स्त्रियोऽपि गुरुरूपाश्चेदम्बान्ताः परिकीर्तिताः ॥ ६ ॥

ततः पूजा—'महादेव्यम्ब इहागच्छ इह तिष्ठ महादेव्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि। महादेवानन्दनाथ इहागच्छ इह तिष्ठ महादेवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । त्रिपुरानन्दनाथ इहागच्छ इह तिष्ठ त्रिपुरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । भैरवानन्दनाथ इहागच्छ इह तिष्ठ भैरवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । सिद्धौघा इहागच्छत इह तिष्ठत ब्रह्मानन्दानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । पूर्णदेवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । चलच्चित्तानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । चलाऽचलानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । कुमारानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । क्रोधानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । वरदानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । स्मरदीपनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । मायाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि । मायावत्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि । इति ।

अथ मानवौघा इहागच्छत इह तिष्ठत । 'विमलानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । कुशलानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । श्रीमत्सेनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । सुधाकरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि । प्रह्लादानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि ।

नाथ शब्दान्त सिद्धियों को देने वाले गुरु कहे जाते हैं । अम्बाशब्दान्त स्त्रियाँ भी इन गुरुकोटियों में परिगणित हैं ।

तदनन्तर इन गुरुओं की पूजा करे—'महादेव्यम्ब' से 'पूजयामि' पर्यन्त पढ़कर महादेवी की । इसी प्रकार 'महादेवानन्दनाथ' से

सनकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। वसिष्ठानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। बोधानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। मीनानन्द-नाथश्रीपादुकां पूजयामि। गोरक्षकानन्दनाथश्रीपादुकां पूज-यामि। भोजदेवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। प्रजापत्या-नन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। मूलदेवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। रन्तिदेवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। विघ्ने-श्वरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। हुताशनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। समयानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। सन्तोषा-नन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि।'

ततो निजगुरुं पुरो ध्यात्वा, पञ्चोपचारैः सम्पूज्य। ततः–

'ॐअभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतपालिके।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम्॥'

इति मूलं च पठन्, पुष्प-चंदनयुतशङ्खोदकेन देव्या वामहस्ते आवरणपूजां समर्पयेत्।

ततो रश्मिवृन्ददेवताः पूजयेत्। तासां ध्यानं यथा–

'सन्तोषानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि' पर्यन्त इकतीस सिद्धों का तत्त-मन्त्रों से पूजन करे।

पुनः अपने आगे गुरु का ध्यान कर पञ्चोपचार से पूजन करे। 'ॐ अभीष्टसिद्धि' से 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर मूल मन्त्र पढ़ते हुए शंख में स्थापित पुष्प, चन्दन युक्त जल से देवी के बाँयें हाथ में आवरण पूजा समर्पित करे।

तत्पश्चात् रश्मिवृन्द देवताओं का पूजन करे। रश्मिवृन्द के

'सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमालाविभूषिताः ।
तर्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्यश्च सस्मिताः ॥'

बाह्यत्रिकोणस्थ सम्मुखकोणे 'ॐ कालीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' इति पाद्यादिभिस्त्रिः कालीं सम्पूजयेत् । एवं देव्या वामे 'कपालिनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' इति । दक्षे 'ॐ कुल्लाश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । तदन्तस्त्रिकोणे सम्मुखे 'ॐ कुरुकुल्लाश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । वामे 'ॐ विरोधिनीश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । दक्षे 'ॐ विप्रचित्ताश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । तदन्तस्त्रिकोणे सम्मुखे 'ॐ उग्राश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि ।

ततो वामे 'ॐ उग्रप्रभाश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । दक्षे 'ॐ दीप्ताश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । तदन्तस्त्रिकोणे सम्मुखे 'ॐ नीलाश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । वामे 'ॐ घनाश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । तदन्तस्त्रिकोणे

देवताओं के पूजा का प्रकार इस प्रकार है - साधक सर्वप्रथम 'सर्वाः' से 'सस्मिताः' पर्यन्त श्लोक पढ़ कर रश्मि देवताओं का ध्यान करे। बाह्यत्रिकोण के सम्मुख कोण में 'ॐ कालीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' पढ़कर तीन बार पाद्यादि अर्चन-सामग्री से काली का पूजन करे। इसी प्रकार देवी के बाँयें 'ॐ कपालिनी श्रीपादुकां पूजयामि नमः' से कपालिनी का तथा दाहिने, 'ॐ कुल्लाश्रीपादुकां॰' एवं 'ॐ कुरुकुल्लाश्रीपादुकां पूजयामि' से कुरुकुल्ला का। इसी प्रकार पुनः बाँयें 'ॐ विरोधिनीश्रीपादुकां पूजयामि', पुनः दाहिने 'ॐ विप्रचित्ताश्रीपादुकां पूजयामि' पढ़ कर पूजन करे। पुनः भीतर त्रिकोण के सम्मुख 'ॐ उग्राश्रीपादुकां पूजयामि' तथा बाँयें 'ॐ उग्रप्रभाश्रीपादुकां पूजयामि' तथा दाहिने 'ॐ दीप्ताश्रीपादुकां पूजयामि' पढ़ कर पाद्य आदि से पूजन करे।

सम्मुखे 'ॐ मात्राश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि। वामे 'ॐ मुद्राश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि। दक्षे 'ॐ मित्राश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि। पूर्वोक्तवाक्यैः पाद्यादिभिः पूजयेत्।

ततो देव्या दक्षे 'हसौं महाकालाय हूं फट्' इति मन्त्रेण महाकालं पूजयेत्। कुलार्णवे तु–'ॐ ह्रीं क्ष्मीं हूं महाकालाय ह्रौं महादेवाय क्रीं कालिकायै ह्रौं' इति महाकालमन्त्रः तद्ध्यानं तु—

'अञ्जनाद्रिनिभं देवं पिङ्गकेशं द्विबाहुकम्।
आशाम्बरं सर्पभूषाभूषितं प्रणमामि तम्॥

इति ध्यात्वा, पूर्वोक्तमन्त्रद्वयान्तरेण महाकालं पूजयेत्। ततः—'ॐ अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतपालिके।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम्॥'

इति मन्त्रेण शङ्खोदकादिना देव्या वामहस्ते आवरणार्चनं समर्पयेत्।

पुनः उसके भीतर त्रिकोण के सम्मुख ॐ नीलाश्रीपादुकां पूजयामि', फिर उसके बाँयें 'ॐ घनाश्रीपादुकां पूजयामि' तथा इसके भीतर के त्रिकोण के सम्मुख 'ॐ मात्राश्रीपादुकां पूजयामि', बाँयें 'मुद्राश्रीपादुकां पूजयामि' एवं दाहिने 'ॐ मित्राश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि वाक्य पढ़ कर तत्तद्देवियों का पाद्य आदि से पूजन करे।

देवी की दाहिनी ओर 'हसौं महाकालाय हूं फट्' इस मन्त्र से महाकाल का पूजन करना चाहिए। कुलार्णव में—'ॐ ह्रीं क्ष्मीं' से लेकर 'कालिकायै ह्रौं' पर्यन्त महाकाल का मन्त्र कहा गया है। और उनका ध्यान-'अञ्जनाद्रिनिभं' से 'प्रणमामि तम्' पर्यन्त

ततोऽष्टदले पूर्वादिक्रमेणाऽष्टशक्तीः पूजयेत् । तद्यथा-पूर्वे 'ॐ आंब्रह्माणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' इत्यदिवाक्येन पाद्यादिभिस्त्रिः सम्पूजयेत् । अग्निकोणे 'ॐ ईंश्रीनारायणीश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । दक्षिणे 'ॐ ऊंमाहेश्वरीश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । नैर्ऋते 'ॐ ऋंश्रीचामुण्डाश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । पश्चिमे 'ॐ लृंकौमारीश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । वायव्ये 'ॐ एंअपराजिताश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । उत्तरे 'ॐ औंवाराहीश्रीपादुकां पूजयामि'

श्लोक से, उनका ध्यान कर पूर्वोक्त मन्त्रों में किसी एक मन्त्र से महाकाल का पूजन करे। और 'अभीष्टसिद्धि' से लेकर 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ते हुए शङ्ख के जल से देवी के बाँयें हाथ में इस आवरणार्चन को समर्पित करे।

पुनः त्रिकोण के अष्टदल में पूर्वादि क्रम से आठ शक्तियों की पूजा करनी चाहिए। वह इस प्रकार है—सर्वप्रथम पूर्व दिशा में 'ॐ आं ब्रह्माणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' इत्यादि वाक्य पढ़ कर तीन बार ब्रह्माणी का पाद्यादि से अर्चन करे। इसी प्रकार अग्निकोण में 'ॐ इंश्रीनारायणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' से नारायणी की, दक्षिण में माहेश्वरी की, नैर्ऋत्य में श्रीचामुण्डा की, पश्चिम में कौमारी की, वायव्य में अपराजिता, उत्तर में वाराही की,

इत्यादि । ईशाने 'ॐ अःनारसिंहीश्रीपादुकां पूजयामि' इत्यादि । आसां ध्यानं तु पूजनतः पूर्वमेव कर्त्तव्यम् । तद्यथा–

'दण्डं कमण्डलुं पश्चादक्षसूत्रं महाभयम् ।
बिभ्रती कनकच्छायां ब्राह्मी कृष्णाजिनोज्ज्वला ॥ १ ॥
शूलं परश्वधं क्षुद्रं दुन्दुभीनृकरोटिकाम् ।
वहन्ती हिमसङ्काशा ध्येया माहेश्वरी शुभा ॥ २ ॥
अङ्कुशं दण्डखट्वाङ्गौ पाशं च दधती करैः ।
बन्धूकपुष्पसङ्काशा कुमारी कामदायिनी ॥ ३ ॥
चक्रं घण्टां कपालं च शङ्खं च दधती करैः ।
तमाल-श्यामला ध्येया वैष्णवी विभ्रमोज्ज्वला ॥ ४ ॥
मुशलं करवालं च खटकं दधती हलम् ।
करैश्चतुर्भिर्वाराही ध्येया कालघनच्छविः ॥ ५ ॥
अङ्कुशं तोमरं विद्युत् कुलिशं बिभ्रती करैः ।
इन्द्रनीलनिभेन्द्राणी ध्येया सर्वसमृद्धिदा ॥ ६ ॥

ईशान में नारसिंही की, मूल में निर्दिष्ट तत्तन्मन्त्रों से तीन बार पूजन करे, किन्तु इनके पूजन के पूर्व इन आठ महादेवियों का ध्यान अवश्य करना चाहिए। ध्यान का मन्त्र इस प्रकार है—'दण्डं' से 'कृष्णाजिनोज्ज्वला' पर्यन्त पूर्व में ब्राह्मी का १, 'शूलं परश्वधं' से 'माहेश्वरी शुभा' पर्यन्त पढ़कर माहेश्वरी का २, अङ्कुशं से 'काम-दायिनी' तक कौमारी का ३, 'चक्रं से 'विभ्रमोज्ज्वला' पर्यन्त पढ़ कर वैष्णवी का ४, 'मुशलं' से 'घनच्छविः' पर्यन्त पढ़ कर वाराही का ५, 'अङ्कुशं तोमरं' से 'सर्वसमृद्धिदा' पर्यन्त पढ़कर इन्द्राणी का ६,

शूलं कृपाणं नृशिरः कपालं दधती करैः ।
मुण्डस्त्र मण्डिता ध्येया चामुण्डा रक्तवि ग्रहा ॥ ७ ॥
अक्षस्रजं बीजपरं कपालं दधती करैः ।
वहन्ती हेमसङ्काशा मोहलक्ष्मीः समीरिता' ॥४॥ इति।

ततः—'अभीष्टसिद्धि मे देहि शरणागतपालिके ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम् ॥'

इति मूलं च पठन्, पुष्प-चन्दनयुत-शङ्खोदकेन देव्या वामहस्तेन समर्पयेत् ।

ततः यन्त्राग्रे भैरवान् पूजयेत् । तत्र प्रथमं ध्यानं कुर्यात् । तद्यथा—

'भीषणास्यं त्रिनयनमर्द्धचन्द्रविभूषितम् ।
स्फटिकाभं कङ्कणादिभूषाशतसमायुतम् ॥ १ ॥
अष्टवर्षवयस्कं च कुन्तलोल्लसितं भजे ।
धारयन्तं दण्डशूले भैरव्यादिसमायुतम्' ॥२॥

शूलं कृपाणं' से रक्तविग्रहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर चामुण्डा का ७, तथा 'अक्षस्रजं से 'समीरिता' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर महालक्ष्मी ८ का ध्यान करना चाहिए ।

पूर्व में इन आठ देवियों का जो आठ दिशाओं में पूजा का क्रम बताया गया है ध्यान के मन्त्रों में क्रम का विपर्यय हो गया है। साधक पूजा के क्रमानुसार ध्यान करें। इस प्रकार आठ महाशक्तियों का पूजन कर 'अभीष्टसिद्धि' से 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर शङ्ख में स्थापित पुष्प, चन्दन युक्त जल को देवी के लिए निवेदित कर उनके बाँयें हाथ में द्वितीय आवरणार्चन प्रदान करे। फिर यन्त्र के अग्रभाग में आठ महाभैरवों का पूजन करे।

सर्व-प्रथम 'भीषणास्यं' से 'भैरव्यादिसमायुतम्' पर्यन्त दो श्लोक

इति ध्यात्वा पूजयेत् । पूजाक्रमस्तु—

'एँ ह्रीं अं असिताङ्गभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं इं रुरुभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं उं चण्डभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं ऋं क्रोधभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं लृं उन्मत्तभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं एं कपालिभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं ओं भीषणभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।
एँ ह्रीं अं संहारभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

इति वामावर्त्तेन पूजयेत्—

तत्रैव पूर्वादितो वामावर्त्तेनाऽष्टभैरवीः प्रत्येकं तत्तन्नामाक्षरैस्तास्ताः पूजयेत् । तत्रासां ध्यानं तु—

पढ़ कर भैरवों का ध्यान करे, फिर पूर्वादि क्रम से ईशान पर्यन्त आठों दिशाओं में 'एं ह्रीं अं असिताङ्गभैरवश्रीपादुकां पूजयामि' से लेकर ऐं ह्रीं अं संहारभैरवश्रीपादुकां पूजयामि' पर्यन्त आठ मन्त्रों को पढ़ कर वामावर्त्त से क्रमशः पूर्व में असिताङ्ग भैरव, आग्नेय में रुरुभैरव, दक्षिण में चण्ड भैरव, नैर्ऋत्य में क्रोध भैरव, पश्चिम में उन्मत्त भैरव, वायव्य में कपालि भैरव, उत्तर में भीषण भैरव तथा ईशान में संहार भैरव का तत्तन्मन्त्रों से पूजन करे ।

इसी प्रकार वामावर्त्त से पूर्वादि दिशा से ईशान पर्यन्त तत्तद् भैरवियों के नाम मन्त्र से आठ भैरवियों का भी पूजन करे । सर्व-

'भावये च महादेवीं चन्द्रकोटियुतप्रभाम् ।
हिमकुन्देन्दुधवलां पञ्चवक्त्रां त्रिलोचनाम् ॥ १ ॥
अष्टादशभुजैर्युक्तां सर्वानन्दकरोद्यताम् ।
प्रहसन्तीं विशालाक्षीं देवदेवस्त्र सम्मुखीम्' ॥ २ ॥

इति ध्यात्वा पूजयेत् । यथा—'श्रीभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । महाभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । सिंहभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । धूम्रभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । भीमभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । उन्मत्तभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । वशीकरणभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः । मोहनभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

ततः—'ॐ अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतपालिके ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम् ॥'

इति मन्त्रेण देव्या वामहस्ते आवरणार्चनं समर्पयेत् । ततो यन्त्रबाह्ये इन्द्रादीन् पूजयेत् । तेषां ध्यानं यथा—'इन्द्रं नीलवर्णमैरावतवाहनं वज्रहस्तं मुकुटधारिणं सहस्राक्षं ध्या-

---

प्रथम 'भावये च' से 'सम्मुखीम्' पर्यन्त दो मन्त्रों को पढ़ते हुए ध्यान करे । पुनः पूर्वादि से ईशान पर्यन्त 'श्रीभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि' से लेकर 'मोहनभैरवीश्रीपादुकां पूजयामि' पर्यन्त आठ मन्त्रों को पढ़ कर पूर्व में श्री भैरवी, आग्नेय में महाभैरवी, वायव्य में उन्मत्त भैरवी, उत्तर में वशीकरण भैरवी, तथा ईशान कोण में मोहनभैरवी का तत्तन्मन्त्रों द्वारा पूजन करे ।

तदन्तर 'ॐ अभीष्टसिद्धि मे देहि' से 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर देवी के वामहस्त में तृतीय आवरण पूजा समर्पित करे । और यन्त्र के बाहर इन्द्रादिकों का पूजन करे । सर्व-प्रथम पूर्व में 'इन्द्रं नीलवर्णं' से 'सहस्राक्षं ध्यायेत्' पर्यन्त पढ़ कर इन्द्र

येत् । वह्निं रक्तवर्णं शक्तिहस्तं त्रिनेत्रं मेषवाहनं ध्यायेत् । यमं महिषवाहनं दण्डपाशधरं श्यामं ध्यायेत् । निर्ऋतिं श्यामवर्णं खड्गहस्तमृतपुरुषवाहनं ध्यायेत् । वरुणं पाशहस्तं मकरवाहनं शुद्धवर्णं ध्यायेत् । वायुमङ्कुशहस्तं मृगवाहनं नीलवर्णं ध्यायेत् । कुबेरं गदाहस्तं मत्स्यवाहनं श्यामवर्णं ध्यायेत् । ईशानं शूलहस्तं वृषभवाहनं त्रिनेत्रं गौरवर्णं ध्यायेत् ।

हंसमारूढं स्वर्णं च चतुर्वक्त्रं दण्डत्रयाक्षसूत्रं कमण्डलुं दधतं जटाजूटधरं ब्रह्माणं ध्यायेत् । श्यामं गरुडवाहनं शङ्खचक्रगदापद्मधारिणं चतुर्हस्तं नानालङ्कारसंयुक्तं विष्णुं ध्यायेत् । इति ध्यात्वा, 'इन्द्रादय इहागच्छत इह तिष्ठत' इत्यावाह्य । पूर्वादितो वामावर्त्तेन पूजयेत् । तद्यथा–'लं इन्द्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः । रं वह्निश्रीपादुकां पूजयामि नमः । यं

का, आग्नेय में 'वह्निं रक्तवर्णं' से 'मेषवाहनं ध्यायेत्' से अग्नि का दक्षिण में 'यमं महिषवाहणं से 'श्यामं ध्यायेत्' पर्यन्त पढ़ कर यम का, फिर नैर्ऋत्य में 'श्यामवर्णं' से, पुरुषवाहनं ध्यायेत्' पर्यन्त पढ़ कर निर्ऋति का, पश्चिम में, वरुणं पाशहस्तं' से 'शुद्धवर्णं ध्यायेत्' पढ़ कर वरुण का तथा वायव्य में 'वायुमङ्कुशहस्तं' से 'नीलवर्णं ध्यायेत्' पढ़ कर वायु का, उत्तर में 'कुबेरं' से 'श्यामवर्णं ध्यायेत्' पर्यन्त पढ़ कर कुबेर का, एवं ईशान में 'ईशानं' से 'गौरवर्णं ध्यायेत्' पर्यन्त पढ़ कर ईशान का ध्यान करे ।

इसी प्रकार ऊपर 'हंसमारूढं' से 'ब्रह्माणं ध्यायेत्' पर्यन्त वाक्य बोल कर ब्रह्मा का तथा नीचे 'श्यामं' से 'विष्णुं ध्यायेत्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर विष्णु का ध्यान कर 'इन्द्रादय इहागच्छत इह तिष्ठत' पर्यन्त वाक्य पढ़ कर इन्द्रादि दश दिक्पालों का आवाहन कर पूर्वादि

यमश्रीपादुकां पूजयामि नमः । क्षं निर्ऋतिश्रीपादुकां पूजयामि नमः । वं वरुणश्रीपादुकां पूजयामि नमः । यं वायुश्रीपादुकां पूजयामि नमः । इं कुबेरश्रीपादुकां पूजयामि नमः । हों ईशानश्रीपादुकां पूजयामि नमः । ह्रीं ब्रह्मश्रीपादुकां पूजयामि नमः । ततः–'ॐ विष्णुश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।'

'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतपालिके ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम् ॥

इति मन्त्रेण देव्या वामहस्ते आवरणार्चनं समर्पयेत् ।

ततो वामावर्त्तेन तत्तत्स्थले अस्त्राणि पूजयेत् । यथा–वं वज्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः । शं शक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः । दं दण्डश्रीपादुकां पूजयामि नमः । खं खड्गश्रीपादुकां पूजयामि नमः । पं पाशश्रीपादुकां पूजयामि नमः । अं अङ्कुशश्रीपादुकां पूजयामि नमः । गं गदाश्रीपादुकां पूजयामि नमः । शं शूलश्रीपादुकां पूजयामि नमः । पं पद्म-

---

क्रम से वामावर्त्त 'लं इन्द्रश्रीपादुकां पूजयामि' से 'ॐ विष्णुश्रीपादुकां पूजयामि नमः' पर्यन्त दश मन्त्र पढ़ कर दश दिक्पालों का पूजन करे।

तदनन्तर 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि' से 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर देवी के वाम हस्त में चतुर्थ आवरण पूजा का निवेदन करे। पुनः उसी प्रकार वामावर्त्त से पूर्वादि से ईशान पर्यन्त तत्तद्दिशाओं में अस्त्रों का 'वं वज्रश्रीपादुकां' से लेकर 'चं चक्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः' पर्यन्त दश मन्त्रों को पढ़ कर कम से कम पूर्वादि से ईशान पर्यन्त आठ दिशाओं में तथा अन्तिम के दो मन्त्रों से ऊपर

श्रीपादुकां पूजयामि नमः । चं चक्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः । ततः—'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतपालिके ।

भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम् ॥'

इति मन्त्रेण देव्या वामकरे आवरणार्चनं समर्पयेत् ।

ततः देव्या वामोर्ध्वहस्ते खं खड्गश्रीपादुकां पूजयामि नमः । तदधः—'मं मुण्डश्रीपादुकां पूजयामि नमः । दक्षोद्र्ध्वे अं अभयश्रीपादुकां पूजयामि नमः । तदधः—वं वरश्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

'ॐ अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतपालिके ।

भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम् ॥'

इति मन्त्रेण आवरणार्चनं देव्या वामकरे समर्पयेत् ।

और नीचे वज्रादि से लेकर चक्र पर्यन्त दश अस्त्रों का पूजन करे। तत्पश्चात्' 'अभीष्टसिद्धि' से 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर भगवती के बाँयें हाथ में आवरणार्चनम्' समर्पित करे।

तदनन्तर देवी के बाँयें, उपर वाले हाथ में 'खं खड्गश्रीपादुकां 'पूजयामि नमः' मन्त्र से खड्ग का तथा बाँयीं ओर के नीचे भाग में मं मुण्डश्रीपादुकां पूजयामि नमः' पढ़कर मुण्ड का। इसी प्रकार दाहिनी ओर के ऊपर वाले हाथ में 'अं अभयश्रीपादुकां पूजयामि नमः' से अभय मुद्रा का तथा दाहिनी ओर के नीचे वाले हाथ में 'वं वरश्रीपादुकां पूजयामि' पढ़कर वर मुद्रा का पूजन कर 'ॐ 'अभीष्टसिद्धि में' से 'आवरणार्चनम्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर देवी के वाम हस्त में आवरणार्चन को समर्पित करे।

पुष्पाञ्जलित्रयं देव्याः पादयोर्दद्यात् ।

ततः षडङ्गन्यासं पूर्वोक्तं कुर्यात् । तद्यथा – क्रां हृदयाय नमः क्रीं शिरसे स्वाहा । क्रूं शिखायै वषट् । क्रैं कवचाय हुम् । क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । क्रः अस्त्राय फट् ।

एवं न्यासं विधाय, गन्ध-पुष्पाक्षतैर्देवीं सम्पूज्य, मूलं पठन् श्रीमद्दक्षिणकालीं देवीं तर्पयामि नमः' इति मन्त्रेण मधुकर्पूरमिश्रितैर्जलैर्द्वादशधा तर्पयेत् । ततो घण्टां वादयंस्ततो जपं कुर्यात् ।

जपविधिः

ततः पूर्वोक्तक्रमेण प्राणायामं षडङ्गन्यासं च विदध्यात् । तद्यथा – क्रीं बीजेन १६ षोडशधापूरक, ६४ चतुष्षष्टिकुम्भक, ३२ द्वात्रिंशद्रेचकैस्त्रिवारं प्राणानायम्य, ततो न्यासः – 'क्रां

उसके बाद तीन पुष्पांजलि देवी के श्रीचरणों में समर्पित करे । तथा पूर्वोक्त कही हुई विधि से 'क्रां हृदयाय नमः' से 'क्रः अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर हृदयादि षडङ्गन्यास करे ।

इस प्रकार षडङ्गन्यास कर गन्ध, पुष्प, अक्षतादि द्रव्यों से देवी की पूजा कर मूल मन्त्र के सहित 'श्रीमद्दक्षिणकालीं देवीं तर्पयामि नमः' मन्त्र पढ़कर मधु एवं कपूर मिले हुए जल से दश बार श्री भगवती का तर्पण करे । पुनः घण्टा बजा कर देवी मन्त्र का जप प्रारम्भ करे ।

जप प्रारम्भ से पहले पूर्वोक्त विधि से प्राणायाम एवं षडङ्गन्यास करना चाहिए । जिसकी विधि इस प्रकार है–'क्रीं बीज को सोलह बार पढ़कर पूरक, चौंसठ बार पढ़कर कुम्भक, और बत्तीस बार

हृदयाय नमः क्रींशिरसे स्वाहा, क्रूंशिखायै वषट्, क्रैंकवचाय हुम्, क्रौंनेत्रत्रयाय वौषट्, क्रःअस्त्राय फट् ।'

ततः—'ॐ माले माले महामाले सर्वतरवस्वरूपिणी ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥'

'ॐ ह्रीं मालायै नमः' इत्यनेन मालां दक्षिणकरे निधाय, हृत्प्रदेशे समानीय, मध्यभागेन गुटिकां प्रत्येकं संस्पृशन् मेरुमङ्घयन् स्वशरीरे कामकलां विभाव्य, शिरसि गुरुं ध्यात्वा, हृदि देवीं भावयन् जिह्वायां मन्त्रं दीपरूपिणं विभाव्य तत्प्रभापटले जिह्वामपि दीपरूपां विभाव्य, मनसा उपांशुना वा, करमालया वर्णमालया वा, संस्कृतमहाशङ्ख-रुद्राक्ष-स्फटिकाद्यन्यतममालया वा, अष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतं वा द्रुतम्, विलम्बितं प्रजप्य, मालां सिरसि ।

पढ़कर रेचक करना चाहिए। पश्चात् 'क्रां हृदयाय नमः' से 'क्रः अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर हृदयादि न्यास करे।

पुनः 'ॐ माले माले' से 'ॐ ह्रीं मालायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर माला को दाहिने हाथ में लेवे और हृदयस्थान पर ले आकर मध्यभाग से प्रत्येक मन्त्र द्वारा माला के एक-एक दाने को स्पर्श करते हुए सुमेरु कार्ष लङ्घन न कर अपने शरीर को कामकला की भावना करते हुए, शीर्ष स्थान में गुरु का ध्यान कर हृदय में देवी का स्मरण करते हुए जिह्वा पर मन्त्र रूपी दीप की कल्पना कर जिह्वा को भी दीप रूप में समझते हुए, मानस उपांशु रूप जप, करमाला से, वर्णमाला से अथवा अत्यन्त सुसंस्कृत महाशङ्ख, रुद्राक्ष अथवा स्फटिक निर्मित माला में किसी एक माला से एक हजार आठ अथवा एक सौ आठ बार सामान्य प्रकार से, उसमें न तो जल्दीबाजी हो, न विलम्ब हो; देवी के मन्त्र का जप करे। जप करने के बाद 'ॐ त्वं माले' से

'ॐ त्वं माले सर्वभूतानां सर्वलोकप्रिया मता ।
शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च सर्वदा ॥'

इति पठन् निधाय, 'ह्रीं सिद्धयै नमः' इति सम्पूज्य ।

पुनः प्राणायामं न्यासादिकं च विधाय, यथा क्रीं बीजेन १६ पूरक, ६४ कुम्भक, ३२ रेचकैस्त्रिवारं प्राणानायम्य ।

ततो न्यासः—'क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा । क्रूं शिखायै वषट् । क्रैं कवचाय हूम् । क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्रः अस्त्राय फट्, इति न्यासादिकं कुर्यात् ।

ततो देवतां पुष्पाक्षतादिभिः सम्पूज्य, पुष्प-चन्दनाऽक्षत-युतशङ्खोदकेन—

'ॐ गुह्यातिगुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादात् महेश्वरि ! ॥'

इति मन्त्रेण देव्या वामकरे तेजोमयं जलं ध्यात्वा, जपं समर्पयेत् ।

'सर्वदा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ते हुए माला को शिर पर रखे । पुनः 'ह्रीं सिद्धयै नमः' मन्त्र से उसका पूजन करे ।

पुनः पूर्वोक्त रीति से प्राणायाम एवं न्यास करे । विधि इस प्रकार है—'क्रीं' बीज का सोलह बार जप करते हुए पूरक, चौंसठ बार जप करते हुए कुम्भक, बत्तीस बार जप करते हुए रेचक प्राणायाम कर 'क्रां हृदयाय नमः' से 'क्रः अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर हृदयादि न्यास करे ।

गन्ध, पुष्पाक्षतादि से देवी का पूजन कर पुष्प, चन्दन, अक्षत से युक्त शङ्खोदक से 'ॐ गुह्यातिगुह्य' से 'महेश्वरि' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर तेजोमय देवी का ध्यान करते हुए उनके बायें हाथ में जप समर्पित करे ।

ततो मालां सिरस उत्तार्य,

'ॐ त्वं माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता।

तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नमोऽस्तु ते ॥'

इत्यमुं मन्त्रं पठन् सम्पूज्य, यत्नतो गोपयेत्। ततो देव्यै पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्त्वा, स्तोत्र-कवचादिकं पठेत्।

कराद् भ्रंशेत्तच्छान्त्यर्थमष्टोत्तरशत मूलं जपेत्।

ततो वामे चतुरस्रं मण्डलं विधाय, किञ्चित् पात्रे संस्थाप्य, तस्मिन् मांस-माषान्न-शाका-ऽऽज्य-पायसा-ऽपूपकाद्यन्यतमबलिं विधाय, 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य, 'नमः' इत्यभ्यर्च्य, 'यम्' इति वायुबीजेन द्वादशवारजप्तेन संशोष्य, वामहस्ततले दक्षहस्तपृष्ठं निवेश्य, 'रम्' इति वह्निबीजेन षोडशवारजप्तेन

तत्पश्चात् माला को शिर से उतार कर, 'ॐ त्वं माले सर्वदेवानां' से 'मातर्नमोऽस्तु ते' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर माला का पूजन करे तथा यत्न से उसे गुप्त रखे। पुनः देवी को आठ बार पुष्पाञ्जलि समर्पित कर देवी के स्तोत्र एवं कवचादि का पाठ करे।

यदि माला हाथ से गिर जाय, तो एक सौ आठ बार मूलमन्त्र का जप कर उसका प्रायश्चित्त करे।

तदनन्तर बाँयीं ओर चौकोर, समतल मण्डल का निर्माण कर उस मण्डल पर किसी पात्र में मांस, ऊर्द, शाक, आज्य, पायस, अपूप आदि में से कोई भी बलि वस्तु रखकर, मण्डल, में उसे स्थापित करे। 'फट्' इस मन्त्र से उसका प्रोक्षण कर 'नमः' मन्त्र पढ़कर अर्चना करे। 'यम्' इस वायु बीज को बारह बार पढ़कर उसका शोषण करे। पश्चात् बाँयें हाथ के तलवे पर दाहिने हाथ के पृष्ठ तल को रखकर 'रम्' इस अग्नि बीज के मन्त्र को सोलह बार जप कर, उसके दोषों को जला दे, फिर 'वम्' इस अमृत बीज मन्त्र को बीस बार जप कर,

संदीप्य, 'वम्' इत्यमृतबीजेन विंशतिवारजप्तेन धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, 'हुम्' इत्यवगुण्ठ्य, योनिधेनुमुद्रे दर्शयित्वा, तत्त्वमुद्रां च प्रदर्श्य,

'ॐ क्रींश्रींदक्षिणकालिकायै स्वाहा एष बलिर्नमः' इत्युत्सृज्य, नैऋत्यां दिशि धारयेत् । एष नित्यबलिदानमन्त्रः ।

रात्रौ काम्यबलिर्देयः । तत्र मन्त्रस्तु—

'ॐ पद्मे पद्मे महापद्मे पद्मावति महायक्षाधिपतये मयोपनीतमिमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय मम सर्वशान्तिं कुरु कुरु परविद्यां चाकृष्याकृष्य छिन्धि ह्रीं हूं स्वाहा' इति मन्त्रेण चतुष्पथादिस्थाने पूर्वोक्तशोधनं विधाय, तत्त्वमुद्रां प्रदर्श्य, मांसाद्यन्यतमबलिं दद्यात् । अधिकभक्त्युत्तरशक्तिकालादिलाभे चतुर्थ्यन्तैः प्रत्येकैः सहस्रनामस्तोत्रान्तर्गतनामभिः (सहस्रनामावलीभिः) पुष्पादिना कालीं पूजयेत् ।

उसे धेनु मुद्रा दिखा अमृतीकरण करे । फिर 'हुम्' इस मन्त्र से उस पात्र को घेर कर योनि मुद्रा तथा धेनु मुद्रा दिखा तत्त्व मुद्रा प्रदर्शित करे ।

तदनन्तर 'ॐ क्रीं श्रीं दक्षिणकालिकायै स्वाहा एष बलिर्नमः' मन्त्र पढ़ बलिदान देकर नैऋत्य कोण में बलि पात्र को स्थापित करे । यह नित्य का बलिदान मन्त्र है । यदि काम्य कर्म हो, तो रात्रि में 'ॐ पद्मे पद्मे महापद्मे 'से' ह्रीं हूं स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर चतुष्पथ (चौराहे) पर, उस स्थान को पूर्वोक्त रीति से शुद्ध कर तत्त्व मुद्रा प्रदर्शित कर मांस आदि किसी भी वस्तु की बलि देवे । अधिक भक्ति अधिक शक्ति तथा अधिक काल होने पर पुष्पादि द्वारा श्री महाभगवती के सहस्र नाम के प्रत्येक नाम के अन्त में चतुर्थी विभक्ति (काली सहस्रनामावली) लगाकर श्री भगवती काली को पुष्पादि समर्पित करना चाहिए ।

कुमारीसुवासिनीपूजाविधिः

कुमारीं सुवासिनीं च पूजयेद् भोजयेच्च। तत्क्रमो यथा—पूजागृहे कुमारीमानीय, प्रदक्षिणीकृत्योद्वर्त्तनाद्यैः स्नापयित्वा, गन्धतैलेन शरीरं संस्कुर्यात्। केशं परिष्कृत्य, ललाते सिन्दूरम्, नयनयोः कज्जलम्, सर्वाङ्गे चन्दनम्, वस्त्रालङ्कारैराभूष्य, पादौ प्रक्षाल्य, पीठोपरि समावेश्य, ताम्बूलेन मुखं संशोध्य, स्वयमपि न्यासं कृत्वा, षडङ्गेषु न्यसेत्। 'ॐ क्लां कुलकुमारिके हृदयाय नमः। क्लीं कुलकुमारिके शिरसि स्वाहा। ॐ क्लूं कुलकुमारिके शिखायै वषट्। ॐ क्लैं कुलकुमारिके कवचाय हुम्। ॐ क्लौं कुलकुमारिके नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ क्लः कुलकुमारिके अस्त्राय फट्।'

ततोऽङ्गेषु मातृकान्यासाः। स च यथा—'अं नमो ललाटे। आं नमो मुखवृत्ते। इं नमो दक्षनेत्रे। ईं नमो वामनेत्रे। उं नमो

सहस्र नामावली द्वारा पुष्प समर्पण के अनन्तर कुमारियों तथा सुवासिनियों को भोजन करावे ('सद्यः परिणीता अथवा परिणयानन्तरं पतिगृहादागता वधूः, सुवासिनी' कही जाती है)। पूजागृह में कुमारियों को बुला कर उबटन आदि का लेप कर उन्हें स्नान करावे। इत्रादि सुगन्धित पदार्थ लगा कर उनके शरीर का संस्कार करे। केश का परिष्कार करे, मस्तक में सिन्दूर तथा नेत्रों में कज्जल लगा कर उनके सर्वाङ्ग में चन्दन का लेप करे। वस्त्र एवं अलङ्कारों से भूषित करे। उनका चरण प्रक्षालन कर उत्तम आसन पर बिठावे। ताम्बूल के द्वारा उनका मुख शुद्ध कर स्वयं न्यास कर उनके अङ्गों में 'ॐ क्लां कुलकुमारिके हृदयाय नमः' से 'ॐ क्लः कुलकमारिके अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर षडङ्गन्यास करे।

दक्षकर्णे। ऊँ नमो वामकर्णे। ऋं नमो दक्षनासायाम्। ॠं नमो वामनासायाम्। लृं नमो दक्षगण्डे। ॡं नमो वामगण्डे। एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं नमः अधरोष्ठे। ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ। औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ। अं नमः शिरसि। अः नमो मुखे।' ततो ध्यायेत् –

'शङ्खकुन्देन्दुधवलां द्विभुजां वरदाभयाम्।
चन्द्रमध्यमहां मोज-भावहाव-विराजिताम्॥'

एवं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, पुनर्ध्यात्वा, पूजयेत्। यथा 'इदं पाद्यं ह्रीं कुलकुमारिकायै नमः' एवम् 'इदमर्घमिदमाचमनीयमिदमनुलेपनमेतेऽक्षताः एतानि पुष्पाणि एष धूपः एष दीपः इदं नैवेद्यमिदं ताम्बूलं ह्रींकुलकुमारिकायै नमः' इति मन्त्रेण पूजयेत्। अतः षडङ्गमन्त्रेण षडङ्गानि पूजयेत्। तद्यथा –'ॐ क्लां कुलकुमारिके हृदयाय नमः। ॐ क्लीं कुलकुमारिके शिरसे नमः। ॐ क्लूं कुलकुमारिके शिखायै नमः। ॐ क्लैं कुलकुमारिके कवचाय नमः। ॐ क्लौं

पुनः उनके अङ्गों में 'ॐ अं नमो ललाटे' से 'अः नमो मुखे' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर तत्तदङ्गों का स्पर्श करते हुए मातृका न्यास करे।

उसके बाद 'शङ्खकुन्देन्दुधवलां' से 'विराजितां' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर कुमारी का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन करे। पुनः ध्यान कर 'इदं पाद्यं ह्रीं कुलकमारिकायै नमः' से 'ताम्बूलं ह्रीं कुलकुमारिकायै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, अनुलेपन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य एवं ताम्बूल से पूजन करे। तदनन्तर 'ॐ क्लां कुलकुमारिके हृदयाय नमः' से 'ॐ क्लः कुल-

कुलकुमारिके नेत्रत्रयाय नमः। ॐ क्लः कुलकुमारिके अस्त्राय नमः' इत्यङ्गानि पूजयित्वा प्रार्थयेत्। तत्र मन्त्रो यथा—

ॐ जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणी।
पूजां गृहाण कौमारि! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥
त्रिपुरां त्रिगुणां धात्रीं ज्ञानमार्गस्वरूपिणीम्।
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥ २ ॥
कालात्मिकां कालभीतां कारुण्यहृदयां शिवाम्।
कारुण्यजननीं नित्यां कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥ ३ ॥
अणिमादिगुणोपेतामकारादि-स्वरात्मिकाम् ।
शक्तिभेदात्मिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥ ४ ॥
कलाधरां कलारूपां कालचण्डस्वरूपिणीम्।
कामदां करुणाधारां कामिनीं पूजयाम्यहम् ॥ ५ ॥
चण्डधारां चण्डमायां चण्डमुण्डविनाशिनीम्।
प्रणमामि च देवेशीं चण्डिकां पूजयाम्यहम् ॥ ६ ॥
सुखानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम्।
सर्वभूतात्मिकां देवीं शङ्करीं पूजयाम्यहम् ॥ ७ ॥
दुर्गमे दुस्तरे चैव दुःखत्रयविनाशिनीम्।
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गे नमाम्यहम् ॥ ८ ॥

कुमारिके अस्त्राय नमः' पर्यन्त मन्त्रों को पढ़ते हुए हृदयादि षडङ्ग-न्यासपूर्वक अङ्गों का तीन बार पूजन कर 'ॐ जगत्पूज्ये' से 'सुभद्रां प्रणमाम्यहम्' पर्यन्त नव मन्त्रों को पढ़कर क्रमशः प्रत्येक

सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम् ।
सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां प्रणमाम्यहम्' ॥ ९ ॥

(कौमारी, त्रिपुरा, कल्याणी, रोहिणी, कामिनी, चण्डिका, शङ्करी, दुर्गा, सुभद्रा—इति कुमारीनामानि)

ततः कर्पूरादिवर्त्तिकारचिताऽऽरार्तिकं दत्त्वा, दक्षिणां च दत्त्वा, प्रणम्य, विसर्जयेत् ।

'ॐ ह्रीं हंसः कुलकुमारिकाश्रीपादुकां पूजयामि' इति पुष्पाञ्जलित्रयं च दत्त्वा कालीं पूजयेत् । तद्यथा—'ॐ ऐं सन्ध्यायै नमः । ॐ ऐं सरस्वत्यै नमः । ॐ ऐं त्रिमूर्त्यै नमः । ॐ ऐं कालिकायै नमः । ॐ ऐं सुभगायै नमः । ॐ ऐं उमायै नमः ॐ ऐं कुब्जिकायै नमः । ॐ ऐं काल ङ्कर्षिण्यै नमः । ॐ ऐं अपराजितायै नमः । ॐ ऐं भैरव्यै नमः । ॐ ऐं महालक्ष्म्यै नमः । ॐ ऐं पीठनायिकायै नमः । ॐ ऐं क्षेत्रज्ञायै नमः ॐ ऐं चर्चिकायै नमः ॥ १६ ॥

ततो मूलेन पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा, प्रदक्षिणीकृत्य प्रणमेत् ।

कुमारियों की प्रार्थना करे । (कुमारी, त्रिपुरा, कल्याणी, रोहिणी, कामिनी, चण्डिका, शङ्करी, दुर्गा, सुभद्रा दो से दश वर्ष पर्यन्त कुमारियों के नाम हैं । तथा कपूर की बत्ती से कुमारियों की आरती कर दक्षिणा देवे और प्रणाप कर उनका विसर्जन करे ।

अनन्तर 'ॐ ह्रीं हंसः' इत्यादि मन्त्र को तीन बार पढ़कर देवी को तीन बार पुष्पाञ्जलि समर्पित कर महाकाली का 'ॐ ऐं सन्ध्यायै नमः' से 'ॐ ऐं चर्चिकायै नमः' पर्यन्त सोलह मन्त्रों को पढ़कर देवी का पूजन करे । पश्चात् मूल मन्त्र से तीन बार पुष्पांजलि प्रदान कर प्रदक्षिणा एवं प्रणाम करे ।

बलिदानप्रकारः

ततश्छागादिबलिं दद्यात् । तद्यथा—छागं सिन्दूराद्यैरलङ्कृत्य, अर्घ्योदकेन 'दुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहा' इति त्रिः प्रोक्ष्य, स्नापयेदनेन ।

'ॐ वाराही यमुना गङ्गा करतोया सरस्वती ।
कावेरी चन्द्रभागा च सिन्धुर्भैरवसागरः ॥ १ ॥
अजस्नाने महेशानि ! सान्निध्यमिह कल्पय ।
पशुपाशविनाशाय हेमकूटस्थिताय च ।
पराय परमेष्ठिने हूङ्काराय च मूर्त्तये' ॥ २ ॥

ततो गन्धोदकेन त्रिः प्रोक्ष्य, कृताञ्जलिः पठेत्—

'ॐ छाग ! त्वं बलिरूपेण महाभाग्यादुपस्थितः ।
प्रणमामि सदा भक्त्या रूपिणं बलिरूपिणम् ॥ १ ॥
चण्डिकाप्रीतिकामस्य दातुरापद्-विनाशिने ।
चण्डिकाबलिरूपाय बले ! तुभ्यं नमो नमः ॥ २ ॥
यज्ञार्थे पशवः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा ।
अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः' ॥ ३ ॥

देवी पूजन के बाद छागादि की बलि करे। उसकी विधि इस प्रकार है—छाग को सर्वप्रथम सिन्दूर आदि से अलंकृत कर पूर्वोक्त अर्घ्यं पात्रस्थ जल से 'दुर्गे दुर्गे रक्षिणी स्वाहा' इस मन्त्र को तीन बार पढ़ कर तीन बार उस छाग का प्रोक्षण करे। तदनन्तर 'ॐ वाराही' से 'हूङ्काराय च मूर्त्तये' पर्यन्त दो श्लोक पढ़ कर छाग को स्नान करावे। चन्दन मिश्रित जल से उसे तीन बार प्रोक्षण कर हाथ जोड़ 'ॐ छाग त्वं' से 'वधोऽवधः' पर्यन्त तीन श्लोक पढ़ कर उस छाग की प्रार्थना करे।

ततः पार्श्वपूजा – 'ॐ जयन्त्यै नमः ३। ॐ मङ्गलायै नमः ३। ॐ काल्यै नमः ३। ॐ भद्रकाल्यै नमः ३। ॐ मानस्तोकायै नमः ३। ॐ विजयायै नमः ३। ॐ अपराजितायै नमः ३।' मध्ये 'ॐ अनन्तायै नमः।'

ततः प्रत्यङ्गं पूजयेत्। शिरसि 'रुधिरवदनायै नमः।' कपोले 'चण्डिकायै नमः।' चक्षुषोः 'चन्द्रार्काभ्यां नमः।' कर्णयोः 'बृहस्पतये नमः।' नासायाम् 'सरस्वत्यै नमः। जिह्वायाम् 'उग्रदन्तिकायै नमः।' ग्रीवायां 'महादन्तिकायै नमः।' उदरे 'पृथिव्यै नमः।' जङ्घाचतुष्टये 'घर्माय नमः।' ततो जलं गृहीत्वा, हस्ते 'ॐ ह्रीं श्रीं वरुणमण्डलाधिष्ठितविग्रहायै पशुरूपचण्डिकायै इमं पशुं प्रोक्षामि स्वाहा' इति पशुप्रोक्षणम्।

ततस्तिल-कुश-जलान्यादाय, 'ॐ अद्यामुकमास्यमुकपक्षेऽमुकतिथावमुकगोत्रः श्रीअमुकशर्मा छागसमसङ्ख्यक-वशवर्षा-

---

तदनन्तर 'ॐ जयन्त्यै नमः' से 'ॐ अपराजितायै नमः' पर्यन्त मन्त्र को तीन-तीन बार पढ़ते हुए छाग के पार्श्वभाग का तथा 'ॐ अनन्तायै नमः' मन्त्र पढ़ कर मध्य भाग की पूजा करे। 'फिर उसके प्रत्येक अङ्ग का पूजन करे। जो इस प्रकार है—'रुधिरवदनायै नमः' से 'घर्माय नमः' पर्यन्त्र मन्त्र पढ़ कर क्रमशः सिर, कपोल, दोनों कान, नासिका, जिह्वा, ग्रीवा, उदर तथा चारों पैर के चारों जङ्घों का पूजन करे।

पुनः हाथ में जल लेकर 'ॐ ह्रीं श्रीं' से 'स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र पढ़ते हुए उस छाग रूप पशु का प्रोक्षण करे। पुनः हाथ में तिल, कुशा

वच्छिन्न-श्रीमद्दक्षिणकालिकाप्रीतिकामोऽहमेतान् छागान् वह्निदैवतान् भगवत्यै श्रीदक्षिणकालिकायै तुभ्यं घातयिष्ये'। ततो गन्धादिभिः खड्गमर्चयेत्।

'ॐ कृष्णं पिनाकपाणिं च कालरात्रिस्वरूपिणम्।
उग्रं रक्तास्यनयनं रक्तमाल्यानुलेपनम्॥
रक्ताम्बरधरं चैव पाशहस्तं कुटुम्बिकम्।
पिबमानं च रुधिरं भुञ्जानं कव्यसंहतिम्॥'

'ॐ कालिका कालि वज्रेश्वरीलौहदण्डाय नमः' इति त्रिः सम्पूज्य, सिन्दूरादिना ह्रींकारं विलिख्य, 'खड्गाय नमः' इति सम्पूज्य, बलिकर्णे बलिगायत्रीं श्रावयेत्।

बलिगायत्रीमन्त्रः

'ह्रींबलिरूपाय विद्महे देवीप्रियाय धीमहि। तन्नः पशुः प्रचोदयात्॥'

तथा जल लेकर 'ॐ अद्य' से लेकर 'घातयिष्ये' पर्यन्त वाक्य पढ़कर संकल्प करे। उसके बाद गन्धादि द्वारा 'ॐ कृष्णं पिनाकपाणिं च' से 'लौहदण्डाय नमः' पर्यन्त मन्त्र तीन बार उच्चारण कर तीन बार खड्ग की अर्चना करे। और सिन्दूर से उस पर तीन ह्रींकार लिख कर पुनः 'खड्गाय नमः' मन्त्र बोल कर खड्ग का पूजन करे। तदनन्तर बलि के लिए लाये गये बकरे के कान में 'ह्रींबलिरूपाय' से 'प्रचोदयात्' पर्यन्त बलि-गायत्री के मन्त्र को सुनावे।

ततः खड्गं प्रार्थयेत्—

'ॐ असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ।
श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपाल नमोऽस्तु ते ।। १ ।।
इत्यष्टौ तव नामानि स्वयमुक्तानि वेधसा ।
नक्षत्रं कृत्तिका ते तु गुरुर्देवो महेश्वरः ।। २ ।।
रोहिण्यश्च शरीरं ते धाता देवो जनार्दनः ।
पिता पितामहो देवस्त्वं मां पालय सर्वदा ।। ३ ।।
नीलजीमूतसङ्काशस्तीक्ष्णदंष्ट्रः कृशोदरः ।
भावशुद्धोऽमर्षणश्च अतितेजास्तथैव च ।। ४ ।।
इयं येन धृता क्षोणी हतश्च महिषासुरः ।
तीक्ष्णधाराय शुद्धाय तस्मै खड्गाय ते नमः' ।। ५ ।।
'चण्डिकारसनाबुद्धचा एकघाते तु घातयेत् ।
पशुपाशाय विद्महे विप्रकर्णाय धीमहि ।
तन्नश्छागः प्रचोदयात् ।।'

सकलं रुधिरं मुण्डं च देव्यग्रे कृत्वा, समभागेन सम्पूर्णं परमं कविर्दीपयेत् ।

पुनः 'ॐ असिर्विशसनः' से लेकर 'तस्मै खड्गाय ते नमः' पर्यन्त पाँच श्लोक पढ़कर खड्ग की प्रार्थना करे । तलवार को भगवती की जीभ समझ कर एक ही झटके में 'पशुपाशाय' से 'तन्नश्छागः प्रचोदयात्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर उस बलि के बकरे को काट देवे । और सम्पूर्ण रुधिर तथा मुण्ड को देवी के आगे रख कर समभाग से उसके कवि

मांससमीपज दीपं 'क्रौं क्रौं नमो नमः' अनेन मुण्डे-मुण्डे दीपं दद्यात्ततस्तर्पयेदेभिः । पूर्वे 'चामुण्डां तर्पयामि नमः । दक्षिणे 'योगिनीं तर्पयामि नमः ।' पश्चिमे 'डाकिनीं तर्पयामि नमः' उत्तरे 'भैरवीं तर्पयामि नमः । आग्नेय्याम् 'बिदारिकां तर्पयामि नमः ।' नैर्ऋत्ये 'पापराक्षसीं तर्पयामि नमः ।' वायव्ये 'पूतनां तर्पयामि नमः ।' ईशाने 'कालिकां तर्पयामि नमः । ॐ अद्य दशवर्षावच्छिन्न-श्रीदक्षिणकालिकाप्रीतिकाम इमं छागरुधिरं समुण्डं विष्णुदैवतं भगवत्यै श्रीदक्षिणकाल्यै तुभ्यमहं सम्प्रददे' ।

इति छागदानविधिः ।

(मांस भाग) को भी चमड़े से अलग कर उसे दीपक द्वारा प्रकाशित करे। मांस के समीप में रखे गये उस दीपक को 'क्रौं क्रौं नमो नमः' मन्त्र पढ़ कर प्रत्येक मुण्ड पर रखे। तत्पश्चात् उस मुण्ड से भगवती का तर्पण करे। पूर्व में 'चामुण्डां तर्पयामि नमः' 'दक्षिण में 'योगिनीं तर्पयामि नमः' पश्चिम में 'डाकिनीं तर्पयामि नमः', उत्तर में 'भैरवीं तर्पयामि नमः', अग्निकोण में 'बिदारिकां तर्पयामि नमः', नैर्ऋत्य में 'पापराक्षसीं तर्पयामि नमः', वायव्य में 'पूतनां तर्पयामि नमः', ईशान में 'कालिकां तर्पयामि नमः', मन्त्र पढ़ कर तर्पण करे। तत्पश्चात् 'ॐ अद्य' से 'तुभ्यमहं सम्प्रददे' पर्यन्त संकल्प-वाक्य पढ़ कर भगवती का छाग दान का संकल्प करे।

इस प्रकार छाग बलिदानविधि समाप्त ।

आरार्त्तिकम्

तत आरार्त्तिकम् । तद्यथा कस्मिंश्चित् स्वर्णादिभाजने गोधूमचूर्णपिष्टे कर्पूरमिश्रिता एकादश श्वेतवर्त्तिकाः प्रज्वाल्य, धूपदानविध्युक्तप्रकारेण प्रोक्षणादिकं कृत्वा आरार्त्तिकं दद्यात् । आरार्त्तिकभाजनं 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य, 'नमः' इत्यभ्यर्च्य, 'यम्' इति वायुबीजेन द्वादशवारजप्तेन संशोष्य, वामहस्ततले दक्ष-हस्तपृष्ठं निवेश्य, 'रम्' इति बीजेन संदह्य, वामहस्तपृष्ठे दक्ष-हस्ततलं निवेश्य, 'वम्' इति षोडशवारजप्तेन धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, मूलेनाऽष्टशोऽभिमन्त्र्य, 'जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा' इति घण्टां सम्पूज्य, वामतर्जन्या संस्पृश्य, मूलं पठन् ।

'ॐ कर्पूरवर्त्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं च यत् ।
आरार्त्तिकमिदं दिव्यं गृहाण जगदीश्वरि ॥'

बलिदान करने के अनन्तर देवी की आरती करे। किसी स्वर्णादि निर्मित पात्र में गेहूँ के आटे की लोई में कपूर की बनी हुई इग्यारह बत्ती जला कर धूपदान-विधि में कही गयी रीति के अनुसार उस पात्र एवं वर्त्तिका का प्रोक्षण कर आरती करे। आरती के पात्र को 'फट्' इस मन्त्र से प्रोक्षित करे। 'नमः' इस मन्त्र को पढ़ कर, उसका पूजन करे। 'यम्' इस वायु बीज का बारह बार जप कर उसे शोषण करे। पुनः बाँयें हाथ के तलवे पर दाहिने हाथ का पृष्ठ तल रख कर 'रम्' इस अग्नि बीज से उसके दोषों को जलावे तथा बाँयें हाथ के पीठ पर दाहिने हाथ का तलवा रखकर 'वम्' इस अमृत बीज को सोलह बार जप, धेनु मुद्रा से उसे अमृतीकरण कर मूल मन्त्र से आठ बार पात्र को अभिमन्त्रित करे। 'जय ध्वनि मन्त्रमातः' पढ़ कर घण्टा का पूजन कर बाँयें हाथ की तर्जनी अंगुलि से उसका स्पर्श कर मूल मन्त्र पढ़ते हुए 'ॐ कर्पूरवर्त्तिसंयुक्तं' से 'जगदीश्वरि' पर्यन्त मन्त्र तथा पुनः

मूलं च पठन् 'इदमारार्त्तिकं साङ्गायै सायुधायै सबलवाहनायै सपरिवारायै सावरणायै श्रीदक्षिणकालिकां पूजयामि नमः' इति पठन् जलं दत्वा, नेत्रप्रदेशे दशधा भ्रामयेत् ।

पुष्पाञ्जलिः

ततः पुष्पाञ्जलित्रयेण 'सायुध-सवाहन-सपरिवार-महाकालसहित-श्रीदक्षिणकालिकां पूजयामि नमः' इति त्रिः सम्पूज्य, त्रिस्तर्पयेत् । ततो योनिमुद्रादिकं पूर्ववद् दर्शयेत् । ततश्छत्रचामरे दर्शयित्वा, पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा श्लोकचतुष्टयं पठेत् । श्लोको यथा—

'बुद्धिः शरासने क्लृप्ता वर्णनं मङ्गलानि च ।
मनोवृत्तिर्विचित्रा ते नृत्यरूपेण कल्पिता ॥ १ ॥
ध्वनयो गीतिरूपेण शब्दवाद्यप्रभेदतः ।
छत्राणि तव पद्मानि कल्पितानि मया प्रभो ! ॥ २ ॥
सुषुम्नाध्वजरूपेण प्राणाद्यावाशरात्मना ।
अहङ्कारो गजत्वेन वेगः क्लृप्तो रथात्मना ॥ ३ ॥

मूल मन्त्र पूर्वक 'इदमारार्त्तिकं' से 'कालिकां पूजयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र बोल कर जल छिड़क कर नेत्र-स्थान में दश बार आरती को घुमावे ।

पुनः तीन अञ्जलि पुष्प के द्वारा 'सायुध-सवाहन' से 'पूजयामि नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर भगवती का तीन बार पूजन और तीन बार उनका तर्पण करे । तथा पूर्ववत् योनिमुद्रा प्रदर्शित करे । फिर छत्र लगावे एवं चमर डुलावे । पुष्पाञ्जलि लेकर 'बुद्धिः शरासने' से

इन्द्रियाण्यश्वरूपाणि शब्दादीन् रथवर्त्मना ।
मनः प्रग्रहरूपेण बुद्धिः सारथिरूपतः ।
सर्वमन्यत्तवाक्लृप्तं तवोपकरणात्मना' ॥ ४ ॥
इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात्, प्रार्थयेत् ।

इति श्रीमद्दक्षिणकाल्याः सपर्याविधिः सम्पूर्णः ।

नित्यहोमविधिः

ततो नित्यहोमं कुर्यात् । तद्यथा– स्थण्डिले कुण्डे वा मूलेन वीक्ष्य, अस्त्रेण प्रोक्षणताडने कृत्वा, कुशैराच्छाद्य, व्याहृतित्रय-मुच्चार्य, वह्निमानीय, तिस्रो रेखाः संलिख्य, अस्त्रमन्त्रेण नैर्ऋत्ये क्रव्यादांशं परित्यज्य, मूलेनाऽभिमन्त्र्य, 'वम्' इति धेनुमुद्रयाऽ-मृतीकृत्याऽस्त्रेण संरक्ष्य, 'हूम्' इत्यवगुण्ठ्य, परितो भ्रमयन् त्रिः प्रणवं पठन् शय्यागताऽमृतुस्नातां नीलेन्दीवरधारिणीं देवेन

'तवोपकरणात्मना' पर्यन्त चार श्लोक पढ़ कर देवी को पुष्पाञ्जलि देकर प्रार्थना करे ।

इस प्रकार 'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्या सहित काली-रहस्य में
दक्षिणकाली-सपर्य्याविधि समाप्त ।

महाकाली की पूजा कर लेने के पश्चात् नित्य होम करना चाहिए । उसकी विधि इस प्रकार है– स्थण्डिल में अथवा कुण्ड में मूल मन्त्र से अवलोकन एवं अस्त्र मन्त्र से प्रोक्षण तथा ताडन करे । उस पर कुशा बिछावे, तीन बार (व्याहृति ॐ भूर्भुवः स्वः) मन्त्र का उच्चारण कर आग मँगा लेवे । वेदी अथवा कुण्ड में कुशा के द्वारा तीन रेखा लिख कर अस्त्र मन्त्र से नैर्ऋत्य कोण में क्रव्यादों के लिए कुछ अंश छोड़कर मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करे । पुनः 'वम्' इस मन्त्र को पढ़कर धेनु मुद्रा से उसका अमृतीकरण कर अस्त्र मुद्रा से कुण्ड अथवा स्थण्डिल की रक्षा करते हुए 'हूम्' इस मन्त्र से

भुज्यमानां वागीश्वरीं कुण्डे ध्यात्वा, तद्योनिमण्डले ईशरेतो धिया वह्निं 'हूं बह्निचैतन्याय नमः' इति पठन् मूलं च पठन् स्थापयेत् ।

ततो वह्निं पुष्पाऽक्षतादिना सम्पूज्य, तत्र इष्टदेवता-मावाह्य, सम्पूज्य, घृतादिभिर्व्यस्त-समस्ताभिर्महाव्याहृतिभि-राहुतिचतुष्टयं दत्त्वा, स्वकल्पोक्तकरवीरपुष्पैर्घृतादिना वा पञ्चविंशतिसङ्ख्यया स्वाहान्तं मूलमन्त्रमुच्चार्य, तदन्ते चतुर्थ्यन्तं देवताभिधानं स्वाहान्तमुच्चार्य्य जुहुयात् ।

पुनर्व्याहृतिभिर्हुत्वा मूर्त्तौ देवीं नियोज्य, संहारमुद्रया वह्निं विसृज्य, देव्यै आचमनादिकं दद्यात् । चामरादिकं

चारों ओर अग्नि को घुमाकर तीन बार प्रणव 'ॐ' को पढ़कर शय्या पर ऋतु-स्नान के अनन्तर सोयी हुई नील कमल के समान वस्त्र धारण कर शङ्कर के द्वारा रति में लिप्त श्री वागीश्वरी का कुण्ड में ध्यान कर, उसके योनि-मण्डल में ईश्वर के वीर्यभूत उस अग्नि को 'हूं वह्निचैतन्याय नमः' इस मन्त्र से तथा मूल मन्त्र से कुण्ड में स्थापित करे।

पुनः पुष्प, अक्षत आदि से अग्नि का पूजन कर, इसमें इष्ट देवता का आवाहन एवं पूजन करे। तदनन्तर घृतादि द्रव्यों की आहुति एक-एक अलग-अलग महाव्याहृतियों को पढ़कर तथा समस्त को एक ही साथ पढ़ कर चार आहुति प्रदान करे। अथवा स्वकल्पोक्त शाखा के अनुसार करवीर (कनैल) के पुष्पों से अथवा घृत से पचीस आहुति प्रदान करे। मूल मन्त्र के अन्त में स्वाहा लगाकर आहुति देवे।

अन्त में, पुनः व्याहृतियों को लगाकर हवन करे और मूर्त्ति में देवी को स्थापित कर संहार मुद्रा से अग्नि का विसर्जन करे एवं देवी

सम्प्रदर्श्य स्तुत्वा,

'यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणा पदे पदे ॥'
इत्यनेन त्रिः प्रदक्षिणं कुर्यात् ।

ततो दण्डवत् प्रणिपत्य, आचमनादिकं पुष्पाञ्जलिं च विधाय, ततो ब्रह्मार्पणाख्येन मनुना आत्मानमर्पयेत् । तद्यथा-अर्पणमन्त्रस्तु—'ॐ इतः पूर्वपापबुद्धि देवधर्माधिकारतो जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत् सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा मां मदीयं च सकलं देव्यै ते समर्पये ॐ तत्सत् ।

ततः प्राणायामादिकं विधाय, पुष्पाक्षतादिभिः सम्पूज्य क्षमापयेत् । क्षमापनमन्त्रो यथा—

'अज्ञानाद्विस्मृतेर्भ्रांत्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।
विपरीतं च तत्सर्वं क्षमस्व परमेश्वरि ! ॥ १ ॥

को आचमन आदि प्रदान करे। चँवर डुलावे, स्तुति करे और 'यानि कानि च पापानि' इस मन्त्र को पढ़कर प्रदक्षिणा करे । पश्चात् डण्डे के समान देवी के आगे पृथ्वी पर लोट कर आचमन तथा पुष्पांजलि देकर 'ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविः' आदि मन्त्र पढ़ कर अपने को भी श्री भगवती के लिए अर्पित करे । अर्पण का मन्त्र-'ॐ' इतः पूर्वपापबुद्धि' से 'समर्पये ॐ तत्सत्' पर्यन्त है।

उसके बाद प्राणायामादि क्रिया कर पुष्प, अक्षतादि से देवी की पूजा कर 'अज्ञानाद्' से 'प्रसीद परमेश्वरि !' पर्यन्त छह श्लोकों

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं सुरेश्वरि ! ।
सम्पूजिता मया देवि ! तस्मात्त्वं वरदा भव ॥ २ ॥
आवाहनं च पूजां च त्वन्माहात्म्यं जपं तथा ।
विसर्जनं न जानामि कालिके त्वं क्षमस्व मे ॥ ३ ॥
यदक्षरं पदभ्रष्टं स्वरव्यञ्जनवर्जितम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ४ ॥
यस्याः स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ५ ॥
कामेश्वरि जगन्मातः ! सच्चिदानन्दविग्रहे ।
गृहाणार्चामिमां सर्वां प्रसीद परमेश्वरि !' ॥ ६ ॥

इत्येतैः पुष्पाञ्जलिना क्षमापयेत् । ततो योनिमुद्रां बद्ध्वा, प्रणम्य,

'ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि ! ।
पूजाराधनकाले च पुनरागमनाय च ॥'

इति, मूलमन्त्रं पठन्, संहारमुद्रया देवीं विसृज्य स्वहृदये स्थापयेत् ।

को पढ़कर अपने अपराधों को पुष्पांजलि प्रदान करते हुए क्षमा करावे। और योनि मुद्रा बाँध कर भगवती को प्रणाम करे। 'ॐ गच्छ गच्छ' से लेकर 'पुनरागमनाय च' पर्यन्त श्लोक तथा मूलमन्त्र पढ़ते हुए संहार मुद्रा से देवी का विसर्जन कर, उन्हें अपने हृदय में स्थापित करे।

तत ऐशान्यां दिशि 'ह्रीं चण्डेश्वर्यै नमः' इति चण्डेश्वरीं सम्पूज्य,

'चण्डेश्वरि महादेवि निर्माल्यैश्चन्दनादिभिः ।
लेह्य-चोष्यान्नपानादि - निर्माल्यस्त्रग्विलेपनैः ।
निर्माल्यभोजनं तुभ्यं ददामि श्रीशिवाज्ञया ॥'
इति मन्त्रेण निर्माल्यं दद्यात् ।

ततस्तत्रैवोच्छिष्टचाण्डालिनीं सम्पूज्य, तदुच्छिष्टनैवेद्यासवमुच्छिष्टचाण्डाल्यै दद्यात् । ततो ब्राह्मणान् कुमारींश्च सम्भोज्य, स्वयं प्रसादं भुञ्जीत ।

पुरश्चरणनियमः

पुरश्चरणे स्वयं विशेषः । लक्षसंख्याकजपः तद्दशांशः पूर्वोक्तद्रव्यैः पुरश्चरणपद्धत्युक्तक्रमेण पूर्वोक्तविधिना होमः कर्त्तव्यः । तद्दशांशतः कर्पूरमिश्रिततोयैस्तीर्थतोयैर्मधुना वा

तदनन्तर ईशान कोण में 'ह्रीं चण्डेश्वर्यै नमः' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर चण्डेश्वरी का पूजन करे । पुनः 'चण्डेश्वरि महादेवि' से श्रीशिवाज्ञया' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर भगवती का निर्माल्य चण्डेश्वरी को समर्पित करे । तत्पश्चात् उसी स्थान पर उच्छिष्ट चाण्डालिनी का पूजन कर देवी के उच्छिष्ट नैवेद्य तथा आसव को उच्छिष्ट-चाण्डालिनी के लिए प्रदान करे । उसके बाद ब्राह्मण एवं कुमारियों को भोजन करा कर स्वयं प्रसाद भक्षण करे ।

पुनश्चरण में यह विशेषता है कि, साधक देवी के मन्त्र का एक लाख जप, पूर्वोक्त द्रव्यों से पुरश्चरण-पद्धति में पूर्वोक्त कहे गये विधि के अनुसार होम करे। और उस हवन का दशांश कर्पूर

मूलमन्त्रमुच्चार्य्य, 'दक्षिणकालीं तर्पयामि स्वाहा' एतदुच्चार्य किञ्चित्पात्रे देवतां सम्पूज्य तर्पयेत् ।

पुनः प्राणायामादि विधाय विसर्जयेत् ।

तद्दशांशतो मार्जयेत् । तद्यथा—आत्मानन्ददेवताबुद्ध्या ध्यात्वा, सम्पूज्य मूलविद्यां समुच्चार्य, तदन्ते देवताभिधां द्वितीयां तामुच्चार्य, तदन्ते 'अभिषिञ्चामि नमः' इत्यात्मानमभिषेचयेत् । तद्दशांशब्राणभोजनम् । तदन्ते महतीं पूजां च कुर्यात् ।

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते काली-रहस्ये दक्षिणकाली-सपर्य्यापद्धतिः सम्पूर्णा ।

मिश्रित जल से, तीर्थ के जल से अथवा मधु से मूल मन्त्र सहित 'दक्षिणकाली तर्पयामि स्वाहा' इस मन्त्र का उच्चारण कर किसी पात्र में देवी का पूजन कर तर्पण करे। तदनन्तर प्राणायामादि कर विसर्जन करे। विसर्जन के उपरान्त तर्पण की संख्या के दशांश संख्या से मार्जन करे। उसकी विधि इस प्रकार है—अपने में स्वयं देवता की बुद्धि रख, मानस पूजा करे। पुनः मूल विद्या का उच्चारण कर देवता के नाम के अन्त में द्वितीया विभक्ति लगाकर 'अभिषिञ्चामि नमः' (ॐ क्लीं महाकालीं अभिषिञ्चामि नमः) मन्त्र पढ़ कर स्वयं अपने को अभिषिक्त करे। तद्दशांश ब्राह्मण भोजन करा कर पुनः विशिष्ट उपचारों से महाकाली का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार आचार्य पण्डित श्री शिवदत्तमिश्र शास्त्रीकृत 'शिवदत्ती' हिन्दीटीका सहित काली-रहस्य में दक्षिणकाली-सपर्य्यापद्धति समाप्त ।

कालिकोपनिषत्

अथ हचैनां ब्रह्मरन्ध्रे ब्रह्मस्वरूपिणीमाप्नोति सुभगां कामरेफेन्दिरां समष्टिरूपिणीमादौ तदन्वकर्तुर्बीजद्वयकूर्चवीजं तद्धोमषष्ठस्वरबिन्दु-मेलनं रूपं तदनुभुवना द्वयभूवना तु व्योमज्वलनेन्दिराशून्यमेलनरूपा दक्षिणे कालिके वेत्यभिमुखं गता तदनुबीजसप्तकमुच्चार्य बृहद्भानु-जायामुच्चरेत् ।

अयं सर्वमन्त्रोत्तमोत्तम इमं सकृज्जपन् स तु विश्वेश्वरः स तु नारीश्वरः स तु वेदेश्वरः स सर्वगुरुः सर्वनमस्यः सर्वेषु वेदेष्वधिश्रितो भवति स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति सर्वेषु यज्ञेषु दीक्षितो भवति स स्वयं सदाशिवः त्रिकोणं त्रिकोणं त्रिकोणं पुनश्चैव त्रिकोणं त्रिकोणं ततो वसुदलं सार्द्धचन्द्रकेसरं युग्मशो विलिख्य सम्भृतं भूपुरैकेन युतां सर्वज्ञेनाभ्यर्च्य तस्मिन् देवीदले रेखायां विन्यस्य ध्येया, अभिनव-जलदवदना घनस्तनी कुटिलदंष्ट्रा शवासना वराभय-खड्ग-मुण्ड मण्डितहस्ता कालिका ध्येया, काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी विप्रचित्तेति षट्कोणगाः । उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता नीला घना बलाका मात्रा मुद्रा मितेति नवकोणगाः, इत्थं पञ्चदश-कोणगाः ।

ब्राह्मी नारायणी माहेश्वरी चामुण्डा कौमारी अपराजिता वाराही नारसिंहीत्यष्टपत्रगाः । चतुष्कोणगाश्चत्वारो देवाः माधव-रुद्र-

विनायक-सौराः । चतुर्दिक्षु इन्द्र-यम-वरुण-कुबेराः । देवीं सर्वाङ्गेनादौ सम्पूज्य;भगोदकेन तर्पणं पञ्चमकारेण पूजनमेतस्याः सपर्यायाः किमधिकं नो शक्यं ब्रह्मादिपदं हेयं हेलया प्राप्नोति एतस्या एक-द्वि-त्रिक्रमेण मनवो भवन्ति नारिमित्रादिलक्षणमत्र वर्तते अमुष्यमन्त्रपाठकस्य गतिरस्ति नान्यस्येह गतिरस्ति एतस्यास्तारा मनोर्दुर्गा मनोर्वा सिद्धिः इदानीं तु सर्वाः स्वप्नभूता असितैव जागर्ति इमामसिताज्ञामुपनिषदं यो वाऽधीते सोऽपुत्रः पुत्रीभवति निर्द्धनो धनायति धर्माऽर्थ-काम-मोक्षाणां पात्रीयत्यन्यस्य वरदः दृष्ट्वा जगन्मोहयति क्रोधस्तं जहाति गङ्गादितीर्थक्षेत्राणामग्निष्टोमादियज्ञानां फलभागीयति ।

इति काली-रहस्येऽथर्वणवेदे सौभाग्यकाण्डे
कालिकोपनिषत्समाप्ता ।

देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति-कथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणम् ॥१॥

विधेरज्ञानेन द्रविण-विरहेणाऽलसतया
विधेयाऽशक्यत्वात् तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२॥

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥

जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि! द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत् प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥

परित्यक्ता देवा विविधऽविधि-सेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता
निरालम्बो लम्बोदर जननि कं यामि शरणम् ॥५॥

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि-कनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥६॥

चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः।
कपाली-भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणि-ग्रहण-परिपाटी-फलमिदम् ॥ ७ ॥

न मोक्षस्याऽऽकांक्षा भव-विभव-वाञ्छाऽपि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि-सुखेच्छाऽपि न पुनः।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥ ८ ॥

नाऽऽराधिताऽसि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्ष-चिन्तन-परैर्न कृतं वचोभिः।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब ! परं तवैव ॥ ९ ॥

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥

जगदम्ब ! विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि।
अपराध-परम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि।
एवं ज्ञात्वा महादेवि ! यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥

इति काली-रहस्ये देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रम्।

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामे गौरी।
मैया जय मंगलकरणी, मैया जय आनन्दकरणी ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवरी ॥ १ ॥ जय अम्बे०
मांग सिन्दूर विराजत, टीको मृदमद को। मैया टीको०
उज्ज्वल से दोऊ नैना, चन्द्रवदन नीको ॥ २ ॥ जय अम्बे०
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजै। मैया रक्ता०
रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै ॥ ३ ॥ जय अम्बे०
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी। मैया खड्ग०
सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुःख हारी ॥ ४ ॥ जय अम्बे०
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। मैया नासा०
कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योती ॥ ५ ॥ जय अम्बे०
शुम्भ-निशुम्भ विदारे महिषासुर घाती। मैया महिषा०
धूम्र विलोचन नैना, निशिदिन मदमाती ॥ ६ ॥ जय अम्बे०
चण्ड-मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे। मैया शोणित०
मधु कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे ॥ ७ ॥ जय अम्बे०
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। मैया तुम०
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी ॥ ८ ॥ जय अम्बे०
चौंसठ योगिनी गावत, नृत्य करत भैरों। मैया नृत्य०
बाजत ताल मृदंगा, और बाजे डमरू ॥ ९ ॥ जय अम्बे०
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। मैया तुम०
भक्तन की दुःख हरता, सुख-सम्पति करता ॥१०॥ जय अम्बे०
भुजा चार अति शोभित वरदु अभयधारी। मैया वर०
मन वांछित फल पावत, सेवत नर नारी ॥११॥ जय अम्बे०
कंचन थाल विराजत, अगर कपुर बाती। मैया अगर०
श्री मालकेतु में राजत, कोटिरत्न ज्योति ॥१२॥ जय अम्बे०
ये अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै। मैया जो०
कहत शिवानन्द स्वामी, सुख-सम्पति पावै ॥१३॥ जय अम्बे०

ग्रन्थकारसंस्तवः

देवरिया-जनपदके ख्याते ग्रामे मझौलिकाऽभिख्ये।
उद्भटशूरा मल्ला यत्राऽऽसन् विश्वविख्याताः ॥ १ ॥
विद्या-सदाचारगुण-प्रसिद्धा लोकद्वयी साधनकर्मसिद्धाः।
यत्राऽभवँल्लोक - ललामभूता, विप्रा जगद्वन्दित-पादपद्माः ॥ २ ॥
पितामहोऽभून्मम लोकवित्तः, श्रीकान्तनामा-ऽऽगममर्म-विज्ञः।
तदात्मजौ द्वौ परमार्थनिष्ठौ, जातौ प्रतीक्ष्याऽर्चनरक्तचित्तौ ॥ ३ ॥
श्रीसन्तशरणनामा ज्यायानासीन्नितान्त-विख्यातः।
शास्त्राऽनुशीलनपरः शुभकर्मपरायणः सततम् ॥ ४ ॥
श्रीसत्यनारायणनामधेय आसीत्कनीयाञ्शुभभागधेयः।
द्वावप्यभूतां पितृभक्तिभाजौ, लोकोपकारे परमप्रवीणौ ॥ ५ ॥
श्रीसन्तशरणविदुषो द्वौ पुत्रौ भक्तिसम्पन्नौ।
श्रीलजगन्नाथ इति ज्यायानासीद् गुणाऽग्रणीर्धीमान् ॥ ६ ॥
तदनुजनुर्गुरुभक्तः शिवदत्तोऽहं समाख्या प्रथितः।
पित्रोः परिचरणपरः शास्त्राऽम्बुधिमज्जने रसिकः ॥ ७ ॥
वागीश्वरी नाम ममाऽऽद्यपत्नी,सावित्रिकाया प्रसवित्रिकाऽऽसीत्।
सा द्रौपदी नाम मदन्यपत्नी, पुष्पाप्रसूर्द्वे अपि मुक्तिभाजौ ॥ ८ ॥
पौरस्त्य-पाश्चात्त्य-विशिष्टविद्या कलाप्रवीणस्य विचक्षणस्य।
सत्यव्रतस्याऽस्ति कलत्ररत्नं सावित्रिका नाम मदीयकन्या ॥ ९ ॥
कनीयसी मे दुहिताऽस्ति पुष्पा, श्रीमद्-रमेशाख्यबुधस्य पत्नी।
उभे मदीये तनये स्वधर्मं, सम्पाद्य सौभाग्य-समन्विते स्तः ॥१०॥
आचार्योऽहं शब्दशास्त्रे तथैव, साहित्याऽब्धिर्ग्रन्थनिर्माणशीलः।
तन्त्रे, स्तोत्रे, व्याकृतौ धर्मशास्त्रे,सन्ति ग्रन्था निर्मिता मामकीनाः ॥११॥
अद्याऽवधि ग्रन्थशताऽधिकं मे प्रकाशितं भूरिपरिश्रमेण।
अशान्तयत्नेन कृतिं करोमि शास्त्रोक्तकृत्यं विदधामि नित्यम् ॥१२॥
स्वचित्त-शिष्टा-ऽऽस्तिक-तोषणाय निरन्तरं शास्त्रचयं समीक्ष्य।
मया प्रणीता विविधाः प्रबन्धाः संप्रार्थये तत्र सतां सुदृष्टिम् ॥१३॥

क्षमा-प्रार्थना

अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ! ॥ १ ॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ! ॥ २ ॥
यद्दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं तद्-गृहाणाऽनुकम्पया ॥ ३ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि !।
यत्पूजितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ४ ॥
अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत्।
यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ५ ॥
अज्ञानाद् विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ६ ॥
कामेश्वरि ! जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे।
गृहाण त्वं स्तुतिमिमां प्रसीद परमेश्वरि ! ॥ ७ ॥
गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च।
आगता सुख-सम्पत्तिः पुण्याच्च तव दर्शनात् ॥ ८ ॥
यदत्र पाठे जगदम्बिके मया, विसर्ग-बिन्द्वक्षर-हीनमीरितम्।
तदस्तु सम्पूर्णतमः प्रसादतः, सङ्कल्पसिद्धिश्च सदैव जायताम् ॥ ९ ॥
मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं, साम्प्रतं ते स्तवेऽस्मिन्।
तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे !, त्वत्प्रसादात् प्रसीद ॥१०॥
यस्याऽर्थं पठितं स्तोत्रं तवेदं शङ्करप्रिये !।
तस्य देहस्य गेहस्य शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥११॥

इति काली-रहस्ये क्षमा-प्रार्थना समाप्ता।

इति देवरिया - मण्डलान्तर्गत - 'मझौली राज्य' (सम्प्रति वाराणसी) वास्तव्येन पण्डितश्रीसन्तशरणमिश्रात्मज-**आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्त-मिश्रशास्त्रिणा** 'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्यया विभूष्य प्रणीतं सम्पादितं च काली-रहस्यम् समाप्तम्।

❀

आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्र शास्त्री द्वारा सम्पादित

हमारे नवीनतम प्रकाशन

वास्तुशान्तिपद्धतिः। 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित ३०-००

मूलशांतिपद्धतिः। 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित २०-००

चाणक्यनीतिदर्पणम्। 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित २०-००

रामरक्षास्तोत्र। 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या एवं रामकवच, रामहृदय, रामगीता, रामचन्द्राष्टक, रामचन्द्रस्तुति, रामप्रातःस्मरण तथा आरती सहित ४-००

कनकधारा-लक्ष्मीस्तवराजस्तोत्र। 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका तथा धनदालक्ष्मीस्तोत्र-सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्र, श्रीसूक्तादि विभूषित ५-००

उड्डीशतन्त्र। 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या एवं विशिष्ट भूमिका सहित २०-००

दत्तात्रेयतन्त्र। 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित २०-००

हनुमान-चालीसा। बजरंगबाण, आरती, रामस्तुति, रुद्राष्टक, हनुमदवडवानलस्तोत्र तथा सम्पुट-विधान सहित ५-००

दुर्गा-चालीसा। देवीसूक्त, सप्तश्लोकीदुर्गा, देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र एवं देवी-आरती सहित २-००

शिव-चालीसा। विश्वनाथाष्टक, शिवप्रातःस्मरण, रुद्राष्टक, भोलेनाथस्तुति, आरती तथा क्षमा-प्रार्थना आदि सहित २-००

पुरुषोत्तममासमाहात्म्य। 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित ४५-००

तारा-रहस्यम्। 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्योपेतम् ३०-००

Rs. 25.00

Also can be had from

Chowkhamba Sanskrit Series Office

K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Post Box 1008, Varanasi-221 001 (U.P) India
Phone : Office : (0542) 2333458, Res. : (0542) 2334032 & 2335020
Fax : (0542) 2333458, e-mail : cssoffice@satyam.net.in
Web site : www.chowkhambaseries.com

Price : Rs. 75.00

ISBN : 81-218-0193-1

designed by Shreyashi GRAPHICS, mo. 9839814784

SVB
S.No
Subj
Sub.